सम्मेलन आकर-ग्रंथमाला : पुष्प—४

गोविन्ददास कृत

दूषणोल्लास

सम्पादक
बेनीबहादुर सिंह

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

प्रकाशकीय

हिन्दी के प्राचीन ग्रंथों की प्रकाशन-योजना

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा विगत कई वर्षों से प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन की एक योजना कार्यान्वित की गई है। इस दिशा में अब तक जो प्रयास हुआ है उसके फलस्वरूप सम्मेलन अब तक देश के विभिन्न अंचलों से लगभग आठ हजार ग्रन्थों का संग्रह कर चुका हैं।

संग्रह में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, मैथिली और गुरुमुखी आदि अनेक भाषाओं के ग्रंथ सुरक्षित हैं। लिपि, प्राचीनता और विषय की दृष्टि से इस संग्रह का अपना विशेष महत्त्व है। उसमें लगभग १३ वीं तथा १४ वीं शताब्दी तक के प्राचीन हस्तलेख सुरक्षित हैं, जो कि लिपि-विकास की क्रमिक परम्परा का अध्ययन करने में विशेष रूप से सहायक सिद्ध हो सकते हैं। विषय की दृष्टि से संग्रह का अपना अलग महत्त्व है। धर्म, दर्शन, काव्यशास्त्र, इतिहास और पुराण आदि विषयों के अतिरिक्त आयुर्वेद एवं ज्योतिष जैसे वैज्ञानिक विषयों की कतिपय ऐसी दुर्लभ एवं अज्ञात कृतियाँ भी इस संग्रह में हैं जो अभी तक प्रकाश में नहीं आयी हैं।

महत्त्वपूर्ण ग्रंथों के प्रकाशन की एक योजना के अन्तर्गत हिन्दी के आठ ग्रंथों के सम्पादन और प्रकाशन का कार्य हाथ में लिया गया है। इस कार्य के लिए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से आंशिक अनुदान प्राप्त हुआ है। हम आशा करते हैं कि इस दुर्लभ संग्रह के उपयोगी ग्रन्थों के मुद्रण, प्रकाशन में केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों के शिक्षा विभागों का सहयोग, समर्थन और वित्तीय साहाय्य निर्बाध रूप से प्राप्त होता रहेगा। प्राच्य

विद्या के लुप्त अंगों को प्रकाश में ले आने में सार्वजनिक धन का उपयोग वास्तव में श्रेयस्कर है।

अब तक प्रागनि कवि कृत 'भ्रमरगीत', बालचन्द मुनि कृत 'बालचन्द-बत्तीसी' और लोकमणि मिश्र कृत 'नवरसरंग' तीन ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। गोविन्ददास कृत 'दूषणोल्लास" नामक इस चौथे ग्रंथ को हिन्दी जगत् के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमें प्रसन्नता हो रही है। आशा है कि हम इस योजना के शेष चारों ग्रंथों को भी यथाशीघ्र प्रकाशित कर सकेंगे।

'दूषणोल्लास' का यह प्रकाशित संस्करण एक हस्तलिखित प्रति के आधार पर सम्पादित हुआ है। यह हस्तलेख सम्मेलन संग्रह में सुरक्षित है। इस ग्रंथ को हाथ में लेने से पूर्व हिन्दी के सभी गणमान्य विद्वानों, समस्त हस्तलेख संग्रहों और इस विषय की प्रकाशित-अप्रकाशित सामग्री से यथा-सम्भव सूचनाएँ एकत्र करने की पूरी चेष्टा की गयी, किन्तु ग्रंथकार गोविन्द दास और उनकी प्रस्तुत कृति के सम्बन्ध में कहीं से भी सूचना प्राप्त न हो सकी। अतः विवश होकर हमें एक हस्तलेख के आधार पर इस ग्रंथ का सम्पादन कराना पड़ा।

सम्मेलन के हिन्दी संग्रहालय में सुरक्षित 'दूषणोल्लास' की यह हस्त-लिखित प्रति हमें १९५० ई० में बूंदी (राजस्थान) के सम्मान्य नागरिक एवं साहित्यप्रेमी श्री राव मुकुन्दसिंह जी से भेंटस्वरूप प्राप्त हुई थी। राव मुकुन्द सिंह जी बूंदी राज्य के प्रसिद्ध राजकवि स्व० राव गुलाबसिंह जी के वंशज हैं। उनकी कई अप्रकाशित कृतियों के मूल हस्तलेख सम्मेलन संग्रह में सुरक्षित हैं। राव मुकुन्दसिंह जी ने अपने संग्रह के महत्त्वपूर्ण एवं बहुमूल्य ग्रंथों को सम्मेलन के लिए भेंटस्वरूप प्रदान कर और स्थानीय दूसरे सज्जनों को भी ऐसा दान करने की प्रेरणा देकर जिस उदारता एवं सहयोग का परिचय दिया है उसके लिए उनके प्रति सम्मेलन सदा आभारी रहेगा। मुझे आशा है कि भविष्य में भी सम्मेलन को उनका बराबर सहयोग प्राप्त होता रहेगा। इस कृति के प्रकाशन का बहुत बड़ा श्रेय उन्हीं को है।

इस कृति का सम्पादन श्री बेनीबहादुर सिंह एम० ए० ने प्रयाग विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर श्री उमाशंकर शुक्ल के निर्देशन में किया है। शुक्ल जी के निदेशों से ही यह सम्भव हो सका है कि एक प्रति के आधार पर पाठ-सम्पादन को यथासम्भव वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया जा सका। इस कार्य में शुक्ल जी से सम्मेलन को जो सहयोग प्राप्त होता रहा है उसके लिए उनके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ। ग्रंथ के संपादक श्री बेनी बहादुर सिंह भी हमारे बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने परिश्रमपूर्वक यथाशीघ्र इस कार्य को सम्पन्न किया।

इस सन्दर्भ में यह निवेदन करना अनुचित न होगा कि साहित्य की इस अज्ञात एवं बिखरी हुई ग्रंथनिधि को एकत्र करने और उसे प्रकाश में लाने के लिए सम्मेलन ने जो योजना बनायी उसकी सफलता उन उदारचेता ग्रंथ-स्वामियों एवं प्राचीन साहित्य के प्रेमियों पर निर्भर है, जिनके पास इस प्रकार के संग्रह सुरक्षित हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि अधिकतर घरों में व्यर्थ पड़ी इन महत्त्वपूर्ण एवं दुर्लभ कृतियों के प्रकाशन से साहित्य की समृद्धि और तिहास के निर्माण में बड़ा योगदान हो सकता है।

मोहनलाल भट्ट
सचिव
प्रथम शासन निकाय
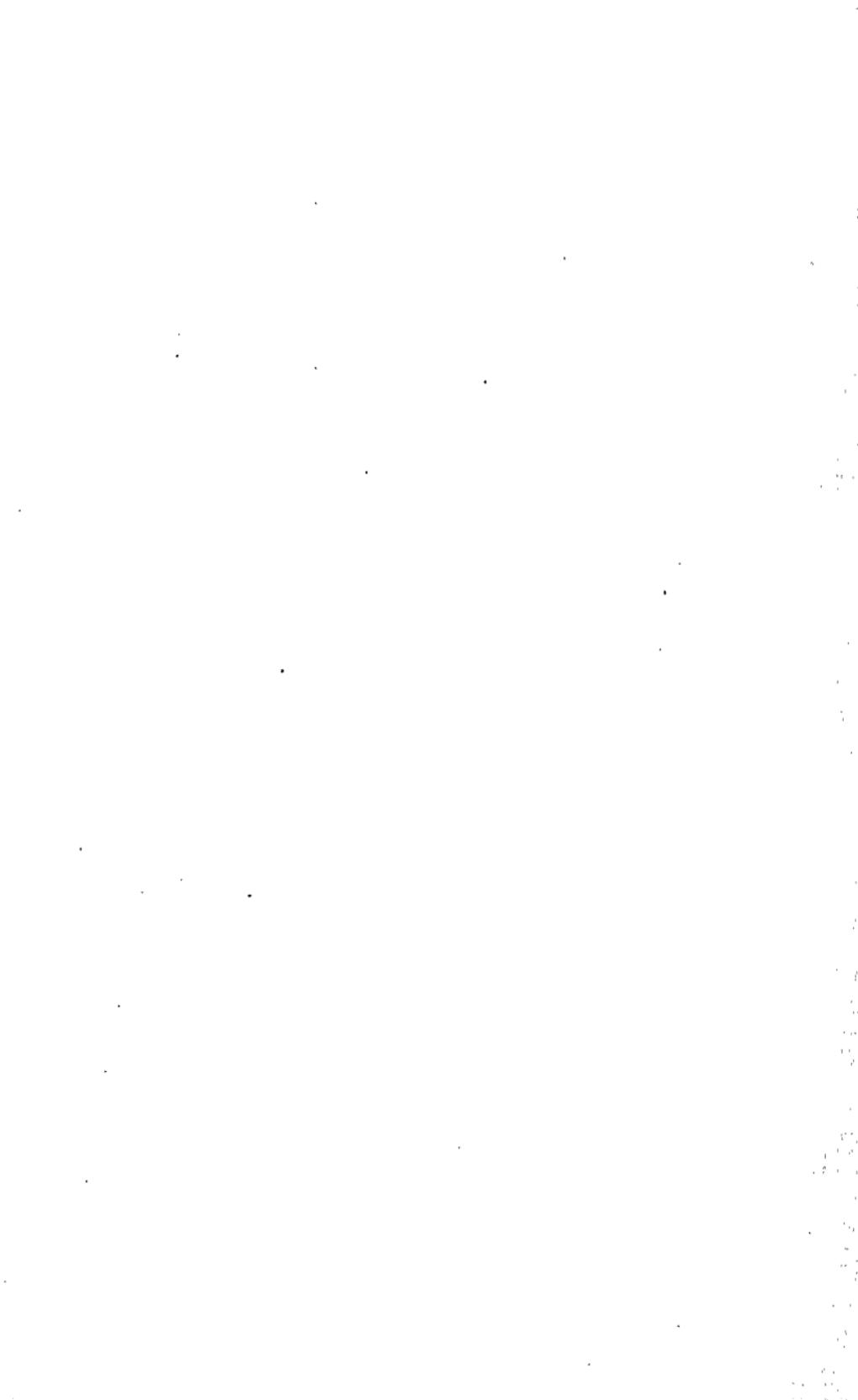
दो शब्द

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा संचालित प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों के संपादन की योजना के अन्तर्गत कुछ महत्वपूर्ण एवं उत्कृष्ट लुप्तप्राय ग्रंथों का संपादन हो रहा है।

उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत संपादित यह "दूषणोल्लास" ग्रंथ है। इस ग्रंथ की केवल एक ही प्रति सम्मेलन के संग्रहालय में है। खोज विवरणों में इस ग्रंथ की अन्य किसी भी प्रति के उल्लेख के अभाव में संपादन का कार्य निःसंदेह मेरे लिए कठिन कार्य रहा है। किन्तु यह कार्य प्रयाग विश्वविद्यालय के प्राध्यापक पं० उमाशंकर जी शुक्ल का निर्देशन प्राप्त होने से साध्य बन गया है। जिन अन्य सहयोगियों, मित्रों से समय-समय पर यथास्थल मुझे सुझाव, सूचनाएँ और तथ्य प्राप्त होते रहे हैं उनके प्रति हृदय से आभारी हूँ।

सम्पादक

विषय-सूची

भूमिका

कवि गोविन्ददास : जीवन-वृत्त और कृतित्व

(क) जीवन-वृत्त

हिन्दी के अनेक अज्ञात एवं लुप्तप्राय कवियों और कृतियों में कवि गोविन्ददास और उनकी कृति दूषणोल्लास भी है। रीतिकाल के इस प्रमुख कवि ने अपनी काव्य-प्रतिभा द्वारा रीतिकालीन साहित्य को समृद्ध बनाने में महान् योगदान किया था, किन्तु कालान्तर में इनका कृतित्व दृष्टिपथ से तिरोहित-सा हो गया था। यही कारण है कि आज इनके नाम के सम्बन्ध में भी मतभेद है। कहीं इनका नाम 'रसिक गोविन्द', मिलता है, तो कहीं 'अलि-रसिक गोविन्द' कहीं 'रसिक गुविंद' मिलता है तो कहीं 'अलि रसिक गुविंद'। प्रस्तुत ग्रंथ की हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका में इनका नाम 'गोविन्ददास' दिया गया है—**'अथ श्री गोविन्ददासकृत दूसनोल्लास लिख्यते'**। सम्भवतः इनका वास्तविक नाम गोविन्ददास ही था, किन्तु रचनाओं में वे अपने को 'रसिक गोविन्द' या 'रसिक गुविंद' लिखते थे; इसलिए यही नाम अधिकांश इतिहास-ग्रन्थों में अधिक प्रचलित हुआ।

गोविन्ददास का कविता-काल आचार्य शुक्ल ने सं० १८५० से १८९० तक, अर्थात् विक्रम की उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से लेकर अन्त तक स्थिर किया है[1]। इनके जीवन-वृत्त के सम्बन्ध में प्रामाणिक सामग्री का अभाव है—जो कुछ भी मिलती है, वह मात्र अंतरंग साक्ष्य के आधार पर; अतः उसकी प्रामाणिकता असंदिग्ध है। कवि का एक बहुत बड़ा ग्रन्थ है 'रसिक गुविन्दानन्दघन'। स्वयं कवि द्वारा लिखित इसकी एक पाण्डुलिपि काशी

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल) पृष्ठ २९२।

नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में सुरक्षित थी। इस हस्तलिखित प्रति का परिचय 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों के पन्द्रहवें त्रैवार्षिक विवरण'[1] में प्रकाशित हुआ था। इस परिचय के अनुसार कवि के इस हस्तलेख में पृष्ठ संख्या १५८-१५९ तक कवि ने अपना परिचय दिया तथा पृष्ठ संख्या १-२ तक अपने गुरु का परिचय दिया है, उसी के आधार पर कवि का जीवन-वृत्त इस प्रकार है—

"गोविन्ददास या रसिक गोविन्द जयपुर के निवासी और नटाणी जाति के थे। दुःख पड़ने पर वृन्दावन भाग आए थे और निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित होकर महात्मा हरिव्यास की गद्दी के शिष्य बन कर भगवद् भजन में समय व्यतीत करते रहे। हरिव्यासजी की शिष्य-परम्परा में सर्वेश्वर-शरणदेवजी बड़े भारी भक्त हुए हैं। रसिक गोविन्दजी उन्हीं के शिष्य थे। इनके पितामह का नाम जादोदास, पिता का शालिग्राम, चाचा का मोतीराम, बड़े भाई का बालमुकुन्द, भतीजे का नारायण और माता का नाम गुमाना था। इनके एक घनिष्ठ मित्र कृष्णदत्त पाण्डे का भी उल्लेख मिलता है—

जादोदास साह कौ सपूत पूत **सालिग्राम,**
सुत **नटानी बालमुकुन्द** कहायो है।
जैंपुर बसैया विलसैया कोक काव्यनु को,
ताको लघु भैया श्री **गोविन्द** 'कवि गायो है।
सम्पत्ति बिनासी तब चित्त में उदासी भई,
सुमति प्रकासी याते व्रज को सिधायो है।
अब **हरिव्यास** कृपा बिन ही विलास रास,
सब सुख रासि वास **वृन्दावन** पायो है॥

---

१. 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का पंद्रहवाँ त्रैवार्षिक विवरण'—(सन् १९३२-३४ ई०) सम्पादक—स्व० डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल—(प्रथम संस्करण)—पृ० ३०७-३१०।
(काशी नागरी प्रचारिणी सभा-प्रकाशन)

दोहा

माँत **गुमाना गुविंद** की पिता जू **सालिगराम**।
श्री **सरबेश्वर सरण** गुरु, बास **विंदावन** धाम ॥

× × ×

रच्यो **गुविन्दानंदघन** श्री **नारायण** हित्त।
कृष्णदत्त पाण्डे तिन्हें दियो जानि निज मित्त ॥

अपने जीवन के दुर्दिन का वर्णन करते हुए एक जगह पर इन्होंने लिखा है—

निन्दत है सो तो बन्दत है प्रतिकूल करै अनुकूल की बातें।
जाति जुहारि तौ हौ घर जाय सू आइकै पाँय परैं तजि घातें।
दु:ख अनेक हुते पहिले अब है अति आनंद गोविंद यातें।
रीति सबै सुधरी है हमारी पियारी बिहारी तिहारी कृपा ते ॥

कवि ने अपने गुरु का परिचय इस प्रकार दिया है—

परम उदार दु:ख दंद के हरन हार,
सब गुन सार सदा राजत अभेव हैं।
पूरन प्रकास वेद विद्या के निवास कवि
गोविन्द कहत जासु जस कौ न छेव हैं।
रसिक अनन्य वर नागर चतुर चारु,
चरन कमल भव सागर के खेव हैं।
जीवन हमारी कुंज भौन अधिकारी ऐसे,
सर्वेश्वर सर्न सुखकारी गुरुदेव हैं।

गुरु-वंश का वर्णन—

जै जै जै श्री राधिका सर्वेश्वर श्री हंस।
सनकादिक नारद सदा निम्बादित्य प्रसंस ॥

गुरु-परम्परा

"श्री निवास विश्वेश्वर चारज के चरन अरु कमल शोभत हैं अभिराम। श्री परषोत्तमाचार्य श्री विलासाचारी पुन पूरे जन मन काम। श्री सरूप माधवेस दियँ देस देसन मैं कहूँ बलभद्र पद्म चारी जू मोद धाम। श्री स्यामा गोपाल कृपाचारी देव पुन भट्ट जू को नाम।

पद्मनाम यह और उपेन्द्र रामचन्द्र जान वामनाचार्य श्री कृष्ण चार जानियैं। पद्माकर भूरभट्ट गुरु वंदे भट्ट और माधव जू स्याम भट्ट गोपाल बलभद्र फेर मानियैं। श्री गोपीनाथ के सर्वेस कीने हैं पवित्र देस मांगल भट्ट काशमीर केसवं बखानियैं। श्री भट्ट हरि व्यासदेव जाने रसभेव वद्ध परस रामदेव हित सन्तन के सानियैं।

तिनके सिष्य भये हरिवंस। तिनके नारायन अवतंस। तिनके श्री गुविंद गुरु भये। श्री गोविन्द सरन तक रहे।

छप्पै—विकट भट बल्लभ भल भजन भलै भूमंडन।
कुटिल कुतर्की कपट दुष्ट करमठ दंडन।
सिंघनाथ करि विमुख वितराउ निभुंडनि खंडन।
दृढ़ हरि भक्ति कुठार विटप पाखण्ड विहंडन।
अविरुद्ध सुद्धमत प्रणत हित ध्वंस ध्वंत संघट निपट।
कर मंडत चंड अखंड निस मारतंड प्रभु नित प्रगट॥

तिनके सर्वेश्वर सिरमोर। तारे पतित अनेकनि ठोर।
बैष्णव रसिक गोविन्द कोक काव्य विलसइया।
सालिग्राम सुत जात नटनी बालमुकुन्द को भैया।
जैपुर जन्म जुगल सेवी नित्य बिहार गवैया।
श्री हरिव्यास प्रसाद पाय भो वृन्दाविपिन बसैया"[1]।

---

१. खोज में उपलब्ध हस्तलिखित 'हिन्दी ग्रंथों का पंद्रहवाँ वार्षिक विवरण' नागरी प्रचारिणी सभा से उद्धृत।

इतिहास के प्रायः सभी ग्रन्थों[1] में कवि के इसी जीवन-वृत्त की पुनरावृत्ति की गई है।

(ख) रचनाएँ

गोविन्ददास या रसिक गोविन्द की तीन कृतियों का उल्लेख खोज-विवरणों में मिलता है—(१) रसिक गोविन्दानन्दघन (२) अष्टदेश की भाषा (३) युगल रस माधुरी।[2] किन्तु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनकी ९ रचनाएँ बतायी हैं तथा और भी होने की सम्भावना का उल्लेख किया है।[3] ये ९ ग्रन्थ इस प्रकार हैं—

---

१. देखिए—

(क) 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—पृ० २९२-२९५।

(ख) 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' षष्ठ भाग, (रीतिकाल) सम्पादक—डा० नगेन्द्र। प्रथम संस्करण-सं० २०१५ वि०, पृ० ३७२-७४ (नागरी प्रचारिणी सभा-प्रकाशन)।

(ग) 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास'—आचार्य चतुरसेन। प्रथमावृत्ति—१९४६ ई०, पृ० ३२६-२७।

(घ) 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—डॉ० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' प्रथमावृत्ति—१९३१ ई०, पृ० ५०८।

(ङ) 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास'—डा० भगीरथ मिश्र। प्रथम आवृत्ति, सं० २००५ वि०, पृ० १७२।

(लखनऊ विश्वविद्यालय-प्रकाशन)।

२. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण'—(१९०६, १९०७, १९०८) की रिपोर्ट। आचार्य नलिनविलोचन शर्मा—बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्।

३. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

(१) रसिक गोविन्दानन्दघन।
(२) रामायण सूचनिका।
(३) लछिमन चंद्रिका।
(४) पिंगल।
(५) समय प्रबन्ध।
(६) कलिजुग रासो।
(७) रसिक गोविन्द।
(८) अष्टदेश भाषा।
(९) युगलरस माधुरी।

नीचे इन रचनाओं का परिचय खोज-विवरणों तथा आचार्य शुक्ल के आधार पर दिया जा रहा है।

(१) रसिक गोविन्दानन्दघन

इस ग्रंथ की एक हस्तलिखित प्रति—जो कवि का स्व-हस्तलेख था—नागरी प्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में थी। इसका विस्तृत परिचय वहीं से प्रकाशित 'खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों के पन्द्रहवें वार्षिक विवरण' में प्रकाशित हुआ था। डॉ० भगीरथ मिश्र ने भी इस प्रति को देखा था। और इसी के आधार पर ग्रंथ का परिचय अपने हिन्दी काव्यशास्त्र के इतिहास में दिया है।[१] डॉ० नगेन्द्र ने भी नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में इस प्रति की विद्यमानता स्वीकार की है, परन्तु प्रति उन्हें देखने को नहीं मिली। वैसे सुना जाता है कि जयपुर के पुस्तकालय में इसकी एक प्रति अब भी है, किन्तु वह भी उन्हें देखने को नहीं मिली। उन्होंने अपने हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास में स्पष्ट लिखा है कि —"इस ग्रंथ की एक प्रति अब से कुछ पहले नागरी प्रचा-

---

१. 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास'—डा० भगीरथ मिश्र। प्रथमावृत्ति—सं० २००५ वि०, पृ० १७२।

रिणी सभा, काशी के आर्य पुस्तकालय में विद्यमान थी, पर अब उसका क्या हुआ कुछ ज्ञात नहीं। वैसे, ऐसा सुना जाता है कि जयपुर के पुस्तकालय में इसकी एक प्रति अब भी है, पर हमारे देखने में नहीं आई।"[१] इस स्थिति में केवल नागरी प्रचारिणी सभा के उपर्युक्त खोज-विवरण और आचार्य शुक्ल के आधार पर ही इस ग्रंथ के बारे में कुछ कहा जा सकता है। उपर्युक्त खोज-विवरण में इस ग्रंथ की हस्तलिखित प्रति का परिचय इस प्रकार दिया गया है——

गोविन्दानन्दघन

रचयिता——रसिक गोविन्द (वृन्दावन) परिमाण (अनुष्टुप) ४८००, रचनाकाल सं० १८५८=१८०१ ई०, लिपिकाल सं० १८७०=१८१३ ई०, रचनाकाल निम्नलिखित दोहे से स्पष्ट है——

> वसु सर वसु ससि अब्द रवि दिन पंचमी वसन्त।
> रच्यौ गुविन्दानन्दघन वृन्दावन रसवन्त॥

वसु=८, सर=५, वसु=८, ससि=१——'अंकानाम् वामतो गतिः' के अनुसार=सं० १८५८। यह कवि का स्वहस्तलेख है, जिसे कि उसने अपने भतीजे नारायण के लिए लिखा था——

> बेटा बाल मकुन्द कौ, श्री नारायण नाम।
> रच्यो तासु हित ग्रन्थ ये, रसिक गुविंद अभिराम॥

ग्रन्थ के नामकरण के विषय में कवि स्वयं कहता है——

× × ×

---

(१) 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (षष्ठ भाग) रीतिकाल' सम्पादक——डॉ० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण, सं० २०१५ वि०, पृ० ३७३; (नागरी प्रचारिणी सभा काशी-प्रकाशन)।

कहत सुनत सीखत सब विधि आनंद देत।
रसिकन कौ रस भौन यह, कवि के काव्य समूह।
रसिक गुविंदानन्दघन सज्जन के सुख व्यूह।।
सुकवि गोविन्दादिकनि कृत यह आनंद समूह।
याते नाम आनंदघन धर्यौ रहित प्रत्यूह।।

आदि

श्री मद्राधा रसिक सर्वेश्वर जू सहाय। अथ श्री गुविन्दानन्द घन लिख्यते।...............।

मध्य

कछु मोतिन माँग गुही न गुही कछु केसरि खौरि लगावति है।...............।

अन्त

सूत्र मांझ लक्षन सबै, उदाहरन सब छंद। रसिक गुविन्दानन्द घन वरन्यो रसिक गुविन्द। प्रथम श्री राधा सर्वेश्वर सरण गुरुदेव जू की परम्परा पीछे कवि वंश जानि। नवरस, भाव, भावसान्ति आदि विभावादि एक, दूजे नायक और नाइका सगुन मानि। तीजे दोष पद, वाक्य, अर्थ, रस, नाटक के सोरह, अठारह, पचीस, दस, षट ठानि। चौथे गुन, शब्दा-रथ अलंकार रसिक गुविंदानन्दघन के प्रबन्ध चारियो बखानि। इति श्रीमत् वृन्दावन चन्द्रवर चरणारविन्द मकरंद पानानंदित अलि रसिक गोविन्द कविराज विरचितं श्रीमत् रसिक गोविन्दानन्दघने गुणालंकार वर्णनं नाम चतुर्थ प्रबन्धः। शुभ संवत् १८७० मिती कार्तिक सुदी ९, चन्द्रवार, चिरंजीव लाला श्रीनारायण पठनार्थ श्रीमत् वृन्दावने लेखक स्वयम्। बांचे जाकौ जथा जोग्य श्रीराम राम।

विषय

(१) प्रारंभ, गुरु रसिक अनन्य जी का वंश-वर्णन—पृष्ठ १-२ तक।

(२) संस्कृत के अन्य ग्रंथों की रस, अलंकार साहित्य के संबंध में सम्मतियाँ—पृष्ठ ३-४।

(३) रस, भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक, संचारी, स्थायी आदि। उदाहरणों में निम्नलिखित कवियों की कविताएँ दी गई हैं—रसिक गोविन्द, केशव, लाल, कासीराम, शिरोमणि, किशोर, सेनापति, घनस्याम, सूरदास, मुकुन्द जू, रघुराई, सोम, बिहारी, नन्दन, कुलपति, सोमनाथ, नारायण, देवता, देव, राजा नागरीदास, व्यास जू, इन्द्रजीत आदि पृष्ठ ५-४१।

(४) नायक-नायिका-भेद निरूपण। उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त इस प्रकरण में ऊधोराम, भगवन्त, कोक, मुकुन्द, सदानन्द, नन्ददास, दयानिधि, आनन्दघन, कृष्ण, किशोर, रसखान, शम्भु, देव, ब्रह्म, प्रवीन, रामकवि, सोमनाथ, मतिराम, बिहारी, हेली, काशीराम, निवाज, गंग, लाल आदि की कविताएँ नायक-नायिकाओं के भेदों के उदाहरण में आई हैं—पृष्ठ ४२-७७।

(५) काव्य के दूषणों का वर्णन। गोविन्द, केशव, कुलपति, सोमनाथ आदि कवियों की रचनाएँ उदाहरण रूप में आई हैं—पृष्ठ ७८-९५।

(६) गुणालंकार, चित्रकाव्य, अर्थालंकार, शब्दालंकारों के भेद और सविस्तृत उदाहरण। गोविन्द लाल, कविनाथ, केशव, घनस्याम, तुलसीदास, सूर, देव, बिहारी, सोमनाथ, नागरीदास, देवीदास, वृन्द, चिन्तामनि, कुलपति, सोम, छत्रसिंह, गंग, मुकुन्द, काशीराम, किशोर, शिरोमणि, श्रीपति, गदाधर, सूरत, हरिवंश, गुसाईं जू, दयानिधि, ध्रुवदास जू, नन्ददास, व्यास जू, चन्द कवि, जगजीवन, पृथ्वीराज, कविन्द्र, चतुरबिहारी, मतिराम, नरोत्तम इत्यादि कवियों के अलभ्य उदाहरण इसमें दिये गए हैं। इनके अलावा बहुत से अज्ञात कवियों की कृतियाँ भी दी गई हैं—पृष्ठ ९६-१५७।

(७) कवि-परिचय—पृष्ठ १५८-१५९ तक।

जैसा कि उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है तथा आचार्य शुक्ल ने भी लिखा है कि यह ग्रन्थ आचार्यत्व की दृष्टि से लिखा गया सात-आठ सौ पृष्ठों का बड़ा भारी रीतिग्रंथ है जिसमें काव्य के दशांगों—रस, नायक-नायिका-भेद, गुण, दोष, अलंकार आदि का विस्तृत निरूपण हुआ है। पूरा ग्रंथ चार प्रबंधों में विभक्त है—पहले प्रबन्ध में नव रस, भाव, भावशान्ति, विभाव—आदि का वर्णन है, दूसरे में नायक-नायिका-भेद-निरूपण है, तीसरे में काव्य-दोषों की चर्चा है और चौथे में गुण एवं अलंकारों का विस्तृत विवेचन है। ग्रन्थ की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(१) ग्रन्थ के आदि में कवि ने अपने गुरु के वंश का वर्णन किया है तथा अन्त में अपने वंश का परिचय दिया है।

(२) अन्य रीतिग्रंथों की अपेक्षा इसमें विवेचन भी अधिक है तथा छूटी हुई बातों का समावेश भी हो गया है।

(३) काव्य दोषों का वर्णन—जो हिन्दी के लक्षण-ग्रंथों में बहुत कम पाया जाता है—इसमें काव्यप्रकाश के अनुसार विस्तार से दिया गया है।

(४) लक्षण ब्रज-भाषा गद्य में दिए गए हैं। रसों, अलंकारों आदि के स्वरूप को गद्य में भरसक समझाने का प्रयत्न किया गया है।

(५) संस्कृत के बड़े-बड़े आचार्यों के मतों का उल्लेख भी स्थान-स्थान पर है, जैसे रस-निरूपण इस प्रकार है—

"अन्य-ज्ञानरहित जो आनंद सो रस। प्रश्न—अन्य-ज्ञान-रहित आनन्द तो निद्रा हू है। उत्तर—निद्रा जड़ है, यह चेतन। भरत आचार्य सूत्रकर्ता को मत—विभाव, अनुभाव, संचारी भाव के योग तें रस की सिद्धि। अथ काव्य प्रकाश को मत—कारण कारज सहायक हैं जे लोक में इनही को नाट्य में, काव्य में विभाव की संज्ञा है। अथ टीकाकर्त्ता को मत तथा साहित्य दर्पण को मत—सत्त्व, विशुद्ध, अखंड, स्वप्रकाश, अनंद, चित्, अन्य ज्ञान नहिं संग, ब्रह्मा स्वाद-सहोदर-रस।

इसके आगे अभिनव गुप्त का मत कुछ विस्तार से दिया गया है।"[१]

(६) दूसरे कवियों के उदाहरणों को चुनने में बड़ी सहृदयता का परिचय दिया गया है।

(७) कहीं-कहीं संस्कृत के उदाहरणों के अनुवाद कर दिए गए हैं। ऐसे अनुवाद भी बहुत सुन्दर बन पड़े हैं। साहित्य-दर्पण के मुग्धा के उदाहरण (दत्ते सालसमंथरं......इत्यादि) का हिन्दी अनुवाद कितनी सुन्दरता से किया गया है—

आलस सों मंद मंद धरा पै धरति पाय,
भीतर तें बाहिर न आवै चित चाय कै।
रोकति दृगनि छिन छिन प्रति लाज साज,
बहुत हँसी की दीनी बानि बिसराय कै।
बोलति बचन मृदु मधुर बनाय, उर,
अंतर के भाव की गँभीरता जनाय कै।
बात सखी सुन्दर गोविंद की कहति तिन्हैं,
सुन्दरि विलोकै बंक भृकुटी नचाय कै॥

(२) **रामायण चयनिका**—अक्षर क्रम से ३३ दोहों में रामायण की कथा संक्षेप में कही गयी है। यह सं० १८८५ के पहले की रचना है। इसकी शैली का परिचय इन दोहों से मिल सकता हे—

चकित भूप बानी सुनत गुरु वसिष्ठ समुझाय।
दिए पुत्र तब, ताड़का मग में मारी जाय॥
छाँड़त सर मारीच उड़्यो, पुनि प्रभु हत्यो सुबाहु।
मुनि मख पूरन सुमन सुर बरसत अधिक उछाह॥

(३) **लछिमन चंद्रिका**—'रसिकगोविंदानन्दघन' में आए हुए लक्षणों

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

का संक्षिप्त संग्रह जो सं० १८८६ में लछिमन कान्यकुब्ज के अनुरोध से कवि ने किया था।

(४) **पिंगल**

(५) **समय प्रबन्ध**—राधा-कृष्ण की ऋतुचर्या ८५ पद्यों में वर्णित है।

(६) **कलिजुगरासो**—इसमें १६ कवित्तों में कलिकाल की बुराइयों का वर्णन है। प्रत्येक कवित्त के अन्त में 'कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविंदराय, कठिन कराल कलिकाल चलि आयो है'—यह पद आता है। निर्माण-काल सं० १८६५ है।

(७) **रसिक गोविन्द**—चन्द्रालोक या भाषाभूषण के ढंग की अलंकार की एक छोटी पुस्तक, जिसमें लक्षण और उदाहरण एक ही दोहे में हैं। रचनाकाल सं० १८९० है।

(८) **अष्टदेश भाषा**—यह ग्रंथ प्रस्तुत ग्रंथ दूषणोल्लास की हस्त-लिखित प्रति के साथ लगा हुआ है। आचार्य शुक्ल के अनुसार इसमें ब्रज, खड़ी बोली, पंजाबी, पूरबी आदि आठ बोलियों में राधा-कृष्ण की शृंगार-लीला कही गई है, किन्तु प्रस्तुत प्रति में पूर्वभाषा, पंजाब भाषा, ढुंढाहर भाषा, ब्रजभाषा, रेखता, अष्टदेश की भाषा—केवल इन्हीं छः भाषाओं के छन्द हैं और पुस्तक का नाम भी 'अष्टदेश भाषा' नहीं वरन् अथ 'देसनि की भाषा' दिया हुआ है। 'अथ' को 'अष्ट' पढ़ लिया गया हो, ऐसी भी सम्भावना है। यह ग्रंथ अनुसंधान में भी मिल चुका है और खोज विवरणों में इसका परिचय भी दिया गया है। बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद् की सन् १९०६-८ के प्राचीन हस्तलिखित पोथियों के विवरण में इस ग्रंथ का उल्लेख है। वहाँ पर इसमें ७५ श्लोक कहे गए हैं। भाषा की दृष्टि से ग्रंथ बहुत महत्त्वपूर्ण है।

(९) **युगलरस माधुरी**—'देसनि की भाषा' की भाँति ही यह ग्रंथ भी दूषणोल्लास की प्रति के साथ लगा हुआ है। ये दोनों अन्तिम ग्रंथ दूषणो-

ल्लास के परिशिष्ट में दे दिये गए हैं। दोनों ही ग्रंथ शोध में प्राप्त हो चुके हैं और खोज विवरणों में इनका परिचय भी दिया जा चुका है।[1] मिश्र-बन्धुओं ने यह ग्रंथ देखा भी था। उनका कथन है—"इनका बनाया हुआ 'जुगल रस माधुरी' नामक ग्रंथ हमने देखा है, जो बड़ा विशद है।"[2] उपर्युक्त खोज-विवरण में इस ग्रन्थ की पद संख्या २९१ दी गई है, मिश्रबन्धुओं के अनुसार इसमें २०१ छन्द हैं, किन्तु प्रस्तुत प्रति में १६९ छन्द ही हैं। लगता है यह प्रति अधूरी है। मिश्रबन्धुओं ने इस ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८५८ बताया है। यह ग्रंथ बहुत महत्त्वपूर्ण है। कवि की काव्य-प्रतिभा का वास्तविक विकास इसी में देखने को मिलता है। इसमें वृन्दावन तथा राधा का वर्णन है।

इन ग्रंथों के अतिरिक्त मिश्रबन्धुओं ने एक और ग्रंथ 'गोविन्दचंद्र चंद्रिका' का भी उल्लेख किया है।

दूषणोल्लास-समीक्षा

(क) **परिचय**—आज तक प्रकाशित किसी भी खोज-विवरण में गोविन्ददास नाम के किसी कवि की 'दूषणोल्लास' नाम की किसी रचना का उल्लेख नहीं मिलता। एक 'दूषणोल्लास' की चर्चा मिलती भी है तो वह कवि अमीरदास की रचना है।[3]

प्रस्तुत ग्रन्थ उन्हीं रसिकगोविन्द का लिखा हुआ है, जिनकी चर्चा खोज-विवरणों और इतिहास-ग्रन्थों में हुई है, क्योंकि इस ग्रंथ की प्रस्तुत

---

१. 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (सन् १९०६, १९०७ १९०८) (आचार्य नलिनविलोचन शर्मा) बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्।

२. 'मिश्रबन्धु विनोद' (मिश्रबन्धु) द्वितीय भाग, द्वितीय बार पृ० ८४८-४९।

३. 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण'—पहला भाग सम्पादक—श्यामसुन्दरदास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

प्रति के अन्त में जो दो छोटे-छोटे और ग्रंथ —'देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' जुड़े हुए हैं—उन दोनों को हिन्दी साहित्य के सभी इतिहासकारों ने एक मत से 'रसिक गोविन्द' कृत स्वीकार किया है, और इसी कवि की रचना 'दूषणोल्लास' भी है, क्योंकि इस प्रति में इन तीनों रचनाओं को गोविन्ददास कृत कहा गया है। ये दोनों रचनाएँ—'देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' भी वही रचनाएँ हैं, जिनका परिचय खोज-विवरणों और साहित्य के इतिहास-ग्रंथों में दिया गया है क्योंकि वह परिचय पूर्णरूपेण इनके ऊपर घटित होता है तथा इतिहास-ग्रंथों में उद्धृत 'जुगलरसमाधुरी' का निम्नलिखित अंश प्रस्तुत 'जुगल रस माधुरी' के पृष्ठ ६ के प्रारंभिक तीन छन्द हैं—

मुकलित पल्लव फूल सुगंध परागहि झारत।
जुग मुख निरखि बिपिन जनु राई लोन उतारत॥
फूल फूलन के भार डार झुकि यों छबि छाजै।
मनु पसारि दइ भुजा देन फल पथिकनि काजै॥
मधु मकरंद पराग लुब्ध अलि मुदित मत्तमन।
विरद पढ़त ऋतुराज नृपति के मनु बंदीजन॥[१]

अतः यह स्पष्ट है कि प्रस्तुत ग्रंथ रसिक गोविन्द की ही रचना है, किन्तु पुनः समस्या खड़ी होती है, क्योंकि किसी भी खोज-विवरण या इतिहास ग्रंथ में रसिकगोविन्द कृत 'दूषणोल्लास' ग्रंथ का उल्लेख नहीं है, इतना अवश्य है कि आचार्य शुक्ल ने इनके ९ ग्रंथों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "सम्भवतः और भी होंगे।"[२] ऐसी दशा में खोज-विवरणों और इतिहास-ग्रंथों में दिए गए रसिकगोविन्द के समस्त ग्रंथों के परिचय के सम्यक् अध्ययन-अनुशीलन के पश्चात मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि 'दूषणोल्लास' कवि के विशाल रीति ग्रन्थ 'रसिकगोविन्दानन्दघन' का अधांश अर्थात्

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २९५।
२. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २९२।

तृतीय प्रबन्ध (दोष वर्णन) और चतुर्थ प्रबन्ध (गुण, अलंकार वर्णन)—है। 'रचनाएँ' शीर्षक में दिए गए 'रसिकगोविन्दानन्दघन' के तृतीय और चतुर्थ प्रबन्ध के परिचय तथा प्रस्तुत ग्रंथ के तुलनात्मक अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है। वहाँ तृतीय प्रबन्ध में दोषों का वर्णन है और चतुर्थ में गुण और अलंकारों का। यही क्रम यहाँ भी है, वहाँ लक्षण व्रजभाषा गद्य में दिए गए हैं और उदाहरण पद्य में हैं, यही बात यहाँ भी है, वहाँ बताया गया है कि उदाहरणों में कुछ कवि के अपने निजी हैं तथा अधिकांश अन्य कवियों के, यही हाल यहाँ भी है। काव्य दोषों में वहाँ १६ पददोष, १८ वाक्य दोष, २५ अर्थदोष, १० रसदोप तथा ६ नाटक के दोष कहे गये हैं—यहाँ भी ये इतनी ही संख्या में हैं। इसी प्रकार और भी बहुत-सी सामान्य बातें इस पर भी पूरी तरह घटित होती हैं। इनके अतिरिक्त मेरे मत का प्रबल समर्थन इस बात से होता है कि वहाँ उदाहरणों में जिन कवियों के छन्द दिए गए हैं, उन्हीं कवियों के छन्द यहाँ भी दिए गए हैं। इससे भी सशक्त प्रमाण यह है कि नागरी प्रचारिणी सभा के 'तृतीय त्रैवार्षिक हस्त-लिखित हिन्दी पुस्तकों के खोज-विवरण' में 'रसिक गोविन्दानन्दघन' की प्रति का परिचय दिया गया है, उसमें प्रति का अन्त निम्नलिखित छन्द से होता है—

सहर मझावत पहर द्वैक लागि जैहै,
बसती के छोर मैं सराहिहै उतारे की।
भनत गोविन्द बन माँझ ही परैगो साँझ,
खबर उड़ानी है बटोही द्वैक मारे की।
प्रीतम हमारे परदेस कौ सिधारे याते,
मया करि बूझति हौं रीति राहवारे की।
करषैं नदी के बरबर के तरें तू बसि,
चौकैं मति चौकी इतै पाहरू हमारे की॥[1]

---

१. 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का तृतीय त्रैवार्षिक खोज-विवरण' सम्पादक—श्यामबिहारी मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

यही छन्द प्रस्तुत ग्रन्थ में पृष्ठ २५८ पर छंद संख्या ५६४ के रूप में दिया हुआ है, अन्तर केवल इतना है कि यहाँ पर 'भनत गोबिन्द' के स्थान पर 'भनत कविन्द्र' है। इस प्रकार यह बिल्कुल स्पष्ट है कि 'दूषणोल्लास' ग्रन्थ 'रसिकगोविन्दानन्दघन' का अधांश ही है। यह सारा वागवितण्डावाद 'रसिकगोविन्दानन्दघन' की किसी भी प्रति के अभाव के कारण करना पड़ रहा है, अन्यथा यदि कोई प्रति उपलब्ध होती, तो उससे प्रत्यक्ष तुलना कर ली जाती और बात तुरन्त साफ हो जाती।

प्रश्न उठता है कि यह ग्रन्थ अधूरा क्यों है? इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सम्भावनाएँ हो सकती हैं—

(१) हो सकता है कि कवि ने किसी के अनुरोध से दोष, गुण और अलंकारों वाले अंश को स्वतंत्र ग्रन्थ का रूप दे दिया हो, जैसा कि लछिमन कान्यकुब्ज के अनुरोध से उसने 'रसिकगोविन्दानन्दघन' में आए हुए लक्षणों का संक्षिप्त संग्रह 'लछिमन-चन्द्रिका' नाम से कर दिया था।

(२) यह भी हो सकता है कि पहले कवि ने 'दूषणोल्लास' ही लिखा हो और इसकी एक प्रतिलिपि हो जाने के बाद कवि के मन में अन्य काव्यांगों पर भी लिखने की बात आई हो, और उन्हें लिखकर इस ग्रन्थ के आदि में जोड़ दिया हो। प्रस्तुत प्रति पहले की प्रतिलिपि परम्परा की हो सकती है।

(३) यह प्रतिलिपिकार का प्रमाद भी हो सकता है। उसने आधे ग्रंथ की ही प्रतिलिपि किया हो, आधा छोड़ दिया हो। यह बात हो सकती है कि यह प्रमाद प्रस्तुत प्रति के वंश के किसी पूर्वज प्रति के प्रतिलिपिकार का ही हो। मेरा मत इसी तृतीय सम्भावना के प्रक्ष में अधिक है। जो हो, यह तो स्पष्ट ही है कि यह ग्रंथ उसी बड़े ग्रंथ का अधांश है।

रसिकगोविन्दजी एक उत्कृष्ट कवि थे और उनका ग्रन्थ 'रसिक गोविन्दानन्दघन' एक अत्यन्त विशाल रीति-ग्रंथ है। काव्य-शास्त्र का ऐसा विशाल ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य में प्रायः नहीं है और जितने विस्तार के साथ इसमें रस, नायक-नायिका, दोष, गुण, अलंकार पर विचार हुआ है, उतने

विस्तार के साथ विचार कदाचित् एकाध ही ग्रन्थ में हुआ हो। यह कहा जा चुका है कि इस ग्रन्थ की दो प्रतियों का उल्लेख खोज-विवरणों और इतिहास-ग्रंथों में मिलता है, किन्तु उनमें से आज एक भी उपलब्ध नहीं है। एक प्रति तो नागरी प्रचारिणी सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में कुछ दिनों पूर्व थी, पर आज दिन उसका भी पता नहीं क्या हुआ? ऐसी स्थिति में जब कि पूरे ग्रंथ की एक भी प्रति अप्राप्य है, अधूरे ग्रंथ का ही सम्पादन किया जा रहा है। पूरे के अभाव में आधे से ही काम चलाया जा रहा है, तथापि अधूरे ग्रंथ का भी सम्पादन अपने में बहुत महत्त्व रखता है।

(ख) महत्त्व—प्रस्तुत ग्रंथ 'दूषणोल्लास' का महत्त्व निम्नलिखित दृष्टियों से है—

(१) इस ग्रंथ में लक्षणों को गद्य में समझाया गया है, जिससे साधारण पाठक भी इन्हें हृदयंगम कर लेता है।

(२) इस ग्रंथ में काव्य-दोषों पर विस्तार के साथ विचार हुआ है, जो कि हिन्दी के बहुत कम रीति-ग्रंथों में मिलता है।

(३) प्रत्येक दोष, गुण या अलंकार के लिए अनेक उदाहरण दिए गए हैं, जिससे आलोच्य विषय की बोधगम्यता बढ़ गई है।

(४) दोष, गुण और अलंकार तीनों का पूर्णरूप से सम्यक् विवेचन किया गया है।

(५) कवि ने स्वरचित उदाहरणों के अतिरिक्त हिन्दी के अनेक ग्रंथों एवं कवियों के उत्कृष्ट छन्दों को छाँट-छाँटकर उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत किया है।

(६) फलतः ऐसे अनेक कवियों के दुर्लभ छन्द इस ग्रन्थ में उदाहरण रूप में उद्धृत हैं, जिनका उल्लेख हिन्दी साहित्य के इतिहासों में नहीं मिलता। इन छन्दों से इन कवियों की काव्य-प्रतिभा पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

(ग) शास्त्रीय पक्ष—प्रस्तुत ग्रन्थ का शास्त्रीय विवेचन बहुत ही उत्कृष्ट, समीचीन एवं विशद है। इसमें केवल दोष, गुण और अलंकारों

का वर्णन है। कवि ने सर्वप्रथम दोषों को लिया है, क्योंकि उसका कथन है कि "जद्यपि गुण, अलंकार रस के उपकारक हैं, यातैं निरूपन करिबे जोग्य हैं। तो हू दोष ही प्रथम कहे हैं। काहे तैं कि सम्पूर्ण कवि दोष ही प्रथम कहत आए हैं।"[1]

दोषों को पाँच प्रकार का बताया है—१. पद दोष, २. पदांश दोष ३. वाक्य दोष, ४. अर्थ दोष और ५. रसदोष। इनमें पद दोष १६ बताए गए हैं। वे हैं—१. श्रुतिकटु, २. संस्काररहत, ३. अप्रयुक्त, ४. असमर्थ, ५. निहितार्थ, ६. निरर्थक, ७. अश्लील, ८. अनुचितार्थ, ९. अवाचक, १०. ग्राम्य, ११. अप्रतीत, १२. संदिग्ध, १३. नेयार्थ, १४. क्लिष्ट १५. अविमृष्टविधेयांश, १६. विरुद्धमतिकृत। पदांश दोषों का विस्तार यह कहकर नहीं किया गया है कि "अरुपदांस दोष को काम भाषा में बहुधा प नाही यातैं नहीं कहे हैं।"[2] वाक्य दोष १८ निर्दिष्ट हैं—१. प्रतिकूल वर्णन, २. वृत्तहत, ३. न्यूनपद, ४. अधिक पद, ५. कथित पद, ६. पतत्प्र-कर्ष, ७. समाप्तपुनरात्त, ८. अर्द्धान्तिरैक वाचक, ९. अभवनमत जोग १०. अनभिहितवाच्य, ११. अस्थानस्थपद, १२. अस्थानस्थ समास, १३. संकीर्ण, १४. गर्भित, १५. प्रसिद्धहत, १६. भग्नप्रक्रम, १७. अक्रम, १८. अमत्परार्थ। अर्थ दोष २३ कहे गए हैं[3]—१. अपुष्टार्थ, २. कष्टार्थ, ३. व्यर्थ, ४. अपार्थ, ५. अव्याहत, ६. दुःक्रम, ७. पुनरुक्ति, ८. ग्राम्य, ९. संदिग्ध, १०. निर्हेतु, ११. प्रसिद्धविद्याविरुद्ध, १२. अनवीकृत, १३. सनियम, १४. अनियम, १५. विशेष, १६. अविशेष, १७. साकांक्ष, १८. मुक्तपद, १९. सहचरभिन्न, २०. प्रकाशित विरुद्ध, २१. विधि अनुवाद

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ३२।

२. दूषणोल्लास—पृ० ३८।

३. 'पहले रसिकगोविन्दानन्दघन' के परिचय में यह कहा गया है कि वहाँ पर अर्थ दोष २५ बताए गए हैं, किन्तु यहाँ २३ ही हैं। सम्भवतः प्रतिलिपिकार २ दोषों को छोड़ गया है।

अयुक्त २२. तिक्त पुनः स्वीकृत तथा २३. अश्लील। रस दोष १० कहे गये हैं—तथा यहीं पर छः नाट्य दोषों का भी उल्लेख है। रसदोष इस प्रकार है—

१. रस वाच्यता, २. स्थायीभाव वाच्यता, ३. व्यभिचारीभाव वाच्यता, ४. अनुभाव की क्लिष्ट कल्पना, ५. विभाव की क्लिष्ट कल्पना, ६. प्रतिकूल अनुभाव ग्रहण ७. प्रतिकूल विभाव ग्रहण, ८. पुनः पुनः दीप्ति, ९. प्रकृति विपर्यय और १०. अर्थानौचित्य। नाटक के छः दोष निम्नलिखित हैं—१. अकांड विषय कथन, २. रस खंडन, ३. असमय के विषय, ४. प्रधान अंग का विस्मरण ५. अगी को नहीं जानना और ६. अनंग का अभिधान।[1] अर्थदोषों के अन्तर्गत दोषों के समाधान की स्थिति पर भी विस्तार के साथ प्रकाश डाला गया है।

आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास में कहा है कि 'रसिकगोविन्दानन्दघन' में दोषों का वर्णन काव्य प्रकाश के अनुसार विस्तार के साथ किया गया है किन्तु इस ग्रंथ में दोषों का वर्णन साहित्य-दर्पण के अनुसार हुआ है। यह बात तीनों ग्रंथों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है। काव्य-प्रकाश में दोषों का जितना विस्तार है उतना इस ग्रन्थ में नहीं है। दूसरी बात यह है कि काव्य प्रकाश के दोषों का क्रम इससे नहीं मिलता जब कि साहित्य-दर्पण का क्रम प्रायः मिल जाता है, अन्तर केवल इतना है कि साहित्य-दर्पण में १३ पद-दोषों का वर्णन है, इस ग्रंथ में १६ दोषों का। इसमें तीन दोष—१. संस्कारहत, २. असमर्थ और ३. निरर्थक—अधिक हैं। पदांश दोषों का यहाँ विस्तार नहीं है, साहित्य-दर्पण में कुछ विस्तार किया गया है। इसी प्रकार साहित्य-दर्पण में केवल २० वाक्य दोषों का वर्णन है, जबकि इस ग्रंथ में २३ का वर्णन है। यहाँ पर तीन दोष—१. व्यर्थ, २. अपार्थ, ३. व्याहत—अधिक हैं। रसदोष में दोनों में प्रायः

---

१. अर्थदोषों के अतिरिक्त शेष सब दोष उसी प्रकार हैं जैसा कि 'रसिकगुविन्दानन्दघन' के परिचय में कहा गया है।

समाम्नात है। दोषों के वर्णन का क्रम मिलता है। इन थोड़ी सी विभिन्नताओं के अतिरिक्त साहित्य-दर्पण और दूषणोल्लास की सभी बातें समान हैं, जबकि काव्य प्रकाश और इस ग्रन्थ के दोष वर्णन में पर्याप्त वैषम्य है। अतः स्पष्ट है कि दूषणोल्लास के दोषों का वर्णन आचार्य विश्वनाथ के साहित्य-दर्पण के अनुसार है। किन्तु यदि यह कहा जाय कि साहित्यदर्पणकार ने भी दोष-प्रकरण आचार्य मम्मट के काव्य-प्रकाश से लिया है तो कोई अत्युक्ति न होगी। अतः इस दृष्टि से प्रस्तुत ग्रंथ के दोष-विवेचन का मूल-स्रोत काव्य प्रकाश माना जा सकता है।

दोषों के बाद काव्य गुणों का विवेचन हुआ है। गुण तीन कहे गए हैं—माधुर्य, ओज और प्रसाद। इसी के साथ गुणों की उपकारिणी तीनों वृत्तियों—उपनागरिका, परुषा तथा कोमला अथवा वैदर्भी, गौड़ी तथा पांचाली का भी वर्णन हुआ है। इन गुणों का वर्णन भी साहित्य-दर्पण के अनुरूप है।

अन्त में अलंकारों का विस्तृत विवेचन है। पहले अलंकारों के दो भेद किए गए हैं—शब्दालंकार और अर्थालंकार। शब्दालंकार पाँच प्रकार के कहे गये हैं—

१. वक्रोक्ति, २. अनुप्रास, ३. यमक, ४. श्लेष और ५. चित्र। इनके अनेक उपभेद भी निर्दिष्ट हैं। अर्थालंकारों के ११९ भेद किए गए हैं। वे निम्नलिखित हैं—

१. उपमा, २. अनन्वय, ३. उपमेयोपमा, ४. प्रतीप, ५. रूपक, ६. परिणाम, ७. उल्लेख, ८. स्मरण, ९. भ्रम, १०. सन्देह, ११. अपह्नुति, १२. उत्प्रेक्षा, १३. अतिशयोक्ति, १४. तुल्ययोगिता, १५. दीपक, १६. दीपकावृत्ति, १७. प्रतिवस्तूपमा, १८. दृष्टांत, १९. निदर्शना, २०. व्यतिरेक, २१. सहोक्ति, २२. विनोक्ति, २३. समासोक्ति, २४. परिकर, २५. परिकरांकुर, २६. अप्रस्तुत प्रशंसा, २७. अर्थश्लेष, २८. प्रस्तुतांकुर, २९. पर्यायोक्ति, ३०. व्याज स्तुति, ३१. व्याजनिन्दा, ३२. आक्षेप ३३. विरोधाभास, ३४. विभावना, ३५. विशेषोक्ति, ३६. असम्भव,

३७. असंगति, ३८. विषम, ३९. सम, ४०. विचित्र, ४१. अधिक, ४२. अल्पाऽल्प, ४३. अन्योन्य, ४४. विशेष, ४५. व्याघात, ४६. गुम्फ, ४७. एकावली, ४८. मालादीपक, ४९. सार, ५०. यथासंख्य, ५१. पर्याय, ५२. परिवृत्ति, ५३. परिसंख्या, ५४. समुच्चय, ५५. विकल्प, ५६. कारक-दीपक, ५७. समाधि, ५८. समाहित, ५९. प्रत्यनीक, ६०. काव्यार्थापत्ति, ६१. काव्यलिंग, ६२. अर्थान्तरन्यास, ६३. विकश्वर, ६४. संभावना, ६५. मिथ्याधिवसित, ६६. प्रौढ़ोक्ति, ६७. ललित, ६८. प्रहर्षण, ६९. विषाद, ७०. उल्लास, ७१. अवज्ञा, ७२. अनुज्ञा, ७३. लेख, ७४. मुद्रा-प्रस्तुति, ७५. रत्नावली, ७६. तद्गुण, ७७. अतद्गुण, ७८. पूर्वरूप, ७९. अनुगुन, ८०. मीलित, ८१. सामान्य, ८२. उन्मीलित, ८३. विशेषक, ८४. गूढ़ोत्तर, ८५. चित्र, ८६. बहरलापिका, ८७. अंतरलापिका, ८८. प्रतिलोभ, ८९. व्यस्तगतागत, ९०. सूक्ष्म, ९१. पिहित, ९२. व्याजोक्ति, ९३. गूढ़ोक्ति, ९४. विवृतोक्ति, ९५. युक्ति, ९६. लोकोक्ति, ९७. छेकोक्ति, ९८. वक्रोक्ति, ९९. स्वभावोक्ति, १००. भाविक, १०१. उदात्त, १०२. अत्युक्ति, १०३. निरुक्ति, १०४. प्रतिषेध, १०५. विधि, १०६. हेतु, १०७. अनुमान, १०८. रसवत्, १०९. जात्य, ११०. ऊरजस्वत्, १११. सुसिद्ध, ११२. प्रसिद्ध, ११३. अमित, ११४. विपरीत, ११५. विरुद्ध, ११६. प्रेय, ११७. युक्तायुक्त, ११८. उत्तर तथा ११९. आशिष। इन अलंकारों के प्रचुर उपभेद भी इस ग्रंथ में प्राप्त हैं।

डाक्टर नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' के अनुसार "रसिकगोविन्दानन्दघन" में चन्द्रालोक अथवा भाषा-भूषण की शैली के आधार पर अलंकार के लक्षण, उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं।"[1] किन्तु दूषणोल्लास के अलंकारों के विवेचन का आधार जयदेव

---

१. 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास'—षष्ठ भाग (रीतिकाल) सम्पादक—डॉ० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण सं० २०१५ विक्रमी, पृष्ठ ३७२, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी-प्रकाशन।

का चन्द्रालोक नहीं, अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द है। चन्द्रलोक में तो लगभग सौ ही अलंकारों का वर्णन है जब कि प्रस्तुत ग्रंथ में ११९ अलंकारों का वर्णन है। यहाँ अर्थालंकारों की चर्चा की जा रही है, शब्दालंकार तो सर्वत्र समान ही हैं। दूसरे चन्द्रालोक के अलंकार-वर्णन का क्रम भी इस ग्रंथ के क्रम से नहीं मिलता, जबकि कुवलयानन्द का क्रम पूर्णरूप से दूषणोल्लास के क्रम से मिलता है। कुवलयानन्द में १२४ अलंकारों का वर्णन है, जिसमें दीक्षित ने संसृष्टि, शंकर के ५ प्रकारों को पृथक् अलंकार स्वीकार किया है। इन पाँच अलंकारों को निकाल देने पर चर्चित अलंकारों की संख्या ११९ बचती है। दूषणोल्लास में भी ११९ अलंकारों की ही चर्चा है, किन्तु इसमें भी बहुरलापिका, अंतरलापिका, प्रतिलोम और व्यस्तगतागत ये चार अलंकार चित्र के ही उपभेद हैं। इन चारों को निकाल देने से इस ग्रंथ के चर्चित अलंकारों की संख्या ११५ बच रहती है। दोनों में थोड़ा-सा और वैषम्य है। प्रस्तुत ग्रंथ के छियालिसवें अलंकार 'गुम्फ' का नाम कुवलयानन्द में 'कारणमाला' दिया गया है तथा ७३वें अलंकार 'लेख' का नाम 'लेश' दिया है। इनके अतिरिक्त ५८वाँ अलंकार 'समाहित' कुवलयानन्द में नहीं है। इन थोड़ी-सी असमानताओं के अतिरिक्त दोनों ग्रंथों में शेष सब कुछ समान है।

दूषणोल्लास के अलंकार-वर्णन का आधार अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द है। दूषणोल्लास का ही नहीं, बल्कि डॉ० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' का तो कहना है कि हिन्दी के प्रायः सभी अलंकार-ग्रंथों का आधार कुवलयानन्द ही है।[1]

श्री गुलाबराय के अनुसार "अलंकार-ग्रंथों की कई रचना-शैलियाँ रही हैं। कुछ लोगों ने तो दोहों में ही लक्षण और उदाहरण लिखे। कुछ ने लक्षण दोहों में और उदाहरण बड़े छन्दों में लिखे, और कुछ ने लक्षण और उदाहरण दोनों ही बड़े छन्दों में लिखे। कुछ ऐसे भी लोग थे,

---

१. 'अलंकार पीयूष'—रामशंकर शुक्ल 'रसाल'—पृ० १३२।

जिन्होंने लक्षण अपने बनाए हुए और उदाहरण दूसरे के बनाए हुए लिखे।"[1]

किन्तु इस ग्रन्थ की शैली इन सभी शैलियों से भिन्न है। इसमें लक्षण गद्य में और उदाहरण पद्य में दिए गए हैं। उदाहरणों में भी कुछ कवि के अपने हैं तथा अधिकांश अन्य कवियों के। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रस्तुत ग्रंथ का शास्त्रीय पक्ष बहुत ही सशक्त एवं समग्र है।

(घ) **काव्य-पक्ष**—'दूषणोल्लास' का काव्यपक्ष भी बड़ा सशक्त है। काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। स्थान-स्थान पर प्रकृति के सुन्दर चित्र मिल जाते हैं। प्रकृति का चित्रण सर्वत्र उद्दीपन-रूप में हुआ है, क्योंकि आलम्बन-रूप में प्रकृति को ग्रहण करने का कवि को अवसर ही कहाँ था। प्रकृति का उद्दीपन रूप देखिए, निम्नलिखित छन्द में कितना सुन्दर बन पड़ा है—

सर सरितान माँझ अमल कमल भयो,
अंबुज अकास मैं प्रकास सरसायौ है।
भुवन मैं नलिन निकर छबि छायो पुनि,
जमुना नैं संबर ही अंबर तनायौ है।
काम हू तैं अति अभिराम घनस्याँम बाम,
तेरे धाम मुदित मनावन कौं आयौ है।
ऐसे मैं गुबिंद सौं न मान करि मानिनी तू,
मानि कह्यौ मान तेरैं कैसैं मन भायौ है॥[2]

स्थान-स्थान पर फूलों के वर्णन किए गए हैं। जूही, चमेली, कनेर आदि के वर्णन हैं—

---

१. 'भाषा-भूषण'—गुलाबराय, भूमिका।
२. 'दूषणोल्लास'—पृ० ५, पद ३४।

नीकी जुही की लतानि की डारनि की अवली लवली मन मोहै।
फूलनि गुच्छ लगे अति स्वच्छ सुदेखि लुभाय नहीं अस को है।
चामल राधे खिले से खिलै अरु गोविंद को उपमा कवि टोहै।
उज्जलता पुन ऐसी लसै पट बाँध्यौ दही जनु भैंसि कौ सोहै॥[1]

फूलों के अतिरिक्त और भी बहुत से वृक्षों के वर्णन आए हैं। इसी प्रकार वन, पर्वत, नदी, नाले आदि के सुन्दर चित्रण इस ग्रंथ में हुए हैं। षड्ऋतु, सायं, प्रातः आदि के भी सुन्दर चित्र भरे पड़े हैं। ऋतुओं में सर्वाधिक चित्रण वसन्त का हुआ है। यदा-कदा अन्य ऋतुओं के भी चित्रण मिल जाते हैं। उदाहरणार्थ ग्रीष्म का सुन्दर चित्रण इस प्रकार है —

सूरज तेज तपै तिहुँ लोक मैं आधी जरादवे ? की मति ठाटी।
सीतलता कहि कौन करै जहँ देखै दुखारहू की बुधि नाटी।
जेठ में जीवन जौ ई बनै जब होइ तिवारी बनाय के पाटी।
सींचि कै कोरे घड़ान के नीर सौं द्वारनु दीजै उसीर की टाटी॥[2]

रस परिपाक भी इस ग्रन्थ का उच्चकोटि का है। सर्वाधिक चित्रण श्रृंगाररस का हुआ है। कहीं-कहीं वीर, वीभत्स और शान्त के भी सुन्दर उदाहरण मिल जाते हैं। श्रृंगार का एक उदाहरण यह है––

जोवन रूप अनूपरु आनन मंजु हँसी सरसी छबि छाई।
माँग भरी मुकतावलि सौं उर फूल सुमाल की सुन्दरताई॥
चंदन चित्र कियें सु चली जहँ गोविन्द आनंद कंद कन्हाई।
अंबर मैं अँग-अँग की दीपित है मन मूरतिवंत जुन्हाई॥[3]

---

१. दूषणोल्लास––पृ० ४९, पद ७८।
२. दूषणोल्लास––पृ० ३०, पद ४८।
३. दूषणोल्लास––पृ० ६, पद ६।

जितनी तन्मयता के साथ कवि श्रृंगार के पद लिखता है, उतना ही उसका अधिकार वीररस पर भी है। उदाहरणार्थ—

कौरव प्रचंड अरु पांडव उदंड इनि,
भारथ कौ स्वारथ के हेत बिस्तारचो है।
आनि पाँच सातक महारथी अचानक ही,
मिलि कै सबन अभिमन्यु मारि डारचो है।
श्री गुबिंद नर इह कौतुक निहारचो तब,
भीम ह्वै कै भट्ट सरासन कौ सँभारचो है।
जुद्ध मध्य क्रुद्ध कै विरुद्धी दुरबुद्धिन के,
बद्धन कौ भाँति भाँति उद्ध रूप धारचो है॥[1]

यहाँ शब्दावली भी वीररस के उपयुक्त ही है।

वीभत्स रस का एक सुन्दर उदाहरण इस प्रकार है—

रोगनि ते फूटि फूटि फोरे फटि फटि घाव,
रटि रटि रहे रुधि रुधिर चुचाय कैं।
हाथ पाद नासिकादि अंग गिरि गिरि ऐसैं,
नरन सरीर दिव्य देत हैं रसाय कैं।[2]

× × ×

इसी प्रकार संसार की यथार्थता का दर्शन करानेवाला शांत रस का एक सुन्दर सवैया देखिए—

बृच्छ बिहंग तजैं फलहीन तजैं मृग जौ बन दग्ध दिखाई।
गंध बिना अलि फूल तजैं सर सूखे कौ सारस हू तजि जाई।
सेवक भूपति भृष्ट तजैं बिन द्रव्य तजैं नर कौं गनिकाई।
या जग माँझ गुबिंद कहैं बिन स्वारथ कौन की का सौं मिताई॥[3]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ३७, पद १२।
२. दूषणोल्लास—पृ० ५२, पद ७४।
३. दूषणोल्लास—पृ० ९३, पद २८६।

संसार की स्वार्थपरता का कितना सुन्दर चित्रण सरस शब्दों में हुआ है।

गुण और अलंकार का तो कहना ही क्या! इन पर तो पूरा ग्रंथ ही है, फिर भी अप्रस्तुतों पर यहाँ संक्षेप में विचार किया जा रहा है। कवि ने अप्रस्तुतों के चयन में बड़ी कुशलता दिखाई है और इससे भी अधिक कुशलता उसने उनके प्रस्तुतीकरण में दिखाई है। परम्परा से चले आते हुए पिटे-पिटाए अप्रस्तुतों को वह इस ढंग से रखता है कि वे नवीन-से लगते हैं। कवि के अप्रस्तुत, प्रस्तुत के समान ही रूप, रंग, गुण और धर्म वाले हैं। कवि के अप्रस्तुत उसके भाव को वहन करने में पूर्ण सक्षम हैं। अप्रस्तुतों के प्रस्तुतीकरण की शैली भी आकर्षक है—

रूप गुण जोबन सुबास को प्रकास तेरो,
गोबिंद को बसीकार नेह को निकेत है।
दास कियो दर्पन खवास किए मोती मनि,
कुंदन कमीन कियो हियो भरि लेत है।
चेरो कियो चंपा बन चंदन कौं चाकर,
गुलाब कौं गुलाम कुंद कमल समेत है।
दासी करी दामिनी कौं चाँदनी कौ चेरी करी,
चन्द्रमा के चाय सौं चपेटा दिन देत है॥[1]

मानवीय रूप-चित्रण-सम्बन्धी परम्परागत अप्रस्तुतों को सुन्दर ढंग से निम्नलिखित सवैया में लाया गया है—

बमई ? नव नाभिहि तें निकसी इक स्यामल ब्यालि रुमालि सही।
चित चाइ सौं उच्च चढ़ी जुग खंजन नैननि के भख कौं उमही।
मग मैं लखि नासा खगेस बिसेस डरी उर और ही रीति गही।
कुच ह्वै दृढ़ सैल की संध्य कैं मध्य गुविंद उहै दुरि जाति रही॥[2]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ३७, पद १३।
२. दूषणोल्लास—पृ० ८९, पद २६७।

दूषणोल्लास की भाषा ब्रज है। यद्यपि ब्रजभाषा कवि की मातृभाषा नहीं, बल्कि स्वीकृत भाषा है, तथापि भाषा पर कवि का पूरा अधिकार है। वर्णों की छटा, सरस शब्दावली तथा कोमलकान्त पदावली देखते ही बनती है। उदाहरणार्थ—

कोमल है कल है कमला ज्यौं कियैं कर कंज मैं कंजकली कौ।
भाखे को भाइ न भूरि भरी कौं सुभूषन भेद कौं भाति भली कौ।
छाक छकी छबि सौं छलकै छलै छैल गुविंद छबीले छली कौ।
आवति है अलबेली अली लै अलीनि कौं औरु अली अवली कौ।।[1]

कवि की भाषा में फारसी की शब्दावली भी बहुतायत से मिल जाती है। 'खवास', 'गुलाम', 'गद्दी' आदि बहुत से फारसी के शब्द भरे पड़े हैं। निम्नलिखित पद में अनेक फारसी के शब्द आए हैं—

बैठ्यौ बनबीथनि बनाइ **दरबार** नव,
पल्लव की **कलम** गुलाबन की **गद्दी** है।
केकी कीर कोकिल नवीन नवसिंदा कियैं,
और पतझार **दफतर** सब **रद्दी** है।
विरह पुरा ? पै यह अमल लिखाय लायौ,
हरैं हरैं चातुरी सौं चांपत **चौहद्दी** है।
कीने सरसंत सबसंत औ असंत पर,
काम छिति कंत कौ बसंत **मुतसद्दी** है।।[2]

दूषणोल्लास' में अनेक छन्दों का प्रयोग हुआ है। प्रमुख छन्द ये हैं— कवित्त, सवैया, दोहा, छप्पय[3], भुजंग[4], अरिल्ल।[5]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ६७, पद १२९।
२. दूषणोल्लास-पृ० ८२, पद २२६।
३. दूषणोल्लास—पृ० ४०, पद २३।
४. दूषणोल्लास—पृ० ३९, पद १९।
५. दूषणोल्लास—पृ० ४७, पद ५५।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रकृति-चित्रण, रस-परिपाक, अप्रस्तुत-योजना, भाषा, छन्द आदि की दृष्टि से 'दूषणोल्लास' एक प्रौढ़ रचना है। जहाँ शास्त्रीय दृष्टि से इसका अत्यन्त महत्त्व है, वहाँ काव्य-सौंदर्य की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण कृति है। इसका काव्य पक्ष भी अत्यन्त समृद्ध है।

(ङ) दूषणोल्लास में आए हुए अन्य ग्रन्थ और कवि—इस ग्रन्थ में ५ अन्य ग्रन्थों—१. भाषाभूषण, २. कविप्रिया, ३. अलंकारमाला, ४. अलंकारकरणाभरण और ५. वृन्द-सतसई—का उल्लेख हुआ है, तथा ४० अन्य कवियों के छन्द भी उदाहरण-स्वरूप दिए गए हैं; ये कवि हैं—१. केशव, २. सोमनाथ, ३. कुलपति, ४. सेनापति, ५. कविनाथ, ६. लाल, ७. घनस्याम, ८. बिहारी, ९. कृक ? १०. देव, ११. मुकुंद, १२. अलखतरंग, १३. मतिराम, १४. गंग, १५. निपट, १६. कालदास, १७. कासीराम, १८. किसोर, १९. सिरोमनि, २०. पुरवी, २१. नन्ददास, २२. श्रीपति, २३. देवीदास, २४. गिरधर, २५. चिन्तामणि, २६. रसखान, २७. घनानन्द, २८. सुन्दर, २९. ब्रह्म, ३०. दूलह, ३१. नागरीदास, ३२. बृन्द, ३३. प्रसिद्धि, ३४. तुलसीदास, ३५. कवेन्द्र, ३६. चतुरबिहारी, ३७. हबो, ३८. पुराण, ३९. नरोत्तम, ४०. हरिवंश। इनमें से कुछ तो बहुत प्रसिद्ध हैं, जिनका उल्लेख इतिहास के सभी ग्रंथों में मिल जाता है, कुछ का उल्लेख 'मिश्र बन्धु-विनोद' में मिल जाता है, किन्तु निम्नलिखित कवियों का उल्लेख किसी भी इतिहास-ग्रंथ में नहीं मिलता—

१. कविनाथ, २. घनस्याम, ३. कृक ? ४. अलखतरंग, ५. निपट, ६. कासीराम, ७. पुरवी, ८. देवीदास, ९. ब्रह्म, १०. प्रसिद्धि, ११. चतुरबिहारी, १२. हबो और १३. पुराण।

इन कवियों के अतिरिक्त कुछ छन्द 'काहू कौ' करके उद्धृत किए गए हैं। इन कवियों के उद्धृत छन्दों से इनकी उत्कृष्ट काव्य-प्रतिभा पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ये उच्च कोटि के कवि थे, जो कि आज हमारे बीच से

लुप्त हो गए हैं। इनमें से कुछ के उद्धृत छन्द तो बहुत ही उत्कृष्ट हैं। उदाहरण के लिए नीचे कासीराम का उद्धृत छन्द दिया जा रहा है, जिसमें ठकुराइनि की एड़ियों की कोमलता और ललाई का वर्णन है—

मंद हू चपत इंद्रबधू के बरन होत,
प्यारी के चरन नवनीत हू तैं नरमैं।
सहज ललाई बरनी न जाइ कासीराम,
चुई सी परति अलि वाकी मति भरमैं।
एड़ी ठकुरायनि की नाइनि गहति जब,
ईंगुर सौ रंग दौरि आवै दरबर मैं।
दीनौं हैं कि दैवैं है बिचारैं सोचै बार-बार,
बाबरी सी ह्वै रही महावरी लै कर मैं ॥[1]

इसी प्रकार नीचे एक 'पुरवी' कवि का कवित्त दिया जा रहा है, जिसमें उपमान सब परम्परागत ही हैं, किन्तु उनके रखने का ढंग इतना सुन्दर है कि वे नये जान पड़ते हैं—

चौंथती चकोर चहुँ ओर मुख चँद जानि,
रहे बचि डरनि दसन दुति संपा के।
लीलि जाते बरही बिलोकि बैनी ब्याल गुण,
गुही पै न होती जो कुसम सर पंपा के।
कहै कवि पुरवी ढिग भोहैं न धनुष होती,
करि कैसे छाड़ते अधर बिंब झंपा के।
दाख के से झौंरा झलक जोति जोबन की,
भौंर चाटि जाते जौ न होती रंग चंपा के ॥[2]

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ८५, पद २४१।
२. दूषणोल्लास—पृ० ८८, पद २६३।

'काहु कौ' करके उद्धृत किये गए छन्दों में भी कुछ आकर्षक छन्द प्राप्त हैं। नीचे के छन्द में कवि चन्द्रमा के काले धब्बे पर अपना विचार दे रहा है—

अंक जो ससांक मैं है ताही तैं कलंक कहैं,
कोऊ कतौ पंक जलनिधि कौ प्रमानैं हैं।
कोऊ छयाया धरिनी कौ कोऊ पूतहरिनी कौ,
कोऊ गुर घरनी कौ दाग पहचानैं हैं।
कोऊ कहैं मंदिर की टक्कर लगी है ऐसी,
भोरे भारे लोग ये अयान तैं यौं मानैं हैं।
हम तौ सलौनौ रूप देखि याकी जननी नैं,
काजर कौ मुख पै दिठौना दीनौ जानैं हैं।।[१]

नीचे के सवैये में कवि एक बहुत ही सामान्य बात को सरसता से व्यक्त करता है—

परदेस तैं कोऊ न आयौ सखी उठि रोज मनोरथ कीजतु है।
निस नीद न आवत सेज विषैं तन कोटि उपायनि छीजतु है।
बढ़यौ प्रेम वियोग बिहाल हियैं असुवानि सौं यौं तन भीजतु है।
निज प्रीतम की उनहारि सखी ननदी मुख देखिकैं जीजतु हैं।।[२]

इसी प्रकार के अन्य अनेक कवियों के अनेक उत्कृष्ट छन्द इस ग्रन्थ में उद्धृत किए गए हैं।

(च) **परिशिष्ट-समीक्षा**—परिशिष्ट में, इस ग्रन्थ की प्रति के अन्त में दिए गए दो छोटे-छोटे ग्रंथों—'देसनि की भाषा' और 'जुगलरसमाधुरी' का पाठ (क) और (ख) करके दिया गया है।

---

१. दूषणोल्लास—पृ० ८६, पद २४६।
२. दूषणोल्लास—पृ० ११०, पद ३६२।

देसनि की भाषा—यह एक छोटी सी रचना है, किन्तु भाषा की दृष्टि से इसका बहुत महत्त्व है। इसमें पंजाब भाषा, ढुंढाहर भाषा, व्रजभाषा, रेखता और अष्टदेस की भाषा के छन्द दिए गए हैं। इनसे कवि के भाषाज्ञान पर बहुत प्रकाश पड़ता है। इसमें एक लोक छन्द 'ककुभ'[1] का भी प्रयोग हुआ है।

जुगलरस माधुरी—यह भी एक छोटी-सी रचना है, किन्तु काव्य-सौंदर्य की दृष्टि से यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। रोला छन्द में राधाकृष्ण के विहार और बृन्दावन का बहुत ही सरस वर्णन हुआ है। इसी रचना को देखकर मिश्र बन्धुओं ने गोविन्ददास के लिए लिखा कि "हम इन्हें दास कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।"[2] इस कृति में हम कवि की काव्य-प्रतिभा का स्वच्छन्द विकास पाते हैं। यहाँ कवि की काव्य-प्रतिभा के पर लग गए हैं और वह उन्मुक्त उड़ान भर रही है। इस रचना को देखकर बरबस नन्ददास की 'रास पंचाध्यायी' की याद आ जाती है। उसका इस पर पर्याप्त प्रभाव है। भाषा इसकी अत्यन्त सरस और मधुर है। सर्वत्र कवि की सहृदयता टपक रही है। प्रकृति-चित्रण बड़ा ही मनोरम है। कवि तमाम वृक्षों का नाम सरस भाषा में गिनाता चला जाता है। इसी प्रकार अनेक आभूषणों का भी वर्णन कवि निश्चिन्त होकर करता है। वर्णन के उपयुक्त ही 'रोला' छन्द भी चुना गया है। इस ग्रन्थ की सब से बड़ी विशेषता है, इसका आलंकारिक सौंदर्य और वह भी उत्प्रेक्षा का। कवि अनेक रूप-रंगों की उत्प्रेक्षाएँ प्रस्तुत करता है। अप्रस्तुतों की झड़ी-सी लग जाती है। पहली पंक्ति में साधारण वर्णन किया गया है और दूसरी पंक्ति में उत्प्रेक्षा द्वारा उसकी पुष्टि। कुछ नए-नए अप्रस्तुत भी यहाँ देखने को मिलते हैं। राधा के शरीर में कंकन, चुरी आदि आभूषण उसी प्रकार हैं, मानों माली कामदेव ने कल्पवृक्ष का आलबाल (घेरा) बना दिया हो। आलबाल अप्रस्तुत आभूषणों के लिए है और सुरतरु अंगों के लिए—

---

१. भूषणोल्लास—परिशिष्ट (क) पृ० १७६।

२. मिश्रबन्धु-विनोद—द्वितीय भाग, द्वितीय बार—पृ० ८४८।

कंकन पौंची चुरी चारु जे भूषन करके।
आलबाल किय मनहुँ मैन माली सुरतरु के।।[१]

इसी प्रकार 'राधा के गले के अन्दर जाती हुई पान की पीक के लिए' कवि अप्रस्तुत लाया है 'गुलेबन्द'।[२] यह कवि का मौलिक अप्रस्तुत है। एक स्थान पर मुख के ऊपर नाक के डोलते हुए मोतियों को चन्द्रमा की गोद में खेलते हुए 'चन्द्र-कुमार' कहा है।[३] उसी प्रकार कपोल के तिल के लिए 'सुधा के सरोवर का नील कमल'-अप्रस्तुत रूप में उल्लिखित है।[४] 'केसर के खौर पर लगे हुए गुलाबी विन्दु' को 'साँकल के ऊपर लगा हुआ लाल नग' कहा गया है।[५] 'पीठ के ऊपर डोलती हुई वेणी के ऊपर वस्त्र' के लिए अप्रस्तुत लाया गया है—'केले के ऊपर बैठी हुई भ्रमर पंक्ति के ऊपर काली घटा'।[६] 'नीले रंग के अँगूठे के ऊपर मुँदरी के नग' को 'नील कमल के ऊपर जुगुनू' अप्रस्तुत के द्वारा व्यक्त किया गया है।"[७] एक स्थान पर कहा गया है कि राधाकृष्ण के अद्‌भुत चरित्र उसी प्रकार एक मुँह से नहीं कहे जा सकते, जैसे तारा गण, सूर्य और चन्द्रमा मुट्‌ठी में नहीं आ सकते—

ऐसे चरित अनेक एक मुख कहे न जांहीं।
ज्यों तारागन चंद्र भान नहि मुठी समांहीं।।[८]

और अंत में कवि यह विचार व्यक्त करता है कि जितनी भी उपमाएँ राधा-कृष्ण के लिए दी जायँ, वे सब उनके लिए पूरी नहीं पड़तीं, जैसे झीने पट के

---

१. दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८४, पद ७७।
२. दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८५, पद ८२।
३. दूषणोल्लास—परिशिष्ट (ख), पृ० १८५, पद ८८।
४. वही—पृ० १८५, पद ८९।
५. वही—पृ० १८५, पद ९५।
६. वही—पृ० १८६, पद १००।
७. वही—पृ० १८७, पद १२१।
८. वही—पृ० १९०, पद १६५।

बीच से अमोल नग दिखाई ही देता है।[1] ऐसे सरस और सटीक अप्रस्तुत इस रचना में भरे पड़े हैं। कुल मिलाकर यह एक अत्यंत उच्चकोटि की रचना है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'जुगलरसमाधुरी' एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है।

पाठ-समस्या

प्रस्तुत ग्रंथ 'दूषणोल्लास' की अन्य किसी भी प्रति का उल्लेख अभी तक प्रकाशित किसी भी खोज-विवरण में नहीं मिला। मेरी मान्यता के अनुसार 'रसिकगोविंदानंदघन' की—जिसका कि यह ग्रंथ अंश है—दो-एक प्रतियों का उल्लेख खोज-विवरणों या इतिहास-ग्रंथों में पाया जाता है, किन्तु जैसा कि पहले कहा गया है, ये प्रतियाँ भी इस समय उपलब्ध नहीं हैं। 'दूषणोल्लास' की यह प्रति केवल हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के संग्रहालय में ही है।

प्रस्तुत संस्करण के पाठ का आधार एकमात्र सम्मेलन की यही एक प्रति है। अन्य प्रतियों के अभाव में पाठ-मिलान नहीं किया जा सका। यह प्रति भी उस मूल प्रति से मिला कर दुहराई हुई नहीं है, जिसकी वह प्रति-लिपि है, इसीलिए इसमें पाठ विकृतियाँ अधिक मात्रा में हैं। यों तो विकृतियों का होना सभी प्रतियों में स्वाभाविक ही है, किन्तु मूल प्रति से मिला कर शुद्ध की हुई प्रतियों में अपेक्षाकृत विकृतियाँ कम हुआ करती हैं।

प्रस्तुत सम्पादन में यथासम्भव इस प्रति के पाठ की रक्षा का प्रयत्न किया गया है, किन्तु अन्य प्रतियों के अभाव में पाठ मिलाया नहीं जा सका, अतएव बहुत-से स्थलों पर पाठ-संशोधन करना पड़ा है। पाठ-सुधार प्रतिलिपिकार की सामान्य लेखन-संबंधी प्रवृत्तियों के अध्ययन के आधार पर हुआ है। संशोधित पाठ के साथ ही जिज्ञासु पाठकों के हेतु पाद-टिप्पणी

१. वही—पृ० १९० पद १६९।

में मूल पाठ भी दे दिया गया है। पाठ-सुधार निम्नलिखित दशाओं में किया गया है—

(१) जब प्रति का पाठ निरर्थक अथवा सर्वथा असंगत ज्ञात हुआ है।

(२) जब उससे असाधारण गतिभंग या छंदभंग अथवा तुक-वैषम्य ज्ञात हुआ है।

(३) जब उसके कारण कृति की विचारधारा में अंतर्विरोध जान पड़ा है अथवा अस्तव्यस्तता ज्ञात हुई है।

(४) ऐसे पाठ जो लेखक को नहीं ज्ञात हुए हैं।

प्रस्तुत प्रति में अनेक प्रकार की बहुत सी विकृतियाँ भरी पड़ी हैं। इन स्थानों पर निम्नलिखित सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए पाठ-संशोधन किया गया है।

(१) दृष्टिभ्रम से प्रतिलिपिकार कभी एक अक्षर, मात्रा या चिह्न के स्थान पर दूसरा अक्षर, मात्रा या चिह्न लिख जाते हैं। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति में लगभग ८० बार हुई हैं। इस स्थिति में पाठ-सुधार हुआ है। ये विकृतियाँ दो प्रकार की हैं—

(क) एक मात्रा के स्थान पर दूसरी मात्रा। उदाहरणार्थ[1]—

कटि<कटु, आज<ओज, चामाकर<चामीकर, भात<भीत, तह-कील=तहकाल—आदि।

(ख) एक अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर। जैसे—

वाव्य<वाच्य, पदार्थ∠परार्थ, मेडका<मेढका, सस<सब, मधुरा<मथुरा, अंकीकार<अंगीकार, धृणा<घृणा, कर्ण<वर्ण, ऊलपति<कुलपति, कुकंद<मुकंद, देहि<देखि, दद्रूप<तद्रूप, गोगी<गोपी, कुलाब<गुलाब, मोमनाथ<सोमनाथ, डदोत<वुदोत, यीकौ<पीकौ, कुलावति<बुलावति, सुधग<सुभग—आदि।

---

१. उदाहरणों में पहले विकृत पाठ दिया गया है और बाद में शुद्ध पाठ।

(२) कभी वे अक्षरों या चिह्नों को परस्पर स्थानान्तरित कर देते हैं। इस प्रकार की विकृति को विपर्यय कहते हैं। इस दशा में भी पाठसुधार हुआ है। प्रस्तुत प्रति में इस प्रकार की विकृतियाँ लगभग १२ हैं और ये निम्नलिखित प्रकार की हैं——

(क) मात्रा-विपर्यय। जैसे——

कोमाल<कोमला, मह़ु<मुह।

(ख) वर्ण-विपर्यय। जैसे——

लद<दल, नमैहै<मनैहै, लतस<लसत, मैन से के<मैन के से, जल<लाज, जौनव<जौवन।

(ग) शब्द-विपर्यय। जैसे——

दाउ कोऊ<कोऊ दाउ, नयम में अनयम<अनयम में नयम, केच की सकी<केस की चकी।

(३) पुनरावृत्ति की दशा में भी सुधार हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति में ७ हैं। वे निम्नलिखित प्रकार की हैं——

(क) शब्दों की पुनरावृत्ति। जैसे——

दे देखि<देखि, सजनी सजनी<सजनी, सो सो<सो, जाइ जाइ जाइ<जाइ जाइ, उरसि उरसि<उरसि।

(ख) वाक्य या वाक्यांश की पुनरावृत्ति। जैसे——

'सौ मिलिकै रज रंजित ह्वै चलि आवतु है'——की पुनरावृत्ति पृष्ठ ६२ पर हुई है। इसी प्रकार——'कुंडल हलनि देखि'——पद की पुनरावृत्ति पृष्ठ २७३ पर हुई है।

(४) इसी प्रकार एक-दो स्थानों पर निरर्थक पाठ भी आए हैं, उन्हें भी संशोधित कर दिया गया है। उदाहरणार्थ——

ऊर<उर, छैव<छूवै।

(५) निरी असावधानी अथवा समरूपता के कारण कभी प्रतिलिपिकार मात्राओं, शब्दांशों, शब्दों या चरणों को छोड़ कर आगे बढ़ जाते हैं। इस प्रकार की विकृति को पाठ लोप कहते हैं। ऐसे स्थलों पर

भी यथासंभव संशोधन हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ प्रस्तुत प्रति में सब से अधिक लगभग १०० हैं। ये निम्नलिखित प्रकार की हैं—

(क) अनुनासिक 'न' का लोप। जैसे—

यौ<यौं. आनद<आनंद, सग<संग, सुगधि<सुगंधि, साति<सांति, अबुज<अंवुज, खड<खंड, बैकुठ<बैकुंठ आदि।

(ख) मात्रा-लोप। जैसे—

अस्थन<अस्थान, निर्हेत<निर्हेतु, नहतार्थ<निहितार्थ, गण<गुण, यनी<यानी, तथप<तथापि, माधरी<माधुरी, सेनपति<सेनापति, उत्प्रेक्ष<उत्प्रेक्षा, अनकले<अनुकूले,पन्य<पुन्य, म<मैं, छबील<छबीली, सवया<सवैया आदि।

(ग) अक्षरलोप—

आदि अक्षर लोप। जैसे—

श्लील<अश्लील, ने<पैने, नाइ<बनाइ, वज्ञा<अवज्ञा, हचरी<सहचरी आदि।

मध्य अक्षर लोप। जैसे—

प्रतप्रकर्स<प्रतत्प्रकर्स, रंक<रंचक, वृन्दान<बृन्दावन, अमंल<अमंगल, कजारी<कजरारी, प्रकामान<प्रकासमान, वन<बचन, तीरी<तीसरी, आय<आश्रय, उजल<उज्जल आदि।

अन्त अक्षर-लोप। जैसे—

उदं<उदंड, री<रीति, ठौ<ठौर,बरष<बरषत, की<कीजै, कार<कारज, कुरं<कुरंग, उ<उर, मधु<मधुप आदि।

(घ) शब्दों का लोप। उदाहरणार्थ—

कौ—पृ० ७४, कवित्त—पृ० ७४, को—पृ० ८४, सो—पृ० १६८ आदि।

(६) इसी प्रकार समरूपता या असावधानी के कारण कभी कभी प्रतिलिपिकार मात्राओं, अक्षरों, शब्दों या चरणों की वृद्धि कर जाते हैं। इस प्रकार की विकृति को पाठवृद्धि या पाठागम कहते हैं। इस दिशा में भी संशोधन हुआ है। इस प्रकार की विकृतियाँ भी

प्रस्तुत प्रति में पर्याप्त अर्थात् लगभग ६० हैं और ये निम्न प्रकार की हैं—

(क) अनुनासिकता की वृद्धि; जैसे—

रचनां<रचना, सुंगंध<सुगंध, डंरौ<डरौ, आदि।

(ख) मात्रा-वृद्धि। जैसे—

कहावैया<कहवैया, उज्जलाता<उज्जलता, भयंकार<भयंकर, वाक्रोक्ति<वक्रोक्ति, औंर<ओर, कार<कर, नि<न, निकसिति<निकसति, पीति<पीत, विकल्पा<विकल्प, केलिनि<केलनि, प्रीतिम<प्रीतम, दिनमानि<दिनमनि, आदि।

(ग) अक्षर वृद्धि।

आदि अक्षर वृद्धि—जैसे—

सकल<कल, सोनारन<रन, अहुती<हुती, कविन<बिन, अश्लाघ्य<श्लाघ्य, पुपहसति<हसति आदि।

मध्य अक्षर वृद्धि—जैसे—

मलाररन<मलारन, केसववोक्ति<केसवोक्ति, सासरता<सासता, उरसीर<उसीर, सवाहासि<सहाँसि आदि।

अन्त अक्षर वृद्धि। जैसे—

कुंचित<कुंचि, पुष्टनि<पुष्ट, अक्रमन<अक्रम, निस्म<निसा, नवीन<नवी, आनन<आन, सूक्ष्मा<सूक्ष्म, मधुप,<मधु आदि।

(घ) शब्दों की वृद्धि। जैसे—

सवैया दोहा<दोहा, बाचक उपमा लुप्तोपमा<बाचक लुप्तोपमा आदि।

उपर्युक्त पाठ संशोधनों के अतिरिक्त भी कहीं-कहीं कवि के अभिप्रेत पाठ का निश्चय नहीं हो पाया है और पाठ-विकृति ज्ञात हुई है। ऐसी स्थिति में मूल के 'भ्रष्ट' पाठ को ही एक संदेह-सूचक चिह्न (?) के साथ रहने दिया गया है।

इन समस्याओं के अतिरिक्त कुछ और समस्याएँ प्रस्तुत प्रति में हैं, जो निम्नलिखित हैं—

(१) एक स्थान पर हाशिए में एक छन्द दिया गया था, किन्तु पत्रों को बराबर करने के लिए काटते समय वह खण्डित हो गया। वहाँ पाठ 'खंडित' लिख कर छोड़ दिया गया है।

(२) इसी प्रकार कुछ छन्दों की पंक्तियों का लोप हो गया है और कुछ में पंक्ति-वृद्धि हो गई है। ऐसे स्थलों को भी संकेत कर के छोड़ दिया गया है।

(३) इस ग्रंथ में और बहुत से अन्य कवियों के भी उदाहरण दिए गए हैं। कहीं-कहीं ये उदाहरण भी खण्डित हैं। प्रसिद्ध कवियों के प्रसिद्ध छन्दों या पदों की पूर्ति उन ग्रंथों के प्रामाणिक संपादनों से कर दी गई है और संकेत कर दिया गया है। जहाँ पूर्ति नहीं की जा सकी है वहाँ 'खण्डित' लिख दिया गया है। कुछ छन्द 'काहू कौ' कर के उद्धृत किए गए हैं, ऐसे खण्डित छंदों की पूर्ति नहीं की जा सकी है। यही स्थिति कुछ दुर्लभ कवियों के छन्दों की और कुछ सुलभ कवियों के दुर्लभ छन्दों की है।

(४) 'गति', 'यति' तथा 'लय' सम्बन्धी दोषों को शोधनें के बजाय प्रश्नवाचक चिह्न (?) लगा कर छोड़ दिया गया है।

इनके अतिरिक्त प्रस्तुत संस्करण में कुछ अनुलेखन-संबंधी परिवर्तन भी किए गए हैं, जो निम्नलिखित हैं—

(१) प्राचीन अछरौटी का नवीनीकरण कर दिया गया है।

(२) पुराने प्रयोगों को अर्वाचीन रूप दे दिया गया है। जैसे—'ख' के लिए प्रस्तुत प्रति में सर्वत्र 'ष' आया है। इसी प्रकार 'ऐ' के 'अै' तथा 'ड़' और 'ढ़' के लिए क्रमशः 'ड' और 'ढ' आए हैं। इन रूपों को परिवर्तित कर दिया गया है।

(३) प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में कामा (,) लगाने की पद्धति न थी, किन्तु संपादित पाठ में आवश्यकतानुसार इसकी पूर्ति कर दी गई है।

(४) चन्द्र विंदु (ँ) के लिए इस प्रति में सर्वत्र अनुस्वार (ं) आया है तथा ऋ (ृ) के लिए र् (ॣ) आया है। यह परिवर्तन भी सम्पादन में कर दिया गया है।

(५) शब्दों के अकारान्त, उकारान्त, एकारान्त, ऐकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त रूपों की समस्याएँ भी प्रस्तुत प्रति में हैं। एक ही शब्द के कई रूप मिल जाते हैं। अनुनासिकता की दृष्टि से ये रूप दूने हो जाते हैं। जैसे—'ते', 'तै', 'तें', 'तैं', 'से' 'सै', 'सें' 'सैं' आदि। यह समस्या क्रिया रूपों के साथ भी है जैसे—'चले', 'चलें', 'कीन्हे', 'कीन्हें' आदि। पाठालोचक इन्हें ब्रजभाषा की हस्तलिखित प्रतियों की सामान्य प्रवृत्तियाँ मानते हैं।[१] अतएव इस स्थिति में वहीं पर परिवर्तन किया गया है, जहाँ गतिभंग, छंदभंग या तुक-वैषम्य उपस्थित हुआ है, अन्यथा मूल के पाठ को ही यथावत् ग्रहण किया गया है।

(६) इकारान्त की प्रवृत्ति कुछ अन्य शब्दों में भी मिलती है। जैसे—'व्यंग्य', नायिका' के स्थान पर 'विंग', 'नाइका'। बात यह है कि 'य'='अ'+'इ' का संयुक्त स्वर है। बोली में इसके उच्चारण में कुछ असुविधा होती है, इसलिए ब्रजभाषा में अधिकतर इकारान्त, रूप ही चलता है। अतः ऐसे रूपों में परिवर्तन न कर के मूल को ही सुरक्षित रक्खा गया है।

(७) प्रस्तुत प्रति में 'व' और 'ब' की भी प्रबल समस्या है। 'व' के लिए कहीं 'ब' और 'ब' के लिए कहीं 'व' आया है। इस दशा में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर दिया गया है।

(८) इसी प्रकार 'क्ष' के लिए कहीं 'क्ष' आया है कहीं 'छ', कहीं 'छि' और कहीं 'च्छ'। एकरूपता देने के लिए 'च्छ' और 'छि' रूप स्वीकार किए

---

१. सेनापति कृत 'कवित्त-रत्नाकर'—सम्पादक पं० उमाशंकर शुक्ल। चतुर्थ संस्करण १९४९, भूमिका-पृष्ठ ५८।(हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय, प्रयाग-प्रकाशन)।

गये हैं, क्योंकि इन्हीं रूपों का प्रयोग अधिक हुआ है और ये ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुरूप भी पड़ते हैं।

(९) प्रतिलिपिकार की यह भी प्रवृत्ति है कि बहुत-से स्थलों पर वह 'व' के लिए 'म' लिख गया है——जैसे गमार∠गवांर, बागमान∠बागवान। इस स्थिति में परिवर्तन न कर के मूल के रूप को ही सुरक्षित रखा गया है।

दूषणोल्लास—मूलपाठ

[illegible]

दूसनोल्लासनिरूपनं नाम ॥ जद्यपि गुणअ
लंकार रसके उपकार कहैं यातें निरूपन करि
वे जोग्य हैं ॥ तोहू दोषही प्रथम कहे हौं काहे तें
कि संपूर्ण कवि दोषही प्रथम कहत आए हैं ॥
दोषलक्षन ॥ मुख्यार्थ कौं न्यून करै सो दोष मु
ख्यार्थ रस है रसके आश्रय तें वाच्यहू मुख्यार्थ
है ॥ दोऊन के उपयोगित्व तें सब्दहू सब्दन के
बरनहू मुख्यार्थ हैं यातें मुख्यार्थ कहिवे में उन
सबन को बोध होत है ॥ दोष पांच विधि ॥ किते
कतो पददोष १ किते क पदांस दोष २ किते
क वाक्यदोष ३ किते क अर्थदोष ४ किते क
रसदोष ५ तिन में पददोष सोरै १६ श्रुतिक ह
टु १ संस्कारहत २ अप्रयुक्त ३ असमर्थ ४ निहि
तार्थ ५ निरर्थक ६ त्रिविधि अश्लील ७ अनुचिता अ
र्थ ८ अवाचक ९ ग्राम्य १० अप्रतीत ११ संदिग्ध १२ नेया

दूषणोल्लास के प्रथम पृष्ठ की पुष्पिका

(क) दोष वर्णन

वार्त्ता

जद्यपि गुण, अलंकार रस के उपकारक हैं यातैं निरूपन करिबे जोग्य है। तौ हू दोष ही प्रथम कहे हैं। काहे तैं कि सम्पूर्ण कवि दोष ही प्रथम कहत आए हैं।

दोष लच्छन

मुख्यार्थ कौं न्यून करै सो दोष। मुख्यार्थ रस है। रस के आश्रय तैं बाच्य हू मुख्यार्थ है। दोऊन के उपयोगित्व तैं सब्द हू सब्दन के बरन हू मुख्यार्थ हैं। यातैं मुख्यार्थ कहिवे मैं इन सबन को बोध होत है। दोष पाँच बिधि। कितेक तौ पद दोष।१। कितेक पदांस दोष।२। कितेक वाक्य दोष।३। कितेक अर्थ दोष।४। कितेक रस दोष।५। तिनमैं पद दोष सोरह।१६। श्रुति कटु।१। संस्कार हत।२। अप्रयुक्त।३। असमर्थ।४। निहितार्थ।५। निरर्थक।६। त्रिविधि अश्लील।७। अनुचितार्थ।८। अबाचक।९। ग्राम्य।१०। अप्रतीत।११। संदिग्ध।१२। नेयार्थ।१३। क्लिष्ट।१४। अबिमृष्टबिधेयांस।१५। विरुद्धमतिकृत।१६।

तत्र श्रुति कटु लच्छन—

कानन कौं करुवो लगै सो श्रुतिकटु। सुनिवे वारे कौं उद्वेग होइ इह दोष मैं कारन। इह दोष अनित्य है। साब्दिक श्रोता कौं उद्वेग नहीं यातैं।

कवित्त—

गोबिंद से पिय सौं न मान करि मानिनी तू,
मानि कह्यौ मेरो मान ऐसे मैं न चहियै।
लघु दिन दीह रैंनि मैंन की फिरति सेन,
ऐन हू लजात ए सँदेसे कौ लौं सहियै।

सीतल अकास भूमि भूषन बसन भौंन,
सीत भीत मीत सौं मिलाप करि रहिये।
लीजे परजंक पै निसंक अंक भुज भरि,
काठ से कठेठे पट्टु अैसे कैसैं कहिये ॥१॥

इहाँ 'काठ से कठेठे पट्टु' की ठौर 'करकस बोल बाल' यौं कह्यौ चहिए।

अथ संस्कार हत लच्छन—

सास्त्र बिरुद्ध सो संस्कार हत। इहाँ पाप की उत्पत्ति दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

कवित्त—

प्यारी तेरी अंग की सुबास के प्रकास मैं,
विलास हित भारी भौंर भीर मड़राति है।
सखिन समाज सुख साज माँझ सुंदरि तू,
देवता सौ बैठी पान खाति मुसिकाति है।
रूप के निकाई को बखान कवि करै कौंन,
देखिकै गुबिँद हू की मति ललचाति है।
चामीकर चपि जाति चाँदनी, हू छिपि जाति,
चंदहू लजाति चारु चाँदनी[1] लजाति है ॥२॥

इहाँ 'प्यारी तेरी अंग' 'देवता सौं' 'रूप के निकाई' 'चामीकर चपि जाति' 'चंद हू लजाति' इन ठौर 'प्यारी तेरे अंग' 'देवता सी' 'रूप की निकाई' 'चामीकर चपि जात' 'चंद हू लजात' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ अप्रयुक्त लच्छन—

जा पद मैं कबीस्वरन को प्रयोग नही सो अप्रयुक्त। संकेत निषेध दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। जमकादिक मैं अंगीकार करिबे तैं।

---

१. चावनी।

दोहा—

तुम सु 'खसम' सब जगत के सुनिये 'साध' समर्थ।
प्रभु प्रसाद मुहि धोइये ए ई मेरे गर्थ॥३॥

इहाँ 'खसम' 'साध' 'धोइये' 'गर्थ' की ठौर 'नाथ' 'टेर' 'दीजिये' 'अर्थ' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ असमर्थ लच्छन

प्रसिद्धार्थ रहित पद कहनौं सो असमर्थ जथा जोग्य अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

कवित्त—

चोवा चारु कंचुकी कुरंग सार अंगनि,
उमंग सौं सँभारि पुनि वार भार भारी कौं।
नीलमनि भूषन बनाइ कै नचाइ भौंहैं,
अँजन सौं आँजी आछैं आखैं अनियारी कौं।
रस वस रसिक गुविंद करिबे के हित,
सरस सिगाँरि नख सिख सुखकारी कौं।
छादि मुख नवल दुलारी कारी सारी सौं,
विहारी सौं मिलन प्यारी हनी फुलवारी कौं॥४॥

इहाँ 'छादि' 'हनी' इनकी ठौर 'ढाँपि', 'चली' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ निहितार्थ लच्छन

उभयार्थ वाचक कौं अप्रसिद्धार्थ बिषै कहनौं सो निहितार्थ। बिलंब करि अर्थ की प्राप्ति दोष मैं कारन, इह दोष अनित्य है जमकादिक मैं मानिबे तैं।

कवित्त—

सर सरितान माँझ अमल कमल भयो,
अंबुज अकास मैं प्रकास सरसायौ है।

भुवन मैं नलिन निकर छबि छायो पुनि,
जमुना नैं सँवर ही अंबर तनायौ है।
काम हू तैं अति अभिराम घनस्याँम बाम,
तेरे धाम मुदित मनावन कौं आयौ है।
ऐसे मैं गुविंद सौं न मान करि मानिनी तू,
मानि कह्यौ मान तेरें कैसैं मन भायौ है ॥५॥

इहाँ 'कमल' 'अंबुज' 'भुवन' 'संवर' इनकी ठौर 'उदक' 'चन्द्रमा' 'सलिल' 'पानिप' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ निरर्थक लच्छन

केवल पूर्णादिक प्रयोजन कौं पद कहनौं सो निरर्थक। प्रयोजनाभाव दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

सवैया—

जोवन रूप अनूप रु आनन मंजु हसी सरसी छबि छाई।
माँग भरी मुकतावलि सौं उर फूल सुमाल की सुन्दरताई।
चंदन चित्र किये सु चली जहँ गोबिंद आनँद कंद कन्हाई।
अंबर मैं अँग अँग की दीपति है मन मूरतिवंत जुन्हाई ॥६॥

इहाँ 'नूपुर' 'फूल सुमाल' 'किये' इनकी ठौर 'अनूपम' 'फूलनि माल' 'बनाइ' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ अश्लील

बुरो लगै सो अश्लील। 'लज्जा' 'अमंगल' 'ग्लानि' होनौ दोष मैं कारण इह दोष अनित्य है। भगिन्यादि पद देखिवे[1] है या तैं।

---

१. देखिये।

कवित्त—

जावक को लिंग लाल भाल पै लगाइ लाये,
प्रातकाल पाइ स्याम बदन दिखायो है।
रावरे सरीर की पवन इत आवै ताकौं,
गंध बंध श्री गुविंद कापै जात गायो है।
नील पट धारें पीत पट कौं बिसारें पुनि,
बिन गुन चारु हार हिये ढरि आयो है।
आनँद के कंद नदनंद व्रजचंद तुमैं,
निपट कपट ए तो कौनैं धौं सिखायो है ॥७॥

इहाँ 'लिंग' 'काल' 'स्याम' 'पवन' इनकी ठौर 'चिन्ह' 'समैं' 'निज' 'समीर' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ अनुचितार्थ

कहिबे जोग्य अर्थ को तिरस्कार कारी अर्थ सहित पद कहनौं सो अनुचितार्थ। बिबक्षित अर्थ को तिरस्कार दोष मैं कारण इह दोष नित्य है।

कवित्त—

लोक वेद कुल मरजाद पर पाहन ह्वै,
थिर रहै सो सपूत सुजस बढ़ाइहै।
पसु ह्वै कै होमैं अंग अंग जुद्ध अद्धर मैं,
सोई साँचो सूर सूर लोक कौं सिधाइहै।
सब सौं विरक्त अजगर ह्वै उज्यारी मैं,
इको सो पर्यौ रहै गुण गोविंद के गाइहै?
सोई सतपुरुष कहाइहै जगत माँहि,
अंत समै उत्तम परम पद पाइहै ॥८॥

इहाँ 'पाहन' 'पसु' 'अजगर' ए पद अनुचितार्थ हैं।

अथ अबाचक लच्छन

कहिबे जोग्य अर्थ कौं पद न कहै सो अबाचक। बिपरीतार्थ को बोध होनौं दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

दोहा—

आजु सुपरबत मैं रमैं जुवती नाइक संग।
लगी गहरि बेली नमैं नचत बिहंग उमंग॥९॥

इहाँ 'सुपर्बत' 'जुवती' 'नाइक' 'बेली' 'विहंग' इनकी ठौर 'गुबरधन' 'राधा' 'मोहन' 'कदली' 'मयूर' यौं कह्यौ चाहिये।

अथ ग्राम्य लच्छण

केवल लोक ही मैं स्थित होइ सो ग्राम्य। सुनिबे वारे कौं बिमुखता दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। बिदूषकादिक के वाव्य मैं अंगीकार करिबे तैं।

दोहा—

नन्द महर कौ छोहरा बन्यौ छबीलो छैल।
होरी के दिन पाय कै नित उठि रोकत गैल॥१०॥

इहाँ 'छोहरा' की ठौर 'लाड़िलो' कह्यो चाहिये।

अथ अप्रतीत लच्छन

सास्त्रांतर मैं देसांतर मैं प्रसिद्ध संकेत होइ सो अप्रतीत वा सास्त्र के वा देस के न जानिबे वारेन कौं। अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। वा सास्त्र के वा देस के जानिबे वारे तैं।

कवित्त—

कुंचि[1] म न मानत हौ ऊ डू ठ क ठानत हौ,
दारी रोकि ठाढ़े हौ उघारी गारी गाइ गाइ।

---

१. कुंचित।

भलो कियो पेर तुम उर मै अनेक भाँति,
ऊधम करो हो जू अरो हौ इत आइ आइ।
रसिक गुविंद वर सुंदर कहावौ पै,
मचावत हौ धूम लिये संग सखा चाइ चाइ।[1]
डफहि बजाइ मुसकाइ भृकुटी नचाय,
मेरे अग अंगन भरो हौ रंग धाइ धाइ॥११॥

इहाँ कुंचि म ऊ ड़ू दा री पे र उ[2] र इनकी ठौर त न क घ ने रा ह ना ग्रा म् कह्यौ चाहिए।

अथ संदिग्ध लच्छन

अनिर्द्धार पद कौं कहनौं सो संदिग्ध। कहिबे जोग्य अर्थ के निश्चय को अभाव दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। प्रकर्ण स्फूर्त्ति[3] करिकै निश्चय होत या तैं।

कवित्त—

कौरव[4] प्रचंड अरु पांडव उदंड[5] इनि,
भारथ कौ स्वारथ के हेत विस्तार्‌यो है।
आनि पाँच सातक महारथी अचानक ही,
मिलिकै सबन अभिमन्यु मारि डार्‌यो है।
श्री गुबिँद नर इह कौतुक निहार्‌यो तब,
भीम ह्वै कै भट्ट सरासन कौं सँभार्‌यो है।
जुद्ध मध्य क्रुद्ध कै बिरुद्धी दुरबुद्धिन के,
बद्धन कौं भाँति भाँति उद्ध रूप धार्‌यो है॥१२॥

इहाँ भीम उग्र पद मैं इह संदेह है। भीम भयंकर कै भीमसेन है। अरु उग्र उद्धत किधौं सिव।

---

१. चाय चाय। २. ऊ। ३. स्फुर्ति। ४. कैरव। ५. उदं।

अथ नेयार्थ[१] लच्छन

लच्छना करिकै अर्थ की प्राप्ति होइ जा पद मैं सो नेयार्थ। लच्छना ग्यान रहित अर्थ की अप्राप्ति दोष मैं कारन इह दोष अनित्य है। लच्छना ग्यान वारे के जानिबे तैं।

कवित्त—

रूप गुण जोबन सुबास को प्रकास तेरो,
गोबिंद को बसीकार नेह को निकेत है।
दास कियो दर्पन[२] खवास किये मोती मनि,
कुंदन कमीन कियो हियो भरि लेत है।
चेरो कियो चंपा बन चंदन कौं चाकर,
गुलाब कौं गुलाम कुंद कमल समेत है।
दासी करी दामिनी कौं चाँदनी कौं चेरी करी,
चन्द्रमा के चाय सौं चपेटा दिन देत है॥१३॥

इहाँ चंद्रमादिक के चपेटादिक संभवै नाँहीं तब लच्छना करिकै जानिये। इनको तिरस्कार करिबे जोग्य रूप है।

अथ क्लिष्ट लच्छन

व्यवधान करिकै अर्थ की प्राप्ति होई जा पद मैं सो क्लिष्ट। बिलम्ब करिकै अर्थ की प्राप्ति दोष मैं कारण इह दोष अनित्य है। जमकादिक मैं अंगीकार करिबे तैं।

दोहा—

जोति अत्रि के नेत्र तैं प्रगटी जासु प्रकास।
ता मधि सोभित तिन सदृस रघुवर जस सबिलास॥१४॥

इहाँ कुमुद सदृस रघुवर को जस इतने अर्थ को इतनो बड़ो पद कहनो अनुचित।

---

१. नेयार्थक। २. दर्प्पन।

अथ अबिमृष्टविधेयांस लच्छन

बिना बिचारें विधेय कौं कहनौं सो अबिमृष्टविधेयांस। विधेयार्थ की सीघ्र प्राप्ति नहीं इह दोष मैं कारन इह दोष नित्य है।

दोहा—

है अपराध जु यह पिया भोरे आए भौंन।
सखी थकी समुझाय कै, अरु समझावै कौंन॥१५॥

इहाँ 'इह अपराध है पिया, यौं कह्यौ चाहिये।

अथ विरुद्धमति कृत लच्छन

विरुद्ध बुद्धिकारी सब्द सो विरुद्धमतिकृत। बिरुद्ध अर्थ की प्राप्ति दोष मैं कारन। इह दोष नित्य है।

दोहा—

सिव जु अंबिका रमन तुम त्रिभुवन के सिरदार।
होउ सहाइ गुविंद के करो अनंद अपार॥१६॥

इहाँ अंबिका नाम माता को है या तैं भवानी कहनो उचित।

इति पद दोष संपूर्ण। अरु पदांस दोष को काम भाषा मैं बहुधा परै नही यातैं नही कहे हैं।

अथ वाक्य दोष वर्णन

अठारह।१८। प्रतिकूल वर्ण।१। बृत्तहत।२। नूनपद।३। अधिकपद।४। कथित पद।५। पतत्प्रकर्स[1]।६। समाप्त पुनरात।७। अर्द्धांतरैक बाचक।८। अभवनमत[2] योग।९। अनभिहित वाच्य[3] १०। अस्थानस्थ पद।११। अस्थानस्थ समास।१२। संकीर्ण।१३। गर्भित।१४। प्रसिद्धहत।१५। भग्नप्रक्रम।१६। अक्रम।१७। अमतपरार्थ।१८।

---

१. प्रतप्रकर्स। २. अभिनव मत। ३. वाव्य।

अथ प्रतिकूल वर्ण

और बृत्ति के वर्ण और बृत्ति मैं कहनो[1] सो प्रतिकूल वर्ण।

कवित्त—

बिज्जु छटा छुट्टति सुघट नट बट्टा सम,
संघट बलिष्ट घन घट्टान के ठाट को।
झिल्ली झंझनाट घनो घोर को घटघटाट,
जान्यो जात आहट बटोही को न बाट को।
नटवर गोबिंद के चित चटपटी तेरो,
अटपटो बिकट सुभाव ओट पाट को।
झटपट सटकि कपट हठ सठ छाड़ि,
ओटि पट प्रगट निपट कारे पाट को ॥१७॥

इहाँ शृंगार मैं कोमल बृत्ति चाहिये।

अथ बृत्तहत लच्छन

छंदोभंग सो बृत्तहत।

मात्रा बृत्तहत यथा—

दोहा—

सरस सुगंधित बार भा सिर पर भली प्रकार।
नव जोवन गुण रूप लखि भयो गुबिंद रिझवार॥१८॥

इहाँ 'भार' की ठौर 'भर' कह्यो चाहिये। अरु 'भयो' की जगह 'भय' चाहिये।

अथ वर्णवृत्तहत

छंद भुजंगी

विहारी गुविंदादि आनंदकारी।
व्रजाधीस भारी जगज्जालहारी।

---

१. कहने।

प्रिया संग लीने सबै सु:ष साजै।
सदा सर्बदाही सर्ब ऊपर विराजै॥१९॥

इहाँ चौथी तुक मैं 'ही' अधिक है।

अथ नून पद लच्छन

जापद बिना अर्थ बनै नहीं ता पद को अभाव सो नून पद।

सवैया—

गाइकै गारी बजाइ कै चंग करौंगी मनोरथ दाइ[1]? उपाय कैं।
पाइकै होरी गुविंद की सौं अबखेल रचाइहौं धूम मचाइ कैं।
चाय कें नाच नचाय कैं धाय भुजा भरिकैं रस रंग भिजाइ कैं।
जाइकै लेहुगी माल रसाल हौं गाल कैं लाल गुलाल लगाइ[2] कै॥२०॥

इहाँ 'गुपाल के गाल गुलाल लगाइ कैं' यौं कह्यौ चाहिए।

अथ अधिक पद लच्छन

जा पद के कहे बिना कछू बिगरै नही सो अधिक पद।

दोहा—

मुख ससि सौं उज्जल सखी घन से कारे बार।
दीपति दमकति कनक सम लखि गुविंद रिझवार॥२१॥

इहाँ उज्जल, कारे, दमकत ए पद अधिक हैं।

अथ कथित पद लच्छन

एक पद द्वै भेद कहनौं सो कथित पद।

दोहा—

तुव मुख मोहत मोमनहि या के ए ई टेक।
मुख पर वारौं[3] चंद्रमा अरु अरबिंद अनेक॥२२॥

इहाँ मुख कहिकैं[4] मुख कहनौ अनुचित।

---

१. दाइ। २. लगाय। ३. वारौं। ४. कहियै।

अथ पतत्प्रकर्ष[1] लच्छन

प्रथम उद्धत रचना[2] करिकैं कोमल करनौं सो पतत्प्रकर्ष।

छप्पय—

घेरि घेरि[3] घन सघन घोर निर्घोष सुनावत।
धुरवा धुकि धुकि धाइ धाइ धुंधरि सरसावत।
पवन झुकि झँकार झुंड झिंगर झिगारत। (?)
बिज्जु छटा छुट्टति घटान इमि गुबिंद उचारत।
धारानि धरत धाराधरन धरनि धूम इनि अधिक किय।
गोपाल लाल अवलंब बिन निरालंब अति विकल हिय॥२३॥

इहाँ अंत की तुक में 'सुंदर अधार गिरिधरन बिन निराधार धर कंत हिय' यौं[4] कह्यौ चाहिये।

अथ समाप्त पुनरात

वाक्य कौ समाप्त करिकै फिरि गृहन करनौं सो समाप्त पुनरात।

कवित्त—

देखी एक नागरि नबेली अलबेली आजु,
सुकबि गुबिंद करै कहा लौं उचारहै।
सुभग सिंगार मोती मालती के हार चारु,
सरस सुगंधमई बारन कौ भार है।
रूप कौ अँगार रस रंग कौ पसार सब,
सुषमा कौ सार मेरे हिय कौ अधार है।
दृग अरबिंद भ्रूअ दल[5] मंद हसनि,
अमंद मुख चंद सौ सुछंद सुकुवार है॥२४॥

इहाँ चौथी तुक तीसरी की ठौर उचित है।

---

१. प्रतत्पकर्ष। २. रचनां। ३. घोरि घोरि। ४. यौ। ५. लद।

अथ अर्द्धान्तरेक बाचक लच्छन

उत्तरार्द्ध[1] कौ पद पूर्बार्द्ध[2] मैं कहनौ सो अर्द्धांतरेक वाचक।

दोहा—

गोबिंद बक्षस्थल सहित कौस्तुभांक त्रिपुरारि[3]।
जटाजूट ससि सोभ जुत ए सब कौं सुखकारि॥२५॥

इहाँ त्रिपुरारि पद उत्तरार्द्ध[4] कौ पूर्बार्द्ध में कहनौ अनुचित।

अथ अभवन मत जोग लच्छन

कवि के हृदय के अर्थ कौं अछिर पुष्ट न[5] करै सो अभवनमत जोग।

सोरठा—

गज कौ भूषन जानि रतिपति नृप की जैतिश्री।
वा सुंदरि बिन प्राण व्याकुल अब सो कित गई॥२६॥

'वा बिन व्याकुल प्राण सो अब[6] उह सुन्दरि कित गई' यौं कह्यौ चहियै इहाँ।

अथ अनभिहित बाच्य लच्छन

नही भासै है कोई क बाच्य जा बिषें सो अनभिहित बाच्य।

सवैया—

तो मैं लगायौ निरंतर ही उर अंतर कौ अनुराग महारी।
तेरी यै प्रीति की रीति कौं चाहै प्रतीति इहै हिय मैं इन धारी।
तेरौ वियोग न होइ कबू इह चाहत चित्त विचित्र बिहारी।
अैसे गुबिंद अनंद के कंद कौ रंचक दोष न मानिये प्यारी॥२७।

इहाँ रंचक[7] दोष' की ठौर 'रंच हू दोष' कह्यौ चाहियै।

---

१. उत्रार्द्ध। २. पूर्वाद्ध। ३. त्रपुरारि। ४. उत्रार्द्ध। ५. नि।
६. 'अब'—शब्द छूट गया है। ७. रंक

अथ अस्थान[1] स्थपद लच्छन

जहाँ जो पद चहियै सो नही होइ सो अस्थानस्थपद।

दोहा—

सुन्दर जुत अंजन नयन पिय प्राणनि के प्राण।
लसनि हंसनि मुख मधुर मृदुरस बस कियौ सुजान।।२८।।

इहाँ 'सुन्दर अंजन जुत' कह्यौ चाहियै।

अथ अस्थानस्थ समास लच्छन

स्थान विषैं समास नही सो अस्थानस्थ समास।

सवैया—

तिय के हिय मध्य कौ मान अजौं कुच द्वै गढ़ मैं दृढ बास चहै।
इह जानि कें मानि धिकार उदै कौ बृथा गनि क्रुद्ध ह्वै लाल रहै।
अति उद्धत उद्दित दूरि महा बिसतारित अंग गुविंद कहै।
बिकसे कउ कैरव कोसनि तें कढ़ती अलि पाँति कपान[2] गहै।।२९।।

इहाँ[3] क्रोधी चंद्रमा की उक्ति में समास चहियै कबि की उक्ति मैं कहनौं अनुचित।

अथ संकीर्ण लच्छन

और वाक्य के पद और वाक्य मैं कहनौ सो संकीर्ण।

कवित्त—

आनंद के कंद नंदनंद सौ न कीजै हठ,
दीजै दरसन रति रंग के सुथान मैं।
जीजियै जु देखि देखि मुख प्यारौ प्रीतम कौ,
लीजियै सुजस सदा सकलजिहान मैं।

---

१. अस्थन। २. क्रपान। ३. इहा।

निठुर बचन क्यौँ हू कहियै न कान्ह जू सौँ,
सरस सुजान तान तो समान आन मैँ।
छाँड़ि[1] चंद सुंदरी गुबिँद व्रजचंद की सौँ,
देखि[2] मान सुन्दर अमंद आसमान मैँ ॥३०॥

इहाँ 'छाँड़ि मान देषि चंद' यौ कह्यौ चाहियै।

अथ गर्भित लच्छन

और वाक्य और बाक्य मैँ लिखै सो गर्भित।

दोहा—

पर अपकार ही मैँ सदा जे तत्पर अंग अंग।
तत्त्व बात तो सोँ कहौँ जिनकौ तजि दै संग ॥३१॥

इहाँ 'जिनकौ संग तजिकै' 'यह तत्व बात तो सौँ कहौँ' यौ कह्यौ चाहियै॥

अथ प्रसिद्धहत लच्छन

कबिन के संकेत रहित जामें पद होइ सो प्रसिद्धहत[3]।

कवित्त—

आनंद[4] के कंद नँदनंद सौँ मिलन काज,
सुन्दरि सलोँनी चली संग सखियान की।
सुभग सिँगार काछै अंग सुकुमार आछै,
कुटिल कटाछैँ भृकुटी की अखियान की।
कर अरविंद बर बदन अमंद चंद,
मंद मंद हसनि गुविँद सुखदानि की।
बलय गरज कटि किंकिनी धुकार पग,
नूपुर कौ सोर पुनि घोर विछियानि की ॥३२॥

इहाँ 'गरज' 'धुकार' 'सोर 'घोर' ए सब्द युद्ध के समैँ[5] प्रसिद्ध[6] हैं। इहाँ शृंगार में 'रणित' 'कुणित' 'नदित' 'धुनि' यौँ कह्यौ चाहियै।

---

१. छाड़ि। २. दे देखि। ३. प्रसिद्धिहत। ४. आनन्द। ५. समें। ६. प्रसिद्धि।

अथ भग्नप्रक्रम लच्छन

जहाँ प्रस्ताव क्रम नहीं सो भग्नप्रक्रम।

दोहा—

अस्त भयौ ससि जानि संग[1] अस्त ह्वै गई राति।
नाथ साथ तन तजति जे हैं[2] तिय उत्तम जाति॥३३॥

इहाँ 'चंद्रमा अस्त भयौ जानिकें राति हू अस्त भई' यों कह्यौ चाहियै 'अस्त ह्वै गई' यों कहनौ अनुचित।

अथ अक्रम[3] लच्छन

विद्यमान क्रम जहाँ नहीं सो अक्रम।

दोहा—

पद भुज कुच आनन नयन इनकें इह श्रृंगार।
अंजन नूपुर हीर अरु बीरा बाजू चार॥३४॥

कोऊ[4] या सौं क्रमहीन कहैं हैं।

केसव कौ छंद

जग की रचना कहौ कोनैं करी।
किहिँ राखन की नहीं पैज धरी
अति कोपि कैं कौंन सिँघार करै
हरि जू हर जू बिधि वृद्धि ररै॥३५॥

इहाँ 'बिधि जू हरि जू हर' यौं कह्यौ चाहियै।

अथ अमतपदार्थ[5] लच्छन

प्रकरण[6] विरुद्ध दूसरौ अर्थ जहाँ होइ सो अमतपदाथ।

छंद—

राम मनमथ सर दुसह ताड़ित हृदय निसिचर भली।
रुधिर चंदन गंध संजुत जीबितेश्वर ढिग चली॥३६॥

---

१. सग। २. हें। ३. अक्रमन। ४. कौऊ। ५. पदार्थ। ६. प्रकर्ण।

इहाँ दूसरौ अर्थ अभिसारिका कौ है। इहाँ[1] श्रृंगार कौ बोध बीभत्स मैं हौनौं अनुचित।

अथ अर्थ दोष तेईस २३

अपुष्टार्थ ।१। कष्टार्थ ।२। ब्यर्थ ।३। अपार्थ ।४। अब्याहत ।५। पुनरुक्ति ।६। दुःक्रम ।७। ग्राम्य ।८। संदिग्ध ।९। निर्हेतु ।१०। प्रसिद्धि विद्या विरुद्ध ।११। अनवीकृत[2] ।१२। सनियम ।१३। अनियम ।१४। विसेष ।१५। अविसेष ।१६। साकांक्ष ।१७। मुक्तपद ।१८। सहचर भिन्न ।१९। प्रकासित विरुद्ध ।२०। विधि अनुवाद अयुक्त ।२१। तिक्त पुनः स्वीकृत[3] ।२२। अश्लील ।२३।।

अथ अपुष्टार्थ लच्छन

बहुत हू पद जहाँ अर्थ कौं पुष्ट न करैं सो अपुष्टार्थ।

सवैया—

ऊँचौ अकास प्रकासित तास कौ मारग है अति दुर्गम भारी।
ता मधि आवत जात ही मैं तन के सुख की जिनि ग्रंथि बिसारी।
बात सुगंध करै जलजात हसत तिनैं मति मोहै हमारी ?
ऐसे प्रभू पर सिद्धि प्रभाकर जै जैं गुविंद कौं आनंदकारी[4] ।।३७।।
इहाँ जै जै अर्थ कौं ए पद पोषत नहीं।

अथ कष्टार्थ लच्छन

कवि के हृदय कौ अर्थ अछिरन तें प्राप्ति जहाँ नहीं होइ सो कष्टार्थ।

कवित्त—

सूरज गुविंद जल बूंद बरसावै घन,
वृंद मंद जल की न बुंद बरसावहीं।
नीर कौ निवास भासमान अंस ही मैं भान,
नंदिनी हू पानी जग पावन बहावहीं।

---

१. इह। २. अनविक्रत। ३. पुनःसीक। ४. आनवकारी।

ब्यास जू की उक्तिन कौ मानत न कौन श्रुति,
बचन सुनत श्रद्धा कौन कैं न आवती।
तदपि प्रचंड मारतंड की किरनि माँझ,
प्यासी मृग मुग्ध वधू रंचहू न पावही ॥३८॥

इहाँ मृगतृष्ना के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सों हैं।

काहू का दोहा

कूवा में कौ मेंढका,[1] कहै समुद[2] की बात।

इहाँ हंस प्रसंग के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सौ हैं।

काहू कौ सवैया

नृप मारि चली अपने पति पैं पति सर्प डस्यौ बिपता परिहौं।
बन माँझ गई बनिजारे लई पुनि बेचि दई गनिका घर हौं।
सुत संगम ई जरिबे कौं गई घन वर्षित बारि नदी तरिहौं।
महाराजकुमार मैं गूजरिहौं अब छाछि कौ सोच कहा करिहौं ॥३९॥

इहाँ कबि के हृदै के अर्थ की प्राप्ति कष्ट सौ है।

अथ व्यर्थ लच्छन

एक प्रबंध में अगिलौ पिछिलौ अर्थ जहाँ अनमिल होइ सो व्यर्थ।

केसव कौ छंद—

सव सत्रु सिघारहु जी जिनि मारहु सजि जोधा उमराउ।
बहु बसुमति लीजै मो मति कीजै दीजै अपनौ कोऊ दाउ।[3]
न रिपि तैरौ सब जग हेरौ तू कहियतु अति साधु।
कछु देहु मँगावहु[4] भूख भगावहु हौ पुनि धनी अगाधु ॥४०॥

इहाँ अगिले पिछिले अर्थ कौ बिरुद्ध है।

---

१. मेडका। २. समद। ३. दाउ कोऊ। ४. मगावहु।

अथ अपार्थ लच्छन

मतवारे कौ सौ, उनमत्त कौ सौ बचन होइ अरु अर्थ जाकौ समझियै नही सो अपार्थ।

केसव कौ दोहा—

पियैं लेत नरसिंघ कौं है अति सज्वर देह।
एरावत हरि भावतौ देख्यौ गजित मेह॥४१॥

पुनः काहू कौ दोहा—

साँईं तेरे कारनैं छाछि भुनाई भार।
अखियनि चक्की घसि गई सूतँगी कह द्वार॥४२॥

इहाँ अर्थ समझिवे में आवै नही, ऐसौ न कहियै।

अथ अव्याहत लच्छन

प्रथम जा बस्तु कौं निँदियै फिरि ताही कौ गृहन कीजै सो अव्याहत।

सवैया—

या जग मैं मधुरे बहु भाव सुभाव ही ते सबही सुखकारी।
नूतन चंद्रिका चंद कलादि बढ़ावत है मन कौं मुद भारी।
गोविंद आनंद कंद कहैं इन्है[1] चाहै न चित्त की बृत्ति हमारी।
मेरें तौ चंद्रिका चंद मुखी उह नैननि[2] कौं उत्साह है प्यारी॥४३॥

इहाँ प्रथम चन्द्रिकादिक कौं निँदिकै फिर ताही कौ उपमान करनौ[3] अनुचित।

अथ पुनरुक्ति लच्छन

एक अर्थ कौ संभ्रम द्वै बेर कहनौं सो पुनरुक्ति।

केसव कौ कवित्त

सोरठा—

मघवाघन आरूढ़ मेघ दसौ दिसि सोभियैं।
व्रज पर कोप्यौ मूढ़ इन्द्र आज अति सोभियैं॥४४॥

---

१. इनैं। २. नैंननि। ३. करनी।

इहाँ इंद्र मघवा घन कहिकैं फिरि इन्द्र मेघ कहनौं अनुचित।

पुनः—

दोहा—

दोष नही पुनरुक्ति कौ, एक कहत कविराज।
छाड़ि अर्थ पुनरुक्ति कौ सब्द कहौ इहि साज ॥४५॥

यथा—

लोचन पैने सरनि तें है कछु तोकहु सुद्धि।
तन बेध्यौ मन बेधियौ बेधी मन की वुद्धि ॥४६॥

ऐसें कहै तौ दोष नहीं।

अथ दुष्क्रम लच्छन

प्रसिद्ध[1] कर्म तें विरुद्ध होइ सो दुष्क्रम।[2]

कवित्त—

रसिक गुविंद सुनौ सुंदर सुनीत प्रीति,
रीति करै जासों प्रीति रीति सरसाइयै।
कबहू तौ डगर बगर हू में आइयै न
आइयै तौ सदाई हमारे घर छाइयै।
एक बेर इहि ओर देखि मुसिकैयै मुस-
कैयै न तो नीके भुज भरि उर लाइयै।
फूलन कौ चौसर या औसर मैं दीजै जू न,
चौसर तौ मोतिन कौ नौसर दिवाइयै ॥४७॥

इहाँ 'सदाई घर छाइवौ', 'भुज भरि उर लाइवौ', 'मोतिन कौ नौसर' यह पहले कह्यौ चाहियै।

अथ ग्राम्य लच्छन

रसिकनि कौ प्रिय अर्थ नही सो ग्राम्य।

---

१. प्रसिद्धि। २. दुक्रम।

सवैया—

सूरज तेज तपै तिहु लोक मैं आधी जरादवे ? की मतिठाटी।
सीतलता कहि कौन करै जह देखै दुखारहू की बुधि नाटी।
जेठ में जीवन जौ ई बनै जब होइ तिवारी बनाय कैं पाटी।
सीचिकैं कोरे घड़ान के नीर सौं द्वारनु दीजै जवासे की टाटी।।४८।।

इहाँ 'सींचि कै आछे गुलाब के आब सौं द्वारनि दीजै उसीर की टाटी" यौं कह्यौ चाहियै।

अथ संदिग्ध लच्छिन

प्रकरण[1] बिना अर्थ कौ निश्चय जहाँ नही सो संदिग्ध।

दोहा—

बड़े बिदित सब जगत मे अचल प्रकृति जिय जानि।
सहनसील सज्जन सुषद बिविध[2] गुणनि की खानि।।४९।।

या अर्थ में प्रसंसा पर्बतनि की, कि पंडितनि की इह सँदेह है ? अरु दोऊन में एक को प्रसंग कहियै[3] तो दोष नही। पुनः—

कपट निपट तजि दीजियै कीजै सज्जन संग।
जौ लौं[4] जग में जीजियै लीजै हिलमिलि रंग।।५०।।

इहाँ इह बचन श्रृंगार पै कि साँति पै इह संदेह है।

अथ निर्हेतु[5] लच्छिन

बिना कारन अर्थ कौ कहनौ सो निर्हेतु।

सवैया—

जंघनि बाजू भुजानि मैं नूपुर हार लता कटि सौं लपटाई।
वंदनी बाँधि गुदीवद ? ज्यौं सिर किंकिनी जाल की जोति जगाई।
खौरि लिलार महावर की कर पायनु अंजन दै सुखदाई।
ऐसौ सिँगार सिँगारि[6] सबै मृगभामिनि ज्यौं[7] गजगामिनि धाई।।५१।।

---

१. प्रकर्ण। २. बिविधि। ३. ककियै। ४. लौ। ५. निर्हेत। ६. सिगारि। ७. ज्यौ।

इहाँ कछू कारन कह्यौ नाही यातैं मोहन की मुरली सुनिकैं मृगभामिनि ज्यौं गजगामिनि धाई यौं कह्यौ चाहियै।

अथ प्रसिद्ध[1] विद्याविरोध लच्छन

प्रसिद्ध विद्या तें विरुद्ध जो अर्थ सो प्रसिद्ध विद्या विरुद्ध। सो द्वि विधि। कवि संप्रदाय विरुद्ध, सास्त्र विरुद्ध।

कवि सम्प्रदाय विरुद्ध[2]

दोहा—

अधर मधुर माखन सदृस कपि से चंचल नैंन।
उदित[3] मुदति मुख रवि सदृस सिखी सदृस मृदुबैन ॥५२॥

कवि लोग ऐसैं कहते आए नहीं।[4] यातें 'माखन' 'कपि' 'रवि' 'सिखी' 'सदृस' की ठौर 'अमृत' 'मृग' 'ससि' 'कोकिल' से कह्यौ चाहियै।

सास्त्र विरुद्ध

दोहा—

सुनि लछिमन या जग्य तें बेगि भजहु इहि बार।
परसराम आयौ बली लीयैं कर तरवार ॥५३॥

इहाँ परसराम की तरवारि सास्त्र में प्रसिद्ध नहीं। यातैं 'लीनै हाथ कुठार' यौ कह्यौ चाहियै।

अथ अनबीकृत लच्छन

अनेक पदन कौ एकही भावार्थ होइ नवीन भाव लखियै नहीं सो अनवीकृत।

कुलपति कौ सवैया—

रूप की रासि भयौ तौ कहा औ कहा भयौ जौ गुण सागर गाढ्यौ।
बन्धु अनेक भये तौ कहा रु कहा भयौ जौ अरि कौ उर छाढ्यौ।

---

१. प्रसिद्धि। २. बिरुध। ३. उदति। ४. नहीं।

हाथी तुरंग भये तौ कहा रु कहा भयौ जौ अति दान सराह्यौ।
लाखनि साज भये तौ कहा रु कहा भयौ जौ जग नेह निवाह्यौ ॥५४॥

इहाँ वांछित अर्थ अरु दृष्टांत पोष्यौ नहीं यातैं 'हरि सौं जंग जौ नही नेह निवाह्यौ' यौं कह्यौ चाहियै।

नयम में अनयम ॥ अनयन में नयम ॥ बिसेष में अबिसेष ॥ इनके लछन नाम ही में हैं।

अथ नयम में अनयम

छंद अरिल्ल—

कथा श्रवन गुण कथन सुमर्ण सु मानियैं।
पद सेवा अर्चना वन्दना जानियैं।
दास्य सख्य आतमा निवेदन मानियैं।
हरि हरि भक्ति गुविंद सदा सुख दानियैं ॥५५॥

इहाँ श्रवन कीर्त्तनादि नयम करिकैं फिरि अनयम कहनौ अनुचित।

अथ अनयम में नयम[1]

दोहा—

अंग अंग सब सुषमा सरस रस बस कियौ गुविंद।
हाव भाव लावण्य गुण जोवन रूप अमंद ॥५६॥

इहाँ अनयम 'सब[2] सुषमा' कहिकैं फेरि हाव भावादिक नयम कहनौ अनुचित।

अथ विसेष मैं अबिसेष

दोहा—

सघन कुंज गुंजत मधुप उपमा कौं नहि आन।
बृंदावन सुंदर सकल रसिकनि जीवन प्रान ॥५७॥

इहाँ 'सघन कुंज मधुप गुंजत' इह विसेष कहिकैं अरु 'बृंदाबन[3] सुन्दर सकल' यह अविशेष कहनौं अनुचित।

---

१. नयम में अनयम। २. सस। ३. बृन्दान।

अथ अबिसेष में बिसेष

दोहा—

मथुरा मंडल अति बन्यौ सब सुखमानि समेत।
सुघट घाट बिसराँति मम चित्त चुराँऐं लेत ॥५८॥

इहाँ 'मथुरा[1] मंडल सब सुखमान समेत' यह अविसेष कहिकै फिरि 'सुघट घाट बिसराँति' यह बिसेष कहनौ अनुचित।

अथ साकांक्ष लच्छन

कोईक अर्थ और अर्थ की चाह करै जहाँ सों साकांक्ष।

सवैया—

माते मतंग सौ सोभित गौन सु केहरि सी कटि सुन्दर सोहै।
कोकिल से कल[2] बैंन मनोहर[3] नैनन कौ उपमाँ कवि टोहै।
जोवन रूप की जोति जगामग देखन मोंहन कौ मन मोहै।
आनंद[4] कंद गुविंद की सौं तिय तोसी तिया तिहूँ लोक में कोहै ॥५९॥

इहाँ 'माते मतंग के गौन सौं गौंन सु केहरि की कटि सी कटि सोहै'। 'कोकिल बैंन से बैंन'[5] इतने अर्थ की चाह और है।

अथ मुक्तिपद लच्छन

ठौर तजिकै अर्थ कौं पूर्ण कीजै सो मुक्तिपद।

दोहा—

पिय के हिय में बिरह की ज्वाला कियौ प्रबेस।
तह हरियै चलि ससि मुखी मुख ससि सदृस सुदेस ॥६०॥

इहाँ ससिमुखी कहिकें अर्थ पूर्ण कीनौं फिरि मुख सदृस सुदेस कहिकें पूर्ण करनौ अनुचित।

अथ सहचर भिन्न लच्छन

उत्तम के संग अधम लिखियै सो सहचर भिन्न।

---

१. मघुरा। २. सकल। ३. मनौंहर। ४. आनद। ५. बेन।

सोमनाथ कौ दोहा—

विद्या ही ते बड़त है द्विज आदर अभिराम।
ज्यौं[1] लोहे के गढ़न कौं सो लुहार कौ काम ॥६१॥

इहाँ ब्राह्मन के संग लुहार की सहचरता नही यातै जैसें छत्री कौं सदा जुद्ध करनौ यौं कह्यौ चाहियै।

अथ प्रकासित विरुद्ध लच्छन

बिरुद्ध अर्थ कौ प्रकास करै सो प्रकासित बिरुद्ध।

दोहा—

नील बसन तन मरगजी सुगंधि[2] अटपटे बैंन[3]।
सकुचौहै भौंहै सखी अति अलसौंहैं नैंन ॥६२॥

इह नाइक कौ वर्णन है अरु नाइका कौ सौ प्रकासै है सो अनुचित।

अथ विधि अनुवाद अयुक्त लच्छन

विधि अनुबाद करिकें रहित सो अनुवाद अयुक्त।

दोहा[4]—

कोक कलान प्रवीन तुम जुवतिन के रिझवार।
मोहि वेगही कीजियै भवसागर के पार ॥६३॥

इहाँ भवसागर के पार करने की विधि के या विषै[5] बिसेषन नाहीं। यातें 'प्रभु पतित पावन प्रगट करुणासिंधु उदार' कह्यौ चाहियै।

अथ तिक्त पुनः स्वीकृत लच्छन

अर्थ कौं पहलैं तजिकै पुनि ग्रहन करनौ सो तिक्त पुनः स्वीकृत।

---

१. ज्यों। २. सुगधि। ३. बेन। ४. 'दोहा' के पहले 'सवैया' शब्द अधिक है। ५. विषें।

कवित्त—

जुद्ध मध्य क्रुद्ध कै विरुद्धी दुरबुद्धिन के,
मंदिर दुरद्दह ते ऐसी असिनारी है।
ताही अनुरागिन सों मन की लगाई लाग,
और कौ न गनै कछू मोहनी सी डारी है।
यह जिय जानि तात बात भलीभाँति[1] मोहि,
मृत्युन कौ दै चुक्यौ उदार अति भारी है।
कहै कवि गोविंद महीपति दिलीप यों,
जतावन कौ सिंधु के समीप श्री सिधारी है।।६४।।

'इह जिय जानि तात' इहाँ ही अर्थ[2] कौं[3] समाप्त करिकै तज्यौ फिरि 'यौं जतावन कौ सिंधु के समीप श्री सिधारी है' इह अर्थ अंगीकार[3] करनौ[4] अनुचित।

अश्लील लछिन

अर्थ में लज्जा अमंगल ग्लानि प्रकट करै सो अश्लील।

कुलपति कौ कवित्त—

छैल से फिरत छेद भेदन के भेद लेत,
खेद पायें लालन वदन विलखायगौ।
बासुरी के वाही ठौर अधर लगाएँ रहौ,
जानियत ताही भाँति मदन बताइगौ।
मार के सरूप यातें मारिवो वसत मन,
मार परे मोहन जू मन सिथिलाइगौ।
अैड़े अैड़े डोलत हौ ठाढ़े किये अंग सब,
देखें अब कैसें यह हठ ठहराइगौ।।६५।।

---

१. भाति। २. अथं। ३. अंकीकार। ४. कारणौ—यह राजस्थानी प्रयोग है, इस प्रकार के और भी बहुत से प्रयोग आए हैं, कारण यह है कि कवि राजस्थान का है।

इह अर्थ सखी उक्ति में लज्जा कौ प्रगट करैहै, पुरुष की उक्ति होइ तौ दोष नहीं।

अथ अमंगल[1] अश्लील[2]

चलियै सगुण समायकैं पिय परदेस न चित्त।
उत तैं फिरि इत देखिहौं तब सुख पैहौं कित्त[3]॥६६॥

इहाँ अमंगल प्रकट ही है।

अथ ग्लानि अश्लील

दोहा—

उर पर नख छत रुधिर मनु है कुंकुम कौ रंग।
श्रम जलकन पौछौ पिया लिविलिबात है अंग॥६७॥

इहाँ ग्लानि प्रकट ही है।

अब इन दोषन कौ समाधान[4] प्रकार कहियतु है।

जहाँ कर्णभर्णादिक कर्णादिकनि की स्थिति[5] की प्रतीति कौं कहियै तहाँ पुनरुक्ति दोष नही।

गीतका छंद—

जीती सबै भूषननि की कर्णावतंसनि सोभ।
या तैं श्रवन कुंडल निरखि पिय मन लग्यौ अतिलोभ॥६८॥

इहाँ कर्णावतंस श्रवण कुंडल पहरैं। लसत के लिए नातर ? घर हूँ मैं धरे गहनेन की प्रतीति होइ या भाति समाधान[6] कीजै जौ कहूँ आइ परै तौ बड़े कवि की उक्ति मैं परन्तु आपु जानिकै न धरियै।

दोहा—

हियै धरै फूली फिरै पाय पीय के प्यार।
फूलमाल की जेब पर वारति मुऽक्ताहार॥६९॥

---

१. अमंल। २. श्लील। ३. कत्त। ४. सवाधान। ५. स्थित। ६. समाधाम।

यद्यपि माल कहैं ते फूलनि ही की अरु हार कहैं ते मुक्तानि ही कौ यह प्रतीति प्रसिद्धि[1] है। तथापि अति प्रसिद्ध फूल की अकेले मुक्तानि ही कौ इह कहिबे कौं फूलमाल मुक्ताहार कहे।

अरु अति प्रसिद्धिअर्थ[2] में निर्हेतु[3] दोष नाही

सवैया—

चंद के मध्य जबै छबि होति जबै कछू रीति[4] अनौखी दिखावै।
ह्वै अरबिंद के मध्य जबै छबि चंद कौ मंद करै औ लजावै।
प्यारी के आनन में छबि होति जबै कछू रीति अनोखी दिखावै।
चंद हू कौ अरविंद कौ आली गुविंद की सौंह अनंद बढ़ावै।।७०।।

इहा चंद्रमा की हीनता दिन मैं, कमलन कौ संकोच रात्र मैं यह अर्थ एक लोक मैं प्रसिद्धि है यातें इहाँ निर्हेतु[5] दोष नहीं। **पराई कहनावति के कहिवे मैं श्रुति कटु[6] आदि दोष नहीं।**

कवित्त—

धवल महल के अटा पै घटा देखैं दोऊ,
नीके तान मान लै मलारन[7] कौं गाइ गाइ।
धुम कटधि कटधि लाग धि धि कट धुनि,
मधुर मृदंग बजैं सखी चित चाइ चाइ।
सुनि सुनि आये धौरे धूँधरे धुधारे भारे,
धूमरे सघन घन श्री गुविंद छाइ छाइ।
कैकी नचैं कूकि कूकि त्यौं त्यौं धुकि धूकि धूकि,
धरा पै धरत धार धाराधर धाइ धाइ।।७१।।

इहाँ 'धुमकटधि'[8] पद श्रुतिकटु[9] हैं पर[10] मृदंग की कहनि है यातें दोष नही ऐसें और ठौर हू जानि लीजै।

---

१. प्रसिद्धि। २. प्रसिधिर्थ। ३. निर्हेत। ४. री। ५. निर्हेत। ६. कटि। ७. मलाररन। ८. कटादि। ९. कट। १०. परि।

कहू कविता बक्ता श्रोता अर्थबिग प्रस्ताव की महिमा[1] करिकैं दोष हू गुण हैं। कहूँ गुण हूँ दोष होत हैं कहूँ गुण गुन हीं दोष दोष ही।

कुलपति कौ दोहा—

जहाँ कहवैया[2] और गूढ़ कौ श्रोता तैसो होइ।
अधिक श्लेष जुत गुण तहाँ दोष कहे नहि कोइ॥७२॥

और रौद्र वीर वीभत्स बिगि ते कहै तहां कष्टार्थ दोष नहीं।

कवित्त—

प्रगट प्रचंड पुहै? आतनु मै रुंड मुंड,
कंकन कुणित जंघ हाड़नि धरत हैं।
और घनेंघोर भूषननि के जु धोक की,
घमंडिनि गुविंद की सौं अभ्रमैं भरत हैं।
गिल्लै औ उगिल्लैं भल्लैं सघन रुधिर पंक,
उर उच्च कुच्च भार भरिवत करत हैं।
भीम भेष क्रुद्ध कै कै उद्धत गरव्वि गज्जि,
भारत की भूमि मध्य भाजत फिरत है॥७३॥

इहाँ भाजते भूत फिरत है इह अर्थ कष्ट सौं प्राप्ति होत है।

परिगुण है नीरस काव्य मैं दोष दोष ही गुन गुन ही।

कवित्त—

रोगनि ते फूटि फूटि फोरे फटि फटि घाव,
रटि रटि रहे रुधि रुधिर चुचाय कै।
हाथ पाद नासिकादि अंग गिरि गिरि ऐसैं,
नरन सरीर दिव्य देत हैं रसाय कै।
विघन विनासन हुलासनि प्रकासनि कौ,
द्विज दै अरघ तिन्है लेत हैं सुभाय कै।
ऐसे मारतंड कौ प्रचंड कर मंडल
अखंड करौ आनंद[3] गुविंद की सहाय कै॥७४॥

---

१. महमा। २. कहावैया। ३. आनद।

ऐसी ठौर गुन गुण ही दोष दोष ही।

श्लेष चित्र जमक मैं अप्रयुक्त[1] अरुनिहत्तार्थ[2] दोष नही। लज्जा श्लील कामशास्त्र मै दोष नहीं।

दोहा—

दंड बड़ौ मुदरी तनक बनि बैठें छबि होइ।
तब हिय मैंठि चलाइयै मुख न कहि सकै सोइ॥७५॥

इहाँ लज्जा प्रगट ही है।

अरु क्रोधी को, विरही को उक्ति में अमंगल दोष नहीं।

कुलपति कौ दोहा—

इहाँ न सो जिनसौं सबै विरही करैं पुकार।
कछुक मरे मारे कछू विकल[3] किये इनि मार॥४०॥

इहाँ अमंगल प्रगट ही है। ऐसे में दोष नहीं।

ग्लानि श्लील सांति[4] रस से दोष नहीं।

दोहा—

उदर बिदारन भेद कौ तिय ब्रण ताहि समान।
तामें सठ[5] नर करत रति तजि गुविंद भगवान॥४१॥

इहाँ ग्लानि गुण है।

व्याज स्तुति मैं संदिग्ध गुण है।

सेनापति कौ कवित्त—

नाँही नाही करैं थोरौ मागैं सब दैन कहै,
मंगन कौं देखै पट देत बार बार हैं।
तिनकै मिलैं ते भली प्रापति की घरी होति,
सदा हरिजन मन भाए निरधार हैं।

---

१. अप्रयुक्ति। २. नहतार्थ। ३. विकिल। ४. साति। ५. सठि।

भोगी ह्वै रहत बिलसत अवनी के मध्य,
कन कन जोरैं दान पाट परिवार है।
सेनापति बचन की रचना बनाई जामें,
दाता और सूम दोऊ कीने एक सार है।।७६।।

प्रतिपाद्य ज्ञान प्रतिपादकौ होइ तहाँ अप्रतीत[1] दोष नहीं।

सवैया—

भीतर दिष्टि दै पुत्र बिचित्र महा इक कौतुक[2] तोहि दिखावत।
सूचिका अग्रछ कूपनि पै पुर ता मधि गंग प्रवाह सुहावत।
जाके सनान तैं पान तैं ध्यान तैं बाहिर के जे बिकार नसावत।
ऐसो है ब्रह्म अनंद गुविंद गिरा गुर की सौं सबै कोऊ पावत ।।७७।।

इहाँ घट मैं एक कुंडलिनि सर्पिनी के आकार है। ताकी जोग सास्त्र में संज्ञा है। ताके अग्रवर्ती छ चक्र हैं। मूलाधार-१, स्वाधिष्ठान-२, मणिपूर-३, अनाहत-४, विसुद्ध-५, आज्ञा-६ ।। इनकी कूप संज्ञा है। इह प्रतिपाद ग्यान प्रतिपादक कौ हैं यातैं दोष नही है।

ग्रामी और विदूषकादि की उक्ति[3] मैं ग्राम्य गुण है।

सवैया—

नीकी जुही की लतानि की डारनि की अवली लवली मन मोहै।
फूलनि गुच्छ[4] लगे अति स्वच्छ[5] सुदेखि लुभ्याय नहीं अस को है।
चामल राधे 'खिलैं' से खिलैं अरु गोविंद को उपमा कवि टोहै।
उज्जलता[6] पुन ऐसी लसै पट बाँध्यौ दही जनु भैंसि[7] कौ सौहै ।।७८।।

दोहा—

माखन कौ सौ पिंड यह चंद बिंब है चारु।
चहूँ ओर किरणैं परति मनौ दूध की धार।।७९।।

कहूँ वक्ता के हर्ष की अधिकाई की कहनि मैं न्यून पद गुण है।

---

१. अप्रतीति। २. कौतिक। ३. युक्ति। ४. गुछ। ५. स्वछ। ६. उज्जलाता। ७. भैंसि।

सवैया—

अति गाढ़े अलिंगन तें जु उरोज दबै तन लीनै रुमांचमई।
हित की सरसानि तैं बासनि तू बकौ न्यारौ भयौ अस नारि नई।
परसै जिनि गोविंद यो कहतो सु भुजा भरि अंक निसंक लई।
फिरि लीन भई कि बिलीन भई कि धौ सोइ गई कि धौं सोइ गई ॥८०॥

'किधौं कहाँ गई।' इह पद नून है।

अति निश्चे की उक्ति मैं अधिक पद गुण है।

सवैया—

कितने दुर अर्थ गुविंद की सौं मन मैं कोऊ क्यों हूँ न आवत है।
इहि भाँति के दुःसह अर्थनि धृष्ट ह्वै दुष्ट सपुष्ट बखानत है।
जिनके उर में न गड़े कि गड़ै इतनी निठुराई जे ठानत हैं।
हम यों जिय में नही जानत हैं पुनि यौं निहचै[1] जिय जानत है ॥८१॥

यहाँ चौथी तुक मैं अधिक पद प्रगट ही है।

कुलपति कौ दोहा—

तुम जानत दुरिकैं किये हम सब चित के चाय।
नहि नहि जानत जानिबैं जानत सबै सुभाय ॥८२॥

इहाँ 'नहि नहि जानत' ए पद अधिक है।

अक्लाटानुप्रास मैं, अर्थान्तर संक्रमित[2] बाच्य ध्वनि मैं, विहितानुबाद[3] में, बीपसा मै, कथित पद गुण[4] है।

दोहा—

उदित समैं दिनकर अरुण अरुण अस्त ही जानि।
संपति बिपति बड़ेनि की सदा एक सी बानि ॥८३॥

---

१. नहचै। २. संक्रमत। ३. विहतानुबाद। ४. गण।

अर्थान्तर संक्रमित बाच्य ध्वनि

दोहा—

सजन सराहत नाहि तौ गुन गुन कबहु न मान।
परसत भान बिहान कर कमल कमल जलजानि ॥८४॥
बिना पियारे प्यार बिन रूप रूप नहि कोइ।
जब पावै पून्यौ निसा[1] चंद चंद तब होइ ॥८५॥

अथ विहितानुबाद

दोहा—

इन्द्री जीतैं विनय ह्वै विनय भए गुण होइ।
गुण तैं सब जग हित करै हित तें धन जिय जोइ ॥८६॥

अथ वीपसाकृष्टकौ

कवित्त—

कोटि कोटि कामरूप वारि वारि डारौं जा पै,
देखि देखि ऐसी छबि मोहि मोहि जात नैंन।
भाँति भाँति लोचन कौं ढाँपि ढाँपि जीजियत,
काँपि काँपि उठै चित चाँपि चाँपि चूरि चैंन।
टेरि टेरि आरति सौं फेरि फेरि जाचति हौं
हेरि हेरि मेरे प्राण घेरि घेरि रह्यौ मैंन।
एक एक राति जाति लाख लाख राति सम,
आव आव प्यारे पीव भाखि भाखि हारे बैंन ॥८७॥

क्रोधी की उक्ति में समाप्त पुनरातपतत्प्रकर्ष दोष नहीं।

कवित्त—

संभु कौ धराय धर्‌यौ धन्व धुक्यौ काहू पै न,
खंडे कौ घुमंड्यौ धोक[2] क्रुद्ध भो घनेरौं[3] हैं।

---

१. निस्म। २. घोक। ३. धनेरौ।

ताकौं हौं पठायौ बायौ आयौ भृगु नंद जुद्ध[1]
उद्धत कै करौं विरुद्धीन कैं अधेरौ है।
भारी भुज भीमनि मैं कठिन कुठार धरैं,
धार अग्र अथित गरे कौं आज तेरौ है।
जातैं खंड परस कहावतु जगत माझ,
गरबी ज्यौ गोविद गिरीस गुर मेरौ है ॥८८॥

इहाँ चौथी तुक मैं समाप्त पुनरात है। अरु पतत्प्रकर्ष प्रगट ही है। ऐसैं ही चमत्कार[2] कौं बढ़ावै[3] तहाँ गुण है। न बढ़ावै तहाँ उदासीन हैं। अरु असमर्थ अनुचितार्थ निरर्थक अबाचक ए नित्य दोष हैं। यातैं इनके बदले की ठौर नहीं।

अथ साक्षात रस दोष वर्णन वार्त्ता

विभचारी भाव कौ रस कौ, स्थाई भाव कौ सब्द बाच्यता। अनुभाव, विभावन की कष्ट कल्पना। प्रतिकूल विभाव, अनुभाव गृहन करनौं पुनः पुनः दीप्ति। अकांड बिषै कथन।[4] रस खंडन प्रधान अंग कौ विस्मरण। अंगी कौ अननुसंधान। अनंग कौ अविधान। प्रकृति विपर्जय। **अर्थानौचित्य**[5]

अथ बिभचारी भाव कौ सब्द वाच्यता।

सवैया—

देखैं सिवानन लज्जित है करुणा गज खाल बिलोकति कारी।
गंग निहारै असूया कपाल की माल तैं बीन न जाति उचारी।
ब्याल लखै तृसिता है पयूष श्रवै ससि देखत बिस्मित भारी।
ऐसी सिवा की सुदृष्टि[6] सबै बिधि गोविद कौं अति आनंदकारी[7] ॥८९॥
इहाँ लज्जा करुणा त्रासादि बाच्य कीनैं।

---

१. जुद्ध। २. चिमत्कार। ३. पढ़ावै। ४. प्रथन। ५. 'अर्थानौचित्य' शब्द लिखना यहाँ पर प्रतिलिपिकार भूल गया है क्योंकि आगे चल कर इसका वर्णन हुआ है। ६. सुदृषि। ७. आनदकारी।

रस कौ सब्द वाच्यता

दोहा—

मोहि बिलछि न रस भरचौ लखि यह नारि नवीन।
ससि मंडल छबि लखत चित भौ सिँगार मैँ लीन।।९०।।

इहाँ 'रस' अरु 'शृंगार' वाच्य कीने।

स्थाई भाव कौ सब्द वाच्यता

दोहा—

जुद्ध मध्य उद्धत चलत दुहुदिस सस्त्र प्रहार।
श्रवन सुनत नरनाह के उर में भयौ उछाह।।९१।।

इहाँ 'उछाह' बाच्य कीनौं।

कुलपति कौ दोहा—

सरद निसाँ प्रीतम प्रिया बिहरत अनुपम भाँति।
ज्यौं ज्यौं राति सिराति है त्यौं त्यौं रति सरसाति।।९२।।

इहाँ 'रति' बाच्य कीनी। इन तीनौ दोषन के दूषन मैं बिंजना बृत्ति अरु सुहृदनि कौ हृदय ही प्रमान है।

विभावन की प्रतीति कष्ट सौं

कुलपति कौ दोहा—

कैसे कैसे जतन सौं तन मन सरबस लाय।
जह जबही यौं[1] सिरायगौ लखियै भरिचित चाइ।।९३।।

इन वचन रूप अनुभाव तैं आलंवन नाइका किधौ नाइक यह प्रतीति कष्ट सौ होति है।

अनुभावनि की कष्ट कल्पना

सवैया—

प्रीति की रीति बिसारति है पुनि निंदति बुद्धि ही कौं बहुधाँई[2]।
रोवै बिलापै चलै खसिलै औ पुनै पुनै ऊठति है अकुलाई।

---

१. यौ। २. बहुधांही।

ऐस दसा दुख या बिसमायौ करै अँग[1] अँग पराभव भाई।
कीजै कहा सखी गोविन्द की सौं भई सु भई मैं कही नही जाई॥९४॥

इहाँ ए अनुभाव करुणा के किधौ बियोग श्रृंगार के इह प्रतीति कष्ट सौं हैं।

कुलपति कौ दोहा—

बरन बरन घन घुमड़ि कैं उमड़ि उठे चहु ओर।
सुधि आए सुख पाछिले सुनि बन बोलत मोर॥९५॥

ए अनुभाव[2] करुणा के किधौ वियोग श्रृंगार के इह प्रतीति कष्ट सों हैं।

अरु विभाव अनुभाव के कहिबे मैं तो दोष नहीं।

कवित्त—

दौरि दौरि द्वार जाइयत उत चाहि फेरि,
सौचि कें समारि भौंन भीतर भगति है।
पौरि माझ ठाढ़ि मग देखि मुरझाय विन,
देखें विरुझाय छाती अति उमगति है।
कछू न सुहाइ बिन नीर मीन भाइ सखी,
हू सौ अनखाइ निस बासर जगति है।
भूली सुधि मोहनी बिसारी दई दोहनी सु,
छबि बनिता की कछू और सी लगति है॥९६॥

प्रतिकूल विभावादिक गृहन करनौ।

कवित्त—

धारि सु प्रसन्नताई हरष प्रगट करि,
रिस कौं बिसारि यहै दुख दरसाति है।
पी के अंग अंग विरहातप तें तपत सु,
सींचि सुधा बैंन कहा नैंन[3] सतराति है।

---

१. अग। २. अनभाव। ३. नैण-राजस्थानी प्रभाव।

सुख सुखमान कौ सदन तन तेरौ ताहि,
प्यारे ढिग राखि कहा एती इतराति है।
गोविंद से मीत सौं न मान करि मानि कह्यौ,
पानी माह नाव जैसें आव चली जाति है ॥९७॥

इहाँ श्रृंगार में साँति के उद्दीपन बचन कहनौं अनुचित।

अथ विभचारी भाव कौ सब्दवाच्यता अदोष है कवहूँ।

सवैया—

उतकंठित ह्वै कै सवेग चली रति नाइक साइक सौं डरिकैं।
सुनि आलिन की बचनालि लख्यौ बर सामुहैं मोद हियौ धरिकैं।
तन रोम उठे नव संगम मैं हसि लीनी महेस भुजा भरिकैं।
उह दच्छि[1] सुता कवि गोविंद कै नित होहु सहाइ कृपा करिकैं ॥९८॥

इहाँ उत्कंठा आवेग कौं जतावै ऐसौ और पद नहीं यातें सब्दबाच्यता अदोष।

अथ विरुद्ध संचारीदिकन की बाधित्व उक्ति कहूँ गुण है।

कवित्त—

कहा हौ नरेन्द्र चंदबंसी कहा ए तौ दुख,
पुनि कबहूँ कबहूँ मुखहि दिखाइ[2] है।
मैं[3] तौ गुर लोगन की सीख सुनी साँति हेत,
वाकी तौ रुखाई हू निकाइ सरसाइ है[4]।
गोविन्द बिबेक की कहा कहियै सुनत मोहि,
सुपनैहूँ दुल्लभ तू सुल्लभ क्यौं पाइ है।
रे मन समुझि अब और न उपाय वाहि,
हौं न जानौ कौंन कंठ लाय सुख पाइहै[5] ॥९९॥

---

१. दछि। २. दिखयहै। ३. में। ४. सरसाति है। ५. पायहै।

इह पुरूरवा की उक्ति है। गर्व, दीनता, उत्कंठा, बोध, स्मृति लज्जा, मति, विषाद, तर्क, इन भावन की सबलता है। इस बाधित्व उक्ति गुण है ऐसे और हू ठौर जानि लीजै।

आश्रय के एकत्व विषै जो रस ताहि न्यारौ आश्रय करिकैं वर्णन कीजै तौ दोष नहीं उदाहरन देस काल के भेद कौ करि आए हैं।

एक धरें कमलासन पै कर एक सुदर्सन चक्र धरें हैं।
एक विषातुर संभ के सीस समुद्र मथान मैं एक अरें[1] हैं॥१००॥

और जो रस निरंतर निरूपन करिबै मैं विरोधी होइ तिनै और रस कौ अंतर डारिकै निरूपन कीजै तौ दोष नहीं।

कवित्त—

सुरतरु फूलन के उर पै सुढार हार,
नवल परी न अंस धरी भुज भाइकै[2]।
ब्यारि होति प्यारिनि कैं सौंधे रंगे[3] चीरनि तैं,
राजै पुष्प जान मैं कुतह सरसाइ कै।
ऐसे[4] केर देखे में न कानि के दिखाए दूजे,
आपने सरीर रहे श्रोणित चुचाइ कै।
परे धूरि लपटाय स्यालिनी पलोटै पाय,
पंखनि सौं करैं वाय गिद्ध आइ आइकै॥१०१॥

इहाँ शृंगार वीभत्स कौ बैर है पर वीर रस कौ अंतर डारि कै कहे हैं यातें दोष नहीं।

अरु विरुद्धी हू रस स्मरण करतें तुल्यता करिकैं कहियै तौ दोष नहीं।

उदाहरन-आगैं अंगी कौ कहि[5] आए है।

या करिकै सुख पावति ही रसना सु इहै करहै सुखदानी।

अरु एक रस अगी मैं विरुद्धी हू द्वै रस जो अंग होइ तौ दोष नहीं।

---

१. अरैं। २. भायकै। ३. रगे। ४. एसे। ५. करि।

कवित्त—

कुरप ? अन्यारे एत कृत मृदु अंगुरीनु,
श्रोनित चुचात मानौं जावक धरति है।
ऐसे पाइ पाइ कुस भूतल पै धाइ धाइ
अश्रुपात तातैं मुख धोइवौ करति है।
निज पिय साथ गहैं हाथनि सौं हाथ बन,
इत उत जात दावानल तें डरति है।
पुनि पुनि पारथ गुविंद कहै मेरे जीव
न रावरी जे सत्रु वधू भावरी भरति है।।१०२।।

इहा राजरिष यानी[1] रति के करुणा अरु श्रृंगार ए दोऊ अंग है ऐसे होइ तौ दोष नही।

अथ पुनः पुनः दीप्ति[2]

अकांड विषै कथन[3]

'विजै मुक्तावली' मैं मानवती कौ श्रृंगार जुद्ध के समैं कहिवौ।

रस खंडन[4]

असमय के विषै

वीरचरित्र नाटक मैं परसराम रामचन्द्र जू कौ समान तामैं कंकन खुलाइवौ।

प्रधान अंग कौ विस्मरण

इह 'ग्रीव बध' नाटक मैं हयग्रीव कौ वर्णन।

अंगी कौ नही जानिबौ

'रत्नावली' के चौथे अंक मैं सागरिका कौ विस्मरण।

---

१. यनी। २. पुनः पुनः दीप्ति का उदाहरण छूट गया है।
३. अकांड विषै कथन—लिखना छूट गया है।
४. रस खंडन का भी उदाहरण नहीं दिया गया है।

अनंग कौ अभिधान

'करपूर मंजरी' के विषै अपनौ वर्णन छाड़िकै वधा वर्ण? की प्रसंसा। ए छ दूषन नाटकन के काम के है।

अथ प्रकृति बिपर्यय[1]

दिव्य. अदिव्य दिव्यादिव्य ए तीनि प्रकृति। दिव्य तौ रामचंद्रादय। अदिव्य माधवादय। दिव्यादिव्य श्री कृष्णादय। रस के अनुसार चार प्रकृति। धीर उदात। धीरमृदु। धीरोद्धत। धीर सांत। इनकौ वीर, शृंगार, रुद्र-सांति ए रस प्रकृति हैं। श्रीराम, श्रीकृष्ण, भीष्म, युधिष्ठिर आदि ऐसे औरहू जानि लीजै। गुणनि के अनुसार तीनि प्रकृति—उत्तम, मध्यम, अधम। उत्तम प्रकृतिदेवतानि की।

कुलपति कौ दोहा—

सागर लंघन नभ गमन सफल भया[2] अरु कोह।
उत्तम दिव्य सुभाव ए जहा होइ नहि मोह॥
ए नर मैं नहि वरनियै कहियै नरन प्रमान।
अचिरज हासी सो करति नर स्वभाव ए जान[3]॥
दोऊ दिव्य अदिव्य मैं उचित हिये मैं जानि[4]।
कछू क उत्तिम नरनि मैं देव प्रकृति हू मानि॥१०३॥
देवन हू में नर प्रकृति उचित होहि ते आनि।[5]

उत्तम नरन की प्रकृति देवतानि हूँ मैं बरनियै। कछूक देवतानि की प्रकृति उत्तम नरनि मैं हूँ बरनियै जौ उचित होइ।

कुलपति कौ दोहा—

ऐसै ही रस गुण प्रकृति लखि उलटी जह होइ।
प्रकृति विपर्यय दोष तह कहत सबै कबि लोइ॥१०४॥

---

१. विपर्यं। २. मया। ३. जानि। ४. जान। ५. यहाँ दूसरी पंक्ति खंडित है।

अर्थानौचित्य[1]

देस विरोध

सोमनाथ कौ दोहा—

सहित मयूर कदंब अरु सघन रसाल करीर।
गावत गुण गोपाल के धनि सुन्दर कस्मीर॥१०५॥

इहाँ व्रज कौ सौ वर्णन कस्मीर में कहनौ अनुचित।

समय विरुद्ध

केशव कौ दोहा—

प्रफुलित नव नीरज रजनि बासर कुमुद रसाल।
कोकिल सरद मयूर मधु वरषा मुदित मराल॥१०६॥

इहाँ समय विरुद्ध प्रसिद्ध[2] ही है।

न्याय विरुद्ध

केशव कौ दोहा—

स्थाई वीर सिंगार के करुणा घृणा[3] प्रमान।
तारा अरु मंदोदरी कहियँ सतिन समान॥१०७॥

इहाँ वीर में करुणा श्रृंगार मैं घृणा अरु तारा मंदोदरी ए सती ए न्याय बिरोध—ऐसेई और ठौर जानि लीज।

काम कौ नाम
कुलपति कौ कवित्त—

जब तें निहारी प्यारी रूप उजियारी देखें
चख चकचौंधैं देह दामिनी दमक है।
घरी द्वैक भेट भई वाही तें हिये के माझ,
वाही भाति काम के नगारे की धमक है।
साँच है कि भ्रम[4] सौई तुही सुधि देहि वाहि,
पूछि भेद लेहि जानै नेह की गमक है।
ऊषा कौ हरन सुख सूखा थोरे मेहन कौ,
जुगनू की जोति सम मन में चमक है॥१०८॥

---

१. अर्थानौचित्य—छूट गया है। २. प्रसिद्धि। ३. घृणा। ४. भ्रम।

इहाँ काम कौ सताइवौ बिग राख्यौ चाहियै।

दोहा—

अनुचित तैं नहि उचित है रसहि विगारन हेत।
उचित प्रसिद्धि बनाइयौं यहै रसनि कौ खेत ॥१०९॥
जहाँ विरसता कौं कहैं तहाँ होइ ए दोष।
बाधहि जहा विरुद्ध कौ तहाँ करै रस पोष ॥११०॥
जस तिय संपति रूप गुन इन ते भलौ न कोइ।
सबै होइ सुख साज ए जौ थिर जोवन होइ ॥१११॥

इहाँ सांतिरस जद्यपि[1] बिरुद्ध है तथापि[2] श्रृंगार कौ पोषक है। ऐसैं ही और ठौर उचितता देखि लीजै। **इति दूसन निरूपनं संपूर्ण ॥ समाप्त ॥**

अथ गुणालंकार वर्णन बार्त्ता

रस के उत्कर्ष होइ सो गुणालंकार है। रस के गुण तौ संवाय संबंध करिकैं रहे हैं जैसैं आत्म विषै सूरत्त्वादिगुण। अरु अलंकार संयोग संबंध करिकैं रहे हैं जैसें हारादिक।

(ख) गुण वर्णन

सो गुण तीनि। माधुर्य। औज। प्रसाद।

माधुर्य लछन

चित्त मैं द्रवी द्रवी भाव उतपत्ति करत जो आह्लादकारी होइ सो माधुर्य सो श्रृंगार विषै छबि करै है। करुणा विप्रलंभ[3] सांति मे उत्तरोत्तर अधिक जानियैं।

अथ ओज[4] लछन

चित्त की दीप्ति विंस्तारित करै सो ओज। वीर, वीभत्स, रौद्र इनमैं उत्तरोत्तर अधिक जानियैं।

---

१. जविप्रय। २. तथप। ३. विप्रालंभ। ४. आज।

अथ प्रसाद लच्छन

अर्थ सीघ्र प्रकास करिकैं अरु चित्त कौं प्रसन्न करै सो प्रसाद। इन गुननि के ए वर्ण बिंजन हैं। इन गुननि[1] के लच्छन। माधुर्य। ट ठ ड ढ रहित अरु कांतिमान[2] जहाँ तहाँ सदीर्घ विंदु ह्रस्व जिनके बीच में ऐसे[3] रेफ। अरु णकार सुल्प समासभाव।

सवैया—

करि कुंज लतानि की गुंजत मंजु अलीन के पुंजन चावतु है।
अंग अंग अलिंगन सौं मिलिकैं रज रंजित[4] ह्वै चलि आवतु है।
विकसे नव कंजनि सौं मिलिकैं रज रंजित ह्वै चलि आवतु है।[5]
इह मंद समीर चहूँ दिस बृंद सुगंधिन के बरसावतु है।
॥११२॥

ओज[6] वर्णन

बर्ग के आदि के अछिरन कौ तृतियनि करिकैं द्वितिय अरु चतुर्थ इनकौ समान जो संबंध। टवर्ग जुक्त दीर्घ समास जहाँ तहाँ दुत्त अछिर है।

कवित्त—

भेष भयंकर[7] जंभ जिह्वा[8] छुरीधार कढ्यौ,
खंभ तैं गुबिंद यौं नृसिंघ[9] किलकारिकैं।
दंत कटकटत विकट्ट अट्ट हास दाढ,
दिठ्ठि विज्जु छटा देति दुष्ट गर्व गारिकैं।
हक्व पक्व इंद्र कै फनिंद्र जू कौसक्व पक्व,
धरा हू धसक्की धार धक्व पक्व धारिकै।
जुद्ध करि क्रुद्ध ह्वै बिरुद्धी दुरवुद्धी कौं,
प्रसिद्धि नख उद्धत सौं डारयौ पेट फारिकै॥११३॥

---

१. गुनि। २. कांतिमात। ३. एसे। ४. रजित। ५. यहाँ ऊपर की ही पंक्ति की पुनरावृत्ति हो गई है। ६. औज। ७. भयंकार। ८. जिह्व। ९. नृसिघ।

अथ प्रसाद

श्रवण मात्र तें बोध होइ संपूर्ण बर्णन कौ कारनत्व।

सवैया—

कुचपीन नितंबन के परसैं मलिनी दुहुघा[1] दरसावति है।
तन कौ मधि भाग न वीच लग्यौ सु हरी ही गुविंद सुहावति है।
भुज डारी दुहूँ सिथलाई जहाँ बिथुरी रचना सर सावति है।
सयनी नलिनी दल की तिय की हिय की विरहागि जतावति है।
॥११४॥

इन गुणनि की उपकारिणी ए तीनि वृत्ति है। उपनागरिका।१। परुषा। ॥२॥ कोमला ॥३॥

तिनके लच्छन

माधुर्य के बिंजक वर्ण जा बिषैं सो उपनागरिका। औज के बिंजक वर्ण[2] जा बिषै सो परुषा॥२॥ संपूरन बर्णन करिकैं अर्थ कौं प्रकासैं सो कोमला॥३॥ कोऊ इनही कौं गौड़ी[3], बैदर्भी, पांचाली कहै हैं।

उदाहरन उपनागरिका कौ कवित्त—

घुघरारी अलक सवारी अनियारी भौंहैं,
कजरारी आखैं कजरारी[4] मतवारी मैं।
भारी सारी जरतारी सरस किनारी बारी,
मालती गुही है बैनी कारी संटकारी मैं।
बागी बैस रूप उजियारी श्री गुबिंद कहैं,
बारी सुरनारी नरनारी नागनारी मैं।
मिलन बिहारी सौ दुलारी सुकुमारी प्यारी,
बैठी चित्रकारी की अटारी सुखकारी मैं॥११५॥

---

१. बुहुधा। २. विंजन कर्ण – वर्ण विपर्यय। ३. गोडी। ४. कजारी।

कबिनाथ कौ कवित्त—

मदन तुकासी किधौं राजै कुंद कासी मानौं,
कंज कलिका सी कुच जोरी हू विकासी है।
गाँसी भरी हासी मुख भासी मोह फासी मद,
जोबन उजासी नेह दिये की सिखा सी है।
जाकी रति दासी रस रासी है रमा सी को–
कहै तिलोत्तमा सी रूप सारनि प्रकासी है।
काम की कला सी चपला सी कबिनाथ वहै,
चंपलतिका सी चारु चन्द्र चन्द्रका सी है ॥११६॥

अथ परुषा वृत्ति कवित्त[1]। अथ कोमला[2] वृत्ति।

कबित्त केसव कौ।

दुरिहै क्यौं भूषन बसन दुति जोवन की,
देह ही की जोति होति द्योस ऐसी राति है।
नाह की सुबास लगैं ह्वै है कैसी केशव,
सुभाव ही की बास भौंर भीर फारैं खाति है।
देखि तेरीं मूरति की सूरति बिसूरति हौ,
लालन की दृष्टि देखिवे कौं ललचाति है।
चलिहै क्यौं चंदमुखी कुचन कौ भार भयैं,
कचंन के भार ही लचकि कटि जाति है ॥११७॥

× × ×

कोमल बिमल मन विमला सी सखी साथ,
कमला ज्यौं लीनैं हाथ कमल सनाल के ॥इत्यादि॥

(ग) अथ अलंकार वर्णनं—

रस तें विगितैं भिन्न अरु सब्दार्थ के चमत्कार कौं प्रकट करै सो अलंकार है। सो द्विविध ॥सब्दालंकार॥१॥ अर्थालंकार॥२॥ सब्दालंकार पाँच विधि। बक्रोक्ति। अनुप्रास। जमक। श्लेष। चित्र।

---

१. यहाँ प्रतिलिपिकार परुषा वृत्ति का उदाहरण छोड़ गया है।
२. कोमाल।

अथ बक्रोक्ति लछिन

और भाँति[1] कह्यौ जो बाक्य ताकौं और भाँति समझियै सो बक्रोक्ति। सो द्वै विधि। श्लेष बक्रोक्ति। काक बक्रोक्ति। श्लेष बक्रोक्ति[2] द्वै विधि। एक सभंग। एक अभंग।

अथ सभंग बक्रोक्ति

लाल कौ कवित्त—

बातनि विलोकौ कत पवन विलोकियत,
पीतम निहारौ तुम पीवौ अंधकार कौं।
आए नँदलाल हम गाहक बजाजी के न,
देखौ बनमाली तौ लै आवौ गुहि हार कौं।
बोले बलवीर तौ बिदारौ कंस केसी जाइ,
ऐंठी कित जाति कियौ ठीक कहवार कौं।
ऐसैं बहु भाँति बतराइ सतराइ ठगी,
दूतिका न पावै वाकै बातनि के पार कौं॥११८॥

अथ अभंग श्लेष बक्रोक्ति

घनश्याम कौ कवित्त—

खोलौ जू किवार तुम को हौ इहिं बारहरि,
नाम हैं हमारौ बसौ कानन पहार मैं।
माधव हौं भाँमिनी तौ कोकिला के माथे भाग
भोगी हौं छबीली जाइ बैठौ जू पतार मैं।
नाइक हौं नागरी तौ लादौ किनि टाँडौ जाइ,
हौ तौ घनस्याम जाइ बरसौ जू हार मैं।
हौं तौ बनवारी जाइ सींचौ किनि बाग बारी
मोहन हौ प्यारी फुरौ मंत्र के विचार मैं॥११९॥

---

१. भाँति। २. बाक्रोक्ति।

अथ अलंकार

माला कौ सोरठा—

महो दीजियै दान सु तौ मही दै है नृपति।
बैंन सुनौ अब कान जाइ बजावहु रास मैं ॥१२०॥

अथ काक बक्रोक्ति

लाल कौ सवैया—

उग्यौ जु भान तौ ऊगनं दै अरबिंदन मैं अलिहू सचु पै है।
कुंज गुलाबनि के चटकैं चकई चकवा मन मोद मनैहै।[1]
लेहु भले सुख बासर के रजनी सुख तैं सजनी[2] अधिकैहै।
ए ब्रजचंद बसैं ब्रज के हितू आजु गए फिरि काल्हि न ऐहै॥१२१॥

बिहारी कौ दोहा—

किती न गोकुल कुलबधू काहि न कह सिख दीन।
कौनैं तजी न कुल गली ह्वै मुरली सुर लीन॥१२२॥

अथ अनुप्रास लछिन

बरननु की समता सो अनुप्रास। **सो द्वै बिधि छेकाअनुप्रास अरु वृत्याअनुप्रास॥**

अथ छेका अनुप्रास लच्छन

वर्णन की असंनिधि समता होइ सो छेका अनुप्रास। सो द्वै विधि। एक सुर की समता। एक विषमता।

कु क ? कौ कवित्त—

गोनें आई दुलहिन लोनें तनवारी यातैं,
जगर मगर होत भवन कौ भाग है।
विधि नैं सुधारि चातुरी की औप रूप,
आगैं रूप रति कौ रती कहू न लाग है।

---

१. नमैहै। २. सजनी सजनी-पुनरुक्ति।

मेरे जान मुख दिखरावनी कौ नेम जानि,
　　आपु ही तें सौंपि दीनौं कीनौं अनुराग है।
सासु ने सदन दीन प्यारे लाल मन दीन,
　　और प्रीति पन दीन सौतिन सुहाग है।।१२३।।

अथ कुलपति मिश्र कौ कवित्त यथा

मोहनी सी गोहन फिरति रति सी है कौन,
　　मौन गहि रही मुख बाँतनि कछू कहै।
जलज से नैन बैन कैसी छबि गौरी भोरी,
　　किधौं ह्वै है ऐसी मानौ अमृत केऊ कहै।
बरनी न जाइ रूप रासि प्रेम की सी फाँसि,
　　जाके गुन गनिबे कौं गिरा भई मूक है।
अकल विकल तन बेगि दरसाइ मोहि,
　　प्राण परसाइ न तौ तेरी बड़ी चूक है।।१२४।।

अथ सुर की विषमता

कवित्त—

नूतन लसनि बनी अंगन की नीकी बाकी,
　　छकी बंक भौंह दिन ह्वै कही तैं दैंरसी।
सरनि समान चितवनि लौनी ललना के
　　नैननि की अनी आनि काननि[१] लौं परसी।
उठनि उरोजनि नितंवनि मैं पीनताई,
　　सहस सुगध बृंद गंधित अतरसी।
इंदीवर इदिरा तैं चंद्रका तैं चंद हू तैं,
　　श्री गुविंद सुंदरी की सुंदरता सरसी।।१२५।।

---

१. कीननि।

इति छेका

अथ बृत्ति अनुप्रास लछिन

बर्णन की समता होइ सन्निधि जामैं सो बृत्ति अनुप्रास।

यथा कुलपति[1] कौ सवैया—

चंद सौ आनन चाह सौं चूमि चलै चख चारुनि चौंप चखाई।
हार हिये बघना कठुला[2] पहुची पहरी सु महा छबि छाई।
तोरि तिनूका दिठौना बनाइ कै प्यार सौं वारति लौं नरु राई।
गोद तैं गोद हसैं भरि मोद विनोद सौं देखि री लाल कन्हाई।
॥१२६॥

देव कौ कवित्त—

ख्याल ही की खोल मैं अखिल ख्याल खेलि खेलि,
गाफिल ह्वै भूल्यौ दुख दोष की खुस्याली तैं।
लाख लाख भाँति अभिलाष लखे खोटे अरु,
अलख लख्यौ न लखी लालनि की लाली तैं।
पुलकि पुलकि देव प्रभु सौं न पाली प्रीति,
दै दै कर ताँली न रिझायौ बनमाली तैं।
झूठी झलमल की झलकही मैं झूल्यौ जल,
मल की पखाल खल खाली खाल पाली तैं ॥१२७॥

यथा कवित्त—

अतर अन्हाइ अंग अंग आछैं आभूषन,
अंबर अमल आभा है अनेक इंदु सी।
आस पास अली अलि अवली है श्री गुविंद,
अंगना अनंग की तैं अधिक अमंद सी।
आरसी सौं आनन अलक अविलोकि और,
अंजन अनूख आँजी आँखैं अरविंद सी।
अंहौ अति आदर कै आतुर सौं अंक लीजै,
आई अलबेली अली आनंद के कंद सी ॥१२८॥

---

१. ऊलपति। २. कठला।

कोमल है कल है कमला ज्यौं किये कर कँज मैं कंजकली कौ।
भाखे ?को भाइ न भूरि भरी कौं सुभूषन भेद कौं भाति भली कौ।
छाके छकी छबि सौ छलकै छलै छैल गुविंद छबीले छली कौ।
आवति है अलवेली अली लै अलीनि कौं और अली अवली कौ।
॥१२९॥

अरु तीनि वृत्ति अनुप्रास ही तें होत है सो गुण निरूपन मैं कहि आए।

अथ लाटानुप्रास लछिन

भाव भेद तैं अर्थ सहित पद जहाँ फिरैं सो लाटानुप्रास।

कवित्त—

बोलत मधुर होत मधुर सुजस यह,
नीकौ जानि नीकौ मन मोद ही सौं भरियै।
करियै तौ डरियै न करियै तौ डरियै जू,
सबही भलाई जौ भलाई उर धरियै।
जैसैं सीत भान भान प्रभा प्रभाकर त्यौंही
जान जान पन्यौ फल यहै जिय धरियै।
कीजै नित नेह नँदनंदन के पायन सौं,
पायन सौं तीरथ के पंथ अनुसरियै॥१३०॥

मुकुंद[1] कौ दोहा—

जिन सौं मित्र[2] मिले नही तिन्है बजार उजारि।
जिन सौं मित्र मिले नही तिन्है बजार उजारि॥१३१॥
रन[3] मैं जे हारत नही पैनैं जिनके बान।
रन मैं जे हारत नही पैनैं जिनके बान॥१३२॥
पिया निकट जाके नही घाँम चाँदनी[4] ताहि।
पिया निकट जाके नही घाम चाँदनी ताँहि॥१३३॥

---

१. मुकंद। २. मित। ३. सो ना रन। ४. चादी।

अथ जमकालंकार बर्णन

जमक सब्द कौ फिरि श्रवण अर्थ दूसरौ होत।

कवित्त—

संग सखी तेरैं बादरी मैं बादरी मैं कालिह,
कोही पिक बैंनी बनी बैंनी बनी कारी ही।
मुख चन्द्र मानिनी कौ चन्द्रमा न नीकौ ऐसौ,
कहत गुविंद चंद्रमानि तैं उज्यारी ही।
कोटि उरबसी बारौं और उरबसी नाहि,
उही उरबसी उरबसी उरधारी ही।
बिन कजरारी कजरारी आँखैं बेसरि ही,
बेसरि सवारी ही सु बेसरि सवारी ही॥१३४॥

चेतनि मैं बसिकै निकेतनि जरावै वाइ,
केतनि की रीति मीनकेतनि कहात की।
सूंन केसरनि सौं असून असरन करै,
खून बितरन कौं अनाथ अबलात की।
रति अनकूली के बियोग जरि धूली भयौ,
भूली सुधि सूली के विजै तनू न पातकी।
को करै प्रतीत और बात की मनोज पीर
तात की न जानी रे बधू के बध पातकी॥१३५॥

केसव कौ दोहा—

श्रीकँठ उर बासुकि लसत[1] सर्वमंगलामार।
श्रीकँठ उर बासुकि लसत सर्वं मंगलामार॥१३६॥

---

१. लतस।

अथ श्लेष लछिन

दोहा—

एक शब्द मैं अर्थ बहु श्लेष अलंकृत सोइ।
स्यामा सेवत मधु सहित ताकैं रोग न होइ॥१३७॥

सवैया—

बतिया मन-मोहनी मोहैं गुविंद भली विधि नेह नवीन सनी।
अब नीकी सबै अगना मैं यहै उजियारी जगामग जोति घनी।
वर अंबर मैं सुप्रकाशित है उपमा कवि कौंन पै जाति भनी।
कमनी नव वाल बनी सजनी किधौं दीप की माल रसाल वनी।
॥१३८॥

केसव कौ कवित्त—

केसौदास है उदास कर कमलाकर सौं,
सोषक प्रदोष ताप तमोगुन तारियै।
अमृत असेष के विसेष भाव वरषत,
कोकनद मोद चंड खंड न विचारियै।
परम पुरुष पद विमुख परुष रुख,
सुमुख सुखद विदूषनि उर धारियै।
हरि हैं री हिये मैं न हर न हरिन नैनी,
चन्द्रिमा न चंदमुखी नारद निहारियै॥१३९॥

विहारी कौ दोहा जमक

केसरि केसरि करि सकै चंपक कितिक अनूप।
गात रूप लखि जात दुरि जातरूप कौ रूप॥
नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुक्तनि के संग।
अजौ तरौंनाँ ही रह्यौ श्रुति सेवत इक अंग॥१४०॥

भाषाभूषन—

होइ पूरन नेह बिनु ऐसौ बदन उदोत।

दोहा—

जोगी भोगी सूम भट कबिता सज्जन मित्त।
मन साधन ही मैं रहै सुवरन चाहै नित्त॥१४१॥

अथ चित्रालंकार वर्णन लछिन

पद्मादिक आकार करिकै अरु वर्णनि कौं लिखिये सो चित्र।

कविप्रिया कौ दोहा केसवोक्ति[1]

केसव चित्र कवित्त मैं बूड़त परम विचित्र।
ताके बूंदक के कनहि बरनत हौं सुनि मित्र॥१४२॥
अध ऊरध बिन बिंद जुत तजि रस हीन अपार।
बधिर अंधगन अगन के गनिय न अगति विचार॥१४३॥
केसव चित्र कबित्त मैं इतनें दोष न देखि।
अछिर मोटे पातरे वव ? जय एकै लेखि॥१४४॥
अति रति मति गति एक करि बहु विवेक जुत चित्त।
ज्यों न होइ क्रम हीन त्यौं बरनहु चित्र कवित्त॥१४५॥

इति केसवोक्ति।

अथ सवैया—

मैं हिं अनेक छंद प्रकट होइ।
यथा—(बीन बजावति रास मैं बाल रसाल है)।

बीन बजावति रास मैं बाल रसाल है सुद्ध सुधा मृदु बानी।
गावति तान तरँग बिसाल खुस्याल है प्रेम पगी सुखदानी।
भौंह नचाय नचाय कै मान अनूप है गोविंद के मनमानी।
अंग उमंग सुगंध सुजान सरूप है तो सी तुही ठकुरानी।
॥१४६॥

---

१. केसवोक्ति।

समाज आज है भली मृदंग वीन वाजँही,
अमंद सुद्ध चंद चारु चादनी छई छई।
नवी[1] समाज है अली महाप्रवींन साज ही[2],
प्रबंध बाजु बंद हारु किंकिनी ठई ठई।
सुगंध लास मैं कई सुता न मान पेखियै,
गुमान मान छंद अंग माधुरी मई मई।
बिलास राग मैं सही प्रकासमान देखियै,
सुजान श्रीगुविंद संग सुंदरी नई नई ॥१४७॥

केशव कौ दोहा—एकाक्षर—

केकी कूकौ कोक को काकौ कूकै कोक।
कोक कूकि कोकी कुकी कूके केकी कोक ॥१४८॥

निर्होष्टक कवित्त केसवोक्ति[3]—

लोक लीक लोकलाज लीलत से नंदलाल,
लोचन ललित लोल लीला के निकेत है।
सौंहनि कौ सोचु न सकोच काहू लोकहू कौ,
देति सुख सखी ताहि दूवौ दुख देत है।
केसौराय कान्हर कनेरि ही की कौरक से,
अंग रगे राते रंत अंत अति सेत है।
देखि देखि हरि की हरनता हरिन नैंनी,
देखौ जाही देखत हीं हियौ हरि लेत है ॥१४९॥

---

१. नवीन। २. साजहही। ३. केसवोक्ति।

तन तन मन मन प्राण पन, घन घन घन सनमान।
छिन छिन गुण-गण गान बन, बन बन बनतिन आन ॥१५०॥

इह दोहा के छै भाँति चित्र बनै है। तत्र प्रथम गोमुत्रिका चित्र ॥

त	न	त	न	म	न	म	न	प्रा	न	प	न	घ	न	घ	न	घ	न	स	न	मा	न
छ	न	छि	न	गु	ण	ग	न	गा	न	ब	न	ब	न	ब	न	ब	न	ति	न	आ	न

त्रिपटी चित्र

त	त	म	म	प्रा	प	घ	घ	घ	स	मा
न	न	न	न	न	न	न	न	न	न	न
छि	छि	गु	ग	गा	ब	ब	ब	ब	ति	आ

ह्रस्व गति

त	न	त	न	म	न	म	न	प्रा	न	प
न	घ	न	घ	न	घ	न	स	न	मा	न
छि	न	छि	न	गु	न	ग	न	गा	न	ब
न	ब	न	ब	न	ब	न	त	न	आ	न

इह हार बंध चित्र है। श्री कृष्णायनमः ॥
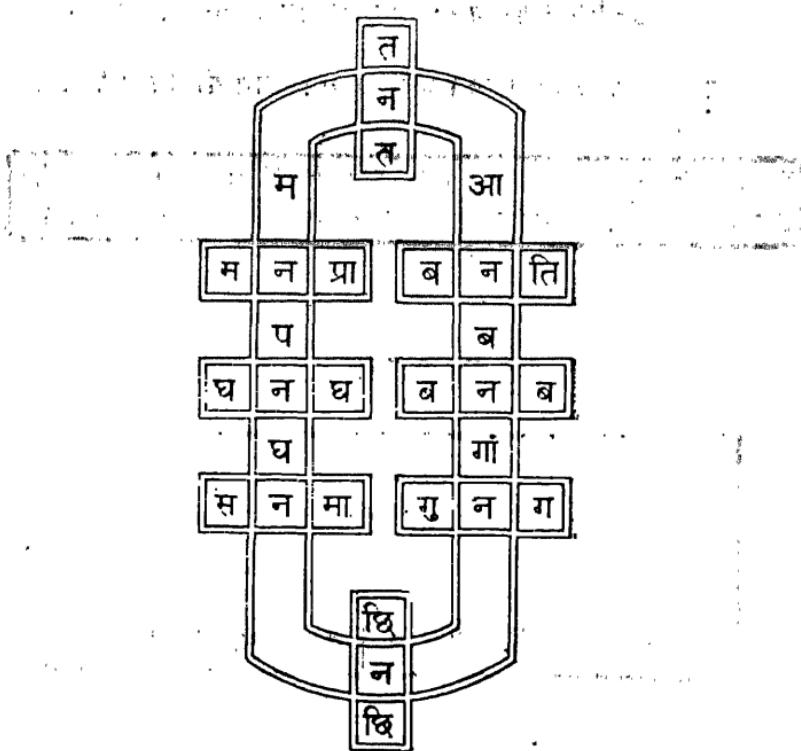
अंग अंग अग राग जुग जग मग जगमग जाग।
रंग रंग रग राग सग पग पग डग दृग लाग॥१५१॥

यहू दोहा ऐसैं ही जानियैं।

निमात्रा कवित्त केसव कौ

जग जगमगत भगत जन रस बस,
भव हर सहकर करत अचर चर।
कनक बसन तन असन अनल बल,
बट दल बसन असन जल थलकर।

कमल बंद श्रीरामजी।
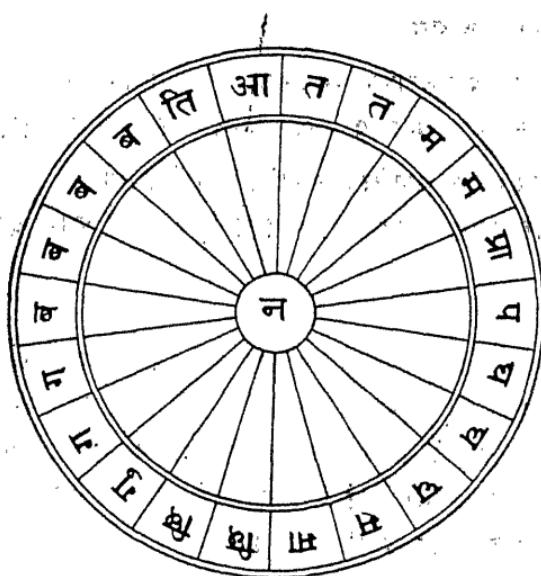
अजर अमर अज वरद चरन धर,
परम धरम गन चरन सरन पर।
अमल कमल वर बदन सदन जस,
हरन मदन मद मदन कदन हर॥१५२॥

अलखतरंग कौ कवित्त—

कलन परत पल जलज तलप पर,
मलय पवन बस उठत अनल झल।
कदन करत सर सरस मदन वर,
हृदय हलत भय सम चल दल दल॥
प्रपल तपत तन मन हर हर रट,
जपत रहत इक रस न लगत पल।
ललन वदन दरसन रत उमड़त,
अलख तरंग सर भरत नयन जल॥१५३॥

इत्यादि

अथ पुनरुक्ताभास लच्छन

भासैं पद पुनरुक्ति पर[1] नहि पुनरुक्ति विचार।
मदन काम मनमथ सखी करत पंच सरमार॥१५४॥

इति सब्दालंकार। अथ अर्थालंकार वर्णनं। अथ उपमा

उपमा अरु उपमेय अलंकार के प्राण हैं। यातैं प्रथम इनही कौं कहत हैं।

उपमा लच्छन

जहाँ[2] साधारन धरम करिकैं उपमान की समानता कीजै सो उपमा। जाकी समता दीजै सो उपमान। जाकौं समता दीजै सो उपमेय। दोऊ ओर[3] की समता दिखावै सो बाचक। दोऊन की लक्ष्मी की समानता सो साधारन धर्म। ए चारयौ जहाँ होइ सो पूर्ण उपमा। अरु इक बिन द्वै बिन तीनि बिन होय सो लुप्त[4] उपमा।

भाषा भूषन कौ दोहा—

इहि विधि सब समता मिलै उपमा सोई जानि।
ससि सौ उज्जल तिय वदन पल्लव[5] से मृदु[6] पानि॥१५५॥

अलंकार माला—

उपमा जहँ इक सी प्रभा दु पदारथ की होइ।
प्रभु तुव कीरति गंग सी हरति त्रिपुरनिसोइ॥१५६॥

सोमनाथ कौ दोहा—

चाहत सुख संपति सबै तौ नित प्रति चित लाइ।
ललित नवल नीरज सदृश रघुबर चरन मनाय॥१५७॥

अलंकारकरणाभरन। यथा—

मुख सखि सौ उज्जल चपल खंजन से हैं नैन।
सुबरन सौ तिय तन लसै मधुर सुधा से बैन॥१५८॥

---

१. परि। २. जहा। ३. और। ४. लोप्त। ५. पल्लव। ६. मृद।

कवित्त—

मद गजराज की सी मंद मंद चलै चाल,
पद अरबिंद से सुछंद सुकुवार हैं।
केहरि की कटि ऐसी खीन कटि पीन कुच,
हैंम कुंभ से हैं कंठ कंबु सौ सुढ़ार है।
धनुष सी वाकी भौंह[1] बनी है गुबिंद दृग,
मृग से चपल मुख चंद ऐसौ चारु है।
रसिक विहारी एक प्यारी मैं निहारी जाके,
अंगनि की सुखमा की उपमा अपार है॥१५९॥

अथ लुप्तोपमा वर्णनं।

धर्म लुप्ता सोमनाथ कौ दोहा

बिहरै पगी उछाह मैं निज पछाँति की छाँह।
धरै सखी की ग्रीव[2] मैं हेमलता सी बाँह॥१६०॥

कुलपति कौ सवैया—

ध्यान धरौ मन ही मन मैं रुचि सौं मृदु मूरति कौं अवरेखौ।
ब्याकुल ह्वै चहूँ और तकौं उझकौ बिझुकौं यह कौन सौ लेखौ।
मोहन जू बिन देखैं तिहारै उतै उर आनैं वे प्रेम परेखौ।
ताप तचाव तवादि हियौ चलि क्यौं न पिया ससि सौ मुख देखौ।
॥१६१॥

अलंकारमाला कौ दोहा—

पिक बानी सी लसति है तो मुख की बतरानि।
तो गति गज गति सी अहे, पिय मन कौ सुखदानि॥१६२॥

---

१. भोह। २. ग्राम।

अथ वाचक लुप्तोपमा—अलंकारकरणाभरण[1]—

मुख सखि निर्मल लाल कौ मेरे नैन चकोर।
भरे खरे की चाह सौं लगे रहै उहि ओर[2] ॥१६३॥

सो चन्द बदन की जौंन्ह सौ छबि की उठति तरंग।
निरखत ही हरिबस भए विद्रुम अधर सुरंग ॥१६४॥

अथ उपपान लुप्ता। अलंकारकरणाभरन

कोइल सी बानी मधुर तो मुख सौं सुनि बाल।
होइ रहै मोहित अहे अलि नदनंद रसाल ॥१६५॥

सोमनाथ कौ दोहा—

रची विरंचि विचारिकै सुनियै श्री घनस्याम।
राधा सी सुन्दर सुघर और न ब्रज मैं बाम ॥१६६॥

अथ उपमेय लुप्ता। अलंकारकरणाभरन

रति सम सुदरि जाति है चली डुलावति बाँह।
तन जोवन दुति जगमगै निरखति छिन छिन छाँह ॥१६७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

फैलि रही रति कुंज मैं चहु दिस कला तरंग।
फिरति चंचला सी चपल मनमोहन के संग ॥१६८॥

वाचक धर्म लुप्ता। सोमनाथ कौ दोहा—

अतन ताप तन क्यौं तचति अजहूँ सिख उर आनि।
त्वहि ब्रजचंद सुजान की निरखि ज्यौन्ह मुसिकानि ॥१६९॥

---

१. अलंकारकरुणाभरण—यह अनेक स्थलों पर आया है पर शुद्ध है 'अलंकारकरणाभरण'। २. और

अलंकार करणाभरन

कमल वदन नँदलाल कौ अलि अलि मेरे नैंन।
अनुरागे लागे रहैं सदा रूप रस लैंन॥१७०॥

बाचक लुप्तोपमा।[1] अलंकार करणाभरन कौ दोहा—

पट दावैं पाटी गहैं सोवति तिय पिय संग।
मृग विलास नैंननि लखैं रहै समैंटैं अंग॥१७१॥

अथ धर्म उपमान लुप्ता। अलंकार करणाभरन—

चहु चहाट चटकनि कियौ चौंकि चले हरि[2] जागि।
मृग से दृगनि निहारिकैं बाल रही गल लागि॥१७२॥

सोमनाथ कौ दोहा—

कहियौ ऊधौ निडर है करुणा हियें समोइ।
ब्रज बनितनि कैं सावरे तुम सम और न कोइ॥१७३॥

अथ धर्म उपमेय लुप्ता। अलंकारकरणाभरन कौ दोहा, यथा—

मुरली सुन्दर स्याम की बजी सरस रस भोइ।
ताकी धुनि श्रवननि सुनत रही मृगी सी होइ॥१७४॥

सोमनाथ कौ दोहा—

घूंघट कौ पट टारिकैं चितई नेह निबाहि।
मगन भयौ मन मुदित उह सरद चंद सम चाहि॥१७५॥

उपमान उपमेय लुप्ता करणाभरन—

आए झूंमत झुकत से चित्र बने सुबिसाल।
मतवारे से रहन कौं चहियत ठौर[3] रसाल॥१७६॥

---

१. बाचक उपमा लुप्तोपमा। २. हर। ३. ठौ।

बाचक धरम उपमान लुप्ता। करणाभरन—

रही मौन ह्वै कै कहा बैठी भौंह[1] चढ़ाय।
बैंननि कौं सुख दै प्रिया कोइल बचन सुनाइ॥१७७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

बिलसति साथ सखीन कैं पिक बैनीहि निहारि।
निपट चकित चित ह्वै रहे मोहन सुमति बिसारि॥१७८॥

कुलपति कौ कवित्त—

तेरी सुनि बानी मौन गहति भवानी देखैं,
नैननि कौ पानी रतिरानी वारि नाखिए।
भौंहनि विलास मृदु मंद हास के सुबास,
रूप के उजास मुख नीकौ देव साखिए।
प्राणनि के प्राण अब लीजै न निदान प्यारी,
नैंक मुसिकाइ पैंम पागे बैंन भाखियै।
सोभा सुख दैनी पाउ धारि गजगैंनी इत,
देखि मृगनैंनी मीललाइ ? उर राखियै॥१७९॥

अथ मालोपमा। कुलपति कौ दोहा—

कहै एक उपमेय कौं बहुत भाँति उपमान।
सो ह्वै विधि मालोपमा धरम भेद तैं जानि॥१८०॥

अथ[2] सवैया—

सोचतें रूप कुमंत्र तैं भूपति साह विताय गए घर दाम ज्यौं।
लोभ तैं धर्म बड़ाई अनीति तैं जैसे सनेह बिदेस बिराम ज्यौं।
नेह घटै जिमि जोति दिया ससि की दुति देखति ही रबि घाम ज्यौं।
नैंक वियोग हू तैं मुख प्यारी कौ छीन ह्वै जात है साझ के घाम ज्यौं।
॥१८१॥

इहाँ छीन ह्वै जात है इह साधारन धर्म करि कह्यौ।

---

१. मोह। २. तथ।

अथ द्वितीय भेद

कवित्त—

सरद की जौंन्ह सम सीत करत नैंन ?,
बासुरी की धुनि सम चित्त कौ हरति है।
कमला ज्यौं पूरति मनोरथनि नीकैं रति,
पावस ज्यौं वसुधा कौं रसीली करति है।
दामिनी ज्यौं घन स्याम तन मैं लसति सुधा,
मूरति ज्यौं नखसिख माधुरी[1] धरति है।
फूली रितुराज कैसी बेली अभिराम बाम
देखौ चलि स्यांम देखिवे की जौपैं रति है॥१८२॥

इहाँ न्यारे न्यारे साधारन धरम कहैं हैं।

अथ रसनोपमा लच्छन

आगैं आगैं कीजियै उपमेई उपमान।
वैसें ही रसनोपमा सोऊ द्वै विधि जानि॥१८३॥

सवैया—

मोहन के अभिलाष सी वैंसरु बैस समान सुरूप गन्यौ हैं।
रूप समान लुनाई बिराजै लुनाई समान सुजान पन्यौ हैं।
जैसी सुजानता तौसौ विचारि कैं कान्ह कुमार सौं नेह सन्यौ हैं।
नेह समान लहे सुखसाज सु राधे कौ जीवन धन्य गन्यौ हैं।
॥१८४॥

कवित्त—

कैसौ री सुधा सर मैं फूल्यौ री कमल नील,
जैसौ पंक बदन मयंक ही कौ हेरौ है।
कैसौ पंक बदन मयंक ही कौ हेरौ आली,
जैसौ अलि कमल माझ गहहु बसेरौ है।

---

१. माधरी।

कैसौ अलि कमल माझ गहत बसेरौ आली,
जैसौ मैन मुकर में मोरचा करेतौ है।
कैसौ मैन[1] मुकर मैं मोर चाकटेरौ आली,
जैसौ री कपोल अमोल तिलतेरौ है।।१८५।।

अथ एक देस बर्तिनी उपमा लच्छन

एक देसबर्तिनि जहाँ अंग मुख्ख उपमान।
कछुक पाइयै सब्द तैं कछुक अर्थ तैं जानि।।१८६।।

सवैया—

भट सेवत भूप भयंकर रूप बनै तह ग्राह समान चहै।
कवि पुंज तहाँ रतनावलि सी निसि बासर पास लगेई रहै।
विष से हथियार लखें अरिभार गहैं करवारन भाजत है।
कवितामृत कौ जस चंद हू कौं जगकारन राम नरिंद कहै।।१८७।।

इहाँ राजा सौं अरु समुद्र सौं उपमान अर्थ तैं पाइयत है। अंगन की उपमा सब्द तैं पाइयति है। तातैं एक देस मैं विसेष करिकैं कहत हैं। यातैं एकदेस बर्त्तिनी कहावै। इति कुलपति उक्ति।।

अथ अनन्वय लछिन

दोहा मुकुंद[2] कौ—

अनन्वयालंकार जब उपमेई उपमान।
रूप जुवन गुण रस भरी तो सी तुही न आन।।१८८।।

भाषा भूषन दोहा—

तेरे मुख की जोर कौं तेरौई मुख आहि।

सोमनाथ कौ दोहा—

नख सिख लौं निरखी सबै व्रजतिय भलैं सिँगारि।
पै तो सी सुन्दरि तुही श्री वृषभान कुवाँरि[3]।।

---

१. मेंन। २. कुकंद। ३. कुवारि

यह जोरी सी है यही जोरी परम रसाल।
अैसी सुन्दरि है इही तुम से तम लाल ॥१८९॥

केसव कौ कवित्त—

एक कहैं अमल कमल मुख राधे जू कौ,
एक कहै चंद महा आनद कौं कंदरी ;
होइ जौ कमल तौपै रैनि मैं सकुचि रहै,
चंद दुति बासर मै होति[1] अति मंद री।
रैंनि मैं कमल अरु चंद दुति बासर हू,
रैंनि अरु बासर विराजै जगबंद री।
देख्यौ मुख भावत न भावत कमल चंद,
यातै मुख मुख ही न कमल न चंद री ॥१९०॥

अथ उपमानोपमेय[2] लछिन

मुकुंद[3] कौ दोहा—

उपमा लगै परस्परसु उपमानुपमे[4] जानि।
तिय मुख मुख ससि सौ लसै ससि तुव मुख सौ मानि ॥१९१॥

भाषा भूषन—

खंजन है तुव नैन से तुव दृग खंजन सेन।

सोमनाथ कौ दोहा—

रहति डहडही रैनि दिन फूल फलनि कौं झेलि।
तिय तुव कंचन बेलि सी तो सी कंचन बेलि ॥१९२॥

करणभरन कौ दोहा—

तू रंभा सी रूप मै तो सी रंभा नारि।

---

१. हौति। २. उपमानो उपमेय। ३. कुकंद। ४. उपमानुपमे।

कवित्त—

सोभित पदम जैसे पद पदमिनि तेरे,
पद तैसे पदम प्रसिद्धि पहचानियैं।
सरद के चंद सौ प्रकासमान[1] मुख अरु,
मुख के समानि चारु चंद अनुमानियैं।
धनुष सी भौंह बाकी भौंह से धनुष माई,
रूप की निकाई श्री गुविंद सुखदानियैं।
मैंन के से[2] पैंने सर नैन बने आली तेरे,
नैन ऐसैं पैंने[3] सर मैंन[4] के बखानियैं ॥१९३॥

अथ पंचबिधि प्रतीप—

उपमेय कौ उपमान कीजै सो प्रथम प्रतीप। उपमान तें उपमेय कौ अनादर होइ सो द्वितिय।२। उपमेय तें उपमान जब अनादर पावै सो तृतिय। ॥३॥ उपमान उपमेय की समता लाइक जब नही होइ सो चतुर्थ॥४॥ वर्णनीय कौ उतकर्ष देखि करिकैं उपमान व्यर्थ होइ सो पंचम॥५॥

अथ प्रथम प्रतीप—

भाषा भूषन—

लोइन से अंबुज[5] बनैं मुख सौ चंद बखानि॥

सोमनाथ कौ दोहा—

देति मुकति सुन्दर हरषि सुनि रघुबीर उदार।
है तेरी तरवारि सी कालिंदी की धार॥१९४॥

अलंकार करणाभरन—

मोहि देत आनंद हौं वा मुख सो इह[6] चंद।
लीनौ आइ छिपाइ कै बैरी बादर बृन्द॥१९५॥

---

१. प्रकामान। २. से के। ३. नै। ४. मेंन। ५. अबुज। ६. इहह।

अथ द्वितीय प्रतीप—

भाषा भूषन—

गर्व करति मुख कौ कहा चंदहनी कैं जोहि ॥

करणाभरन—

गरब करति गति कौ चलति गजगति नीकैं देखि[1]।
कहा करै तन दुति गरब सुबरन दुति अबरेखि ॥१९६॥

सोमनाथ कौ दोहा—

बचन मधुर धुनि कौ महा रही गरूर बढाय।
नैंसिकि निज अँगुरीनि तैं सुनिए बीन बजाइ ॥१९७॥

अथ तृतीय प्रतीप—

भाषाभूषन—

तीछन[2] नैंन कटाक्षतैं मंद काम के बान।

करणाभरन[3]—

कोइल अपने वचन कौं काहे करति गुमान।
मधुर बचन[4] बनितानि के तेरे बचन समान ॥१९८॥

सोमनाथ कौ कवित्त—

करिकैं सिँगार रति मंदिर पधारत ही,
अंगनि तैं महकै सुगंध गति न्यारी कौ।
लचकारे बारनि के भार लचकति लंक,
कुच उचकत चकाचकि लखि वारी कौ।
खंजन तैं सरस छबीले दृग सोमनाथ,
रंचक निहारि मन हर्यौ गिरधारी कौ।
मंद मंद गवन गयंदहि गरद करै,
रद करै चंदहि अमंद मुख प्यारी कौ ॥१९९॥

---

१. देखि। २. छीछन। ३. करुणाभर्ण। ४. बन।

दोहा—

गरब बड़ाई कौ कहा हालाहल कहुँ टेरि।
तोते दुरजन बचन अति मारत लगत न बेरि।।२००।।
सुधा मधुर ताकौं कहा रह्यौ गरूर बढ़ाइ।
मधुर बचन कविजननि के तोहू तैं अधिकाइ।।२०१।।
क्यौं साजति है नवल तिय मनि आभरन अमंद।
तेरे तन की दमक तैं दामिनि दीपक मंद।।२०२।।

अथ चतुर्थ प्रतीप—

भाषाभूषन—

अति उत्तम दृग मीन से कहे कौन बिधि जाँहि।

अलंकार करणाभरन—

हरिमुख सुन्दर अति अमल ससि सम कह्यौ न जाइ।
डर चबाव लखत न बनत कहा कीजियै हाइ।।२०३।।

सोमनाथ कौ दोहा—

जे जग मैं पंडित सुकवि क्यौं कहि सकैं विचारि।
अति उदार श्रीराम सौं सुरतरु की अनुहारि।।२०४।।

कवित्त—

तेरौ मुख रचिकैं निकाई कौ निकेत राधे,
चारु मुख चन्द न रच्यौ है और तेरौ सौ।
छबिन कौ घेरौ सौ सुहाग कौ उजेरौ सब,
सौतिन की आखिन मैं पारति अँधेरौ सौ।
कान्ह की सौं कविनाथ केतौ पचि हार्‌यौ ताकी
उपमा न बनी हेरि हार्‌यौ मन मेरौ सौ।
ताकी सम काहि री बताऊ कहि नीकौ जाकौ,
चाकर सौ चन्द अरबिंद लागै चेरौ सौ।।२०५।।

तेरौ मुख देखै चन्द देख्यौ न सुहाइ अरु,
चंद के अछित जाकौ मन तरसतु है।
ऐसें तेरे मुख सौं कहत सब कवि ऐसें,
देखौ मुख चंद के समान दरसतु है।
वे तौ समुझें न कछू सेनापति[1] मेरे जान,
चंद तैं मुखारबिंद तेरौ सरसतु है।
हसि हसि मीठी मीठी बातैं कहि कहि ऐसे,
तिरछे कटाछ कव चन्द बरसतु हैं।।२०६।।

सुभग सिंगार अंग अंग सुकुवार चारु,
सरस उमंग सौं तरंग लेति तान की।
ऐसी छबि सिवा की न सची की न सारदा की,
रंभा रमा रति की न आन उपमान की।
बृन्दावन रानी सुखदानी जग जानी जिय,
जीवनि गुविंद स्याम सुन्दर सुजान की।
थोरी वै अनूप रूप रंग रसवोरी ऐसी,
गोरी भोरी नवल किसोरी वृषभान की।।२०७।।

अथ पाँचमौ प्रतीप—

भाषाभूषन—

दृग आगैं मृग कछु न ए पंच प्रतीप प्रकार।

सोमनाथ कौ दोहा—

तिय तो मुख ही सौं सदा रहै उजास अमंद।
कहियै कहा विरंचि सौ वृथा रच्यौ है चन्द।।२०८।।

करणाभरन कौ दोहा—

प्यारी देखैं तो दृगनि मृग के दृग कछु नाहि।
त्यौं ही खंजन मीन हूँ कमल कछू न लखाहि।।२०९।।

---

१. सेनपति।

कवित्त—

सहज सुबास अलि आस पास भ्रू विलास
मंदहास जासु देखि पूजी मन साधिका।
ऐसी छबि सिवा मैं न सची मैं न सारदा मैं,
रंभा रमा रति मैं रती कहू न आधिका।
जाकौं नित नेति नेति निगम अगम गामैं,
ध्यावैं तेई पावैं सुख संपति अगाधिका।
नील पट धारनि सुजस बिसतारनि,
गुबिंद सुखकारिनि बिहारिनि श्री राधिका ।।२१०।।

हरिन निहारि जकि रहे मन मान मारि,
वारिचर बारिज की बानक बिकाती है।
ह्राती? जानि छाती छिन छिमि? मुरझाती खरी
धीर मनरंजन जे खंजन जमाती है।
देवे कौं दृगनि की समान उपमा न आन,
ताहू पैं कविनु की उकति अधिकाती है।
प्यारी के अनौखे अनियारे इछननि छ्वै छ्वै,
तीछन कटाछन सौं कटि कटि जाती हैं ।।२११।।

ऊभी सी रहति अरबिंदनि की आभा मह—
बूबी मृगछौनन की छाँम करियति हैं।
डूबी जलजोरन मैं मीन वरजोरी सोभ,
भौंर मगरूवी बदनाम करियति हैं।
दूबी बनवीथनि चकोर चारुताई मन,
सूबी तुरगन की तमाम करियति हैं।
देखि देखि तेरी अँखियानि की अजूबी प्यारी,
खूबी खंजरीटनि की खाम करियति हैं ।।२१२।।

इति प्रतीप।

अथ रूपकालंकार लछिन

उपमान कौं अरु उपमेय कौं एक रूप करि दिखावै सो रूपक। सो द्विविध। तद्रूप ।।१। अभेद ।२। इन दोऊन के भेद तीनि तीनि हैं। अधिक, नून, सम।

अधिक तद्रूप[1] रूपक—

भाषाभूषन—

मुख ससि वा ससि तैं अधिक उदित जोति दिन राति।

अलंकार करणाभरन-दोहा—

अधिक कमल तें मुख कमल अमल सुबास निवास।
रहत सदा प्रफुलित करत हरि दृग अलिनि हुलास ।।२१३।।

सोमनाथ-दोहा—

विषधर नागिनि तैं सरस लिय लट नागिनि स्याम।
निरखत ही आवति लहरि बिसरि जात धन धाम ।।२१४।।

अथ नून तद्रूप रूपक—

भाषाभूषन—

सागर तैं उपजी न इह कमला अपर सुहाति।

करुणाभरन—

कैसे आवत हैं चलै लखि आली घनस्याम।।
कुसुम सरासर पैं न कर अपर काम अभिराम ।।२१५।।

सोमनाथ-दोहा—

मोहन इह सब बिधि लखै पै न गृहन कौ ईस।
सीसफूल दिनकर न यौं लख्यौ तरुनि के सीस ।।२१६।।

---

१. द्रूप।

अथ सम तद्रूप लछिन—

भाषाभूषन—

नैंन[1] कमल ए यैन है और कमल कह काम।

करणाभरन—

गए[2] दूरि दुख अति लह्यौ चित चकोर आनंद।
नैंन कुमुद[3] प्रफुलित भए निरखत तो मुखचंद॥२१७॥

सोमनाथ—

मन भाए फल देति नित सुनि मोहन रसखानि।
साँचे भुज तुव कामतरु सुरतरु और कथानि॥२१८॥

अथ अधिक अभेद रूपक—

भाषाभूषन—

गवन करति नीकी लगति कनक लता इह बाम।

अलंकारकरणाभरन—

अरुण वरन तेरे अधर विद्रुम[4] ही दरसाय।
अधिक मधुर रस पाय कैं प्रीतम रहे लुभाय॥२१९॥

सोमनाथ दोहा—

ब्रज मैं बिहरै छहूँ रितु पुजवैं सबके कांम।
नेहधार वरसत सदा मनमोहन घनस्याम॥२२०॥

केसव कौ कवित्त—

सोभा सखर माँझ फूल्यौई रहत सदा,
राजै राजहंस के समीप सुखदानियै।
केसौदास आस-पास सौरभ के लोभ घनै,
घ्रानिनि के देव भौंर भ्रमत बखानियै।

---

१. नेंन। २. गऐ। ३. कुमद। ४. विदुम।

होति जोति दिन दूनी निस मैं सहसगुनी,
सूरज सुहृद चारु चंद सम मानियै।
प्रीति कौ सदन छुइ सकै न मदन ऐसौ,
कमल वदन जग जानुकी कौ जानियैं ॥२२१॥

अथ नून भेद——

भाषाभूषन——

अति सोभित विद्रुम अधर नहि समुद्र उतपन्न।

अथ करणाभरन——

तेरौ आनन चन्द्रमा अमल सुधा कौ ऐंन।
चैन[1] चकोरन देत नहिं कुमुद फुलावत है न॥२२२॥

सोमनाथ——

जगमगात मंदिर सबै कान्ह निरखियै रंग।
है साँची तिय दामिनी पै न चपलता अंग॥२२३॥

अथ सम अभेद रूपक——

भाषाभूषन——

तुव मुख पंकज विमल अति सरस सुबास प्रसन्न।

सोमनाथ-दोहा——

निरखत[2] ही रंग रीझि कैं लई रंगीलें लाल।
छिन हूँ छुटति[3] न कंठ तैं इह तिय चंपक माल॥२२४॥

अथ करणाभरन दोहा——

तेरे अलकफदानि मैं परैं क्यौं न उरझाइ।
करसाइल मन लाल कौ कैसैं कै बचि जाइ॥२२५॥

---

१. चेन। २. निरखन। ३. छूटति।

कवित्त—

बैठ्यौ बनबीथनि बनाइ दरबार नव
पल्लव की कमल गुलाबन की गद्दी है।
केकी कीर कोकिल नवीन नवसिंदा कियैं,
और पतझार दफतर सब रद्दी है।
विरह पुरा? पै यह अमल लिखाय लायौ
हरैं हरैं चातुरी सौं चाँपत चौहद्दी है।
कीनें सरसंत सब संत और असंत पर,
काम छिति कंत कौ बसंत मुतसद्दी है।।२२६।।

अथ परिनाम लछिन—

वरननीय उपमान ह्वै कैं क्रिया करै सो परिनाम।

भाषाभूषन—

लोचन कंज बिसाल तैं देखति देखौ बाम।

अथ करणाभरन-दोहा—

भुज लतानि सौं लाल कौं गहि ब्रजबाल रसाल।
मुदित होति कर पंकजनि, मुख सौं लाइ गुलाल।।२२७।।

सोमनाथ दोहा—

नए नेह तैं दृगनि सौं कछुक लाज सरसाति।
लखि अलि तिय मुखचन्द सौं प्रीतम सौं बतराति।।२२८।।

काहू कौ कवित्त—

तरनि तनूजा तीर बीर बलभद्र जू के,
नीर के निकट ठाढ़े गोपिन के गन मैं।
बीजुरी से सौहैं पट कोटि काम से प्रगट,
निपट कपट जानि गोबिंद के मन मैं।
मोहिनी के मंत्र कै ऊ कामरू के जंत्र नैंन,
तंत्र मैं दिखावति है एक एक छिन मैं।
चली है पदंबुज सौं देखैं है दृगंबुज सौं,
गहै हैं हृदंबुज सौं अंबुज के बन मैं।।२२९।।

अथ उल्लेखालंकार लछिन—

सो दु बिधि। एक कौं बहुत जन बहुत रीति करिकै समुझैं सो **प्रथम** उल्लेख। एक कौं बहुत बिधि करकै बहुत गुणनि सहित बर्णिए सो द्वितिय।

प्रथम भेद—

भाषाभूषन—

अर्थिनु? सुरतरु तिय मदन अरि कौं काल प्रतीति।

मतिराम कौ दोहा—

जानति सौति अनीति हैं जानति सखी सुनीति।
गुरजन जानति लाज हैं प्रीतम जानत प्रीति ॥२३०॥

अथ करणाभरन दोहा—

पिय हिय हित सरसावनौ तुव मुख सुषमा कंद।
अमल कमल जान्यौ अलिनु लख्यौ चकोरनि चंद ॥२३१॥

कवित्त—

मल्ल जानैं बज्र अरु नर जानै नरबर,
नारि जानै यही मार मूरति रसाल है।
गोप जानैं स्वजन सु जादौकुल देव जानैं,
असत नृपति जानैं सासता[1] कराल है।
अज्ञानी विराट जानैं गोपी[2] परतत्त्व जानै,
रंग भूमि[3] रामकृष्ण गए ऐसे हाल है।
नंद जानै बालक गुबिंद प्रतिपाल जानै,
साल सत्रु बंस जानै कंस जानैं काल है ॥२३२॥

गंग कौ कवित्त-यथा—

पारथ प्रसिद्धि भूप भारत मैं तेरे डर,
भाजे देसपत्ती धुनि सुनिकै निसान की।

---

१. सासरता। २. गोगी। ३. रंगभुमि।

गंग कहैं ताकी रानी अति सुकुमारि सोऊ,
फिरै बिललानी सुधि भूली खान पान की।
बन बन गिरि गुहा हाथिनु हरिनु बाघ,
बानर तें रछ्या भई तिनहूँ के प्रान की।
सची जानी गजनि कलानिधि मृगनि जानी,
देवी जानी केहरि कपिनु जानी जानकी ॥२३३॥
× × ×
चामीकर[1] चोर जानी चंपलता भोर जानी,
चादनी चकोर जानी मोर जानी दामिनी ॥

अथ द्वितीय उल्लेख—

भाषा भूषन—

तुव रन अर्जुन तेज रबि सुरगुर बचन विशेष।

अथ करणाभरन—दोहा—

सीता सील स्वरूप मैं तू रति की उनहारि।
बानी है बर बचन मैं सब बिधि पूरी नारि॥२३४॥

निपट कौ कवित्त—

बुद्धि कों गने स सुधि दैवे कौं विधाता ऐसी,
चातुरी कौं वा × × ×।[2]
जोग काजै रुद्र औ बियोग काजै रामचन्द्र,
भोग कौ कन्हैया सब रोगनि कौं नीम सी।
निपट निरंजन कैं बिजिया बितान ज्ञान,
दैबे को बलि समान लैबे रतीम सी। (?)
ध्यान धरिवे कौं ध्रुव जागिवे कौं गोरख ज्यौं,
सोइवे कौं कुंभकरन भोजन कौं भीम सी॥२३५॥

---

१. चामाकर। २. यह पद हासिए में लिखा था। पत्रों को बराबर करने के लिए काटते समय यह पंक्ति कट गई। अतएव यह खंडित है।

अथ स्मरणालंकार लछिन—

उपमान कौं देखि कैं उपमेय की सुधि आवै स स्मर्ण।[1]

सोमनाथ कौ दोहा—

जब तैं अलि संग हौं गई खिले कोकनद लैन।
तब तैं छिन बिसरै नहीं ललित लाल के नैन ॥२३६॥

अलंकार करणाभरन दोहा—

उमड़ि घुमड़ि आए सघन सरसावैं उर कांम।
सुधि आवति घनस्याम की देखत ए घनस्याम ॥२३७॥

भाषाभूषन—

सुधि आवति वा बदन की देखैं सुधानिवास ॥

अथभ्रमालंकार लछिन—

एक कौं देषिकैं और बस्तु कौ भ्रम होइ सो भ्रम।

भाषा[2]भूषन—

बदन सुधानिधि जानिकैं तुव संग फिरत[3] चकोर।

अलंकार करणाभरन—

बृन्दावन बिहरत फिरत राधानन्द किसोर।
घन दामिनि जिय जानि संग डोलत बोलत मोर ॥२३८॥

सोमनाथ दोहा—

वर्नि सकै को लाल अब वा तरुनी के अंग।
नैंन तामरस जानि अलि भ्रम[4] सौं तजै न संग ॥२३९॥

अथ[5] संदेह लछिन—

उपमा कौ निश्चय नही सो संदेह।

भाषाभूषन—

बदन किधौं इह सीतकर किधौं कमल भय भोर।

---

१. स्मर्णा। २. भाष। ३. फिरति। ४. भ्रस। ५. अथ के पहले 'उपमा कौ' आया है जो पाठवृद्धि है।

कालदास कौ कवित्त--

'खरी खंड[1] तीसरैं रगीली रंग रावती मैं,
तकि ताकैं और छकि रह्यौ नदनंद है।
कालदास बीचनि दरीचनि ह्वै झलकति,
छबि की मरीचनि की झलक अमंद है।
लोग देखि भरमैं कहा धौं यह घर मैं सु,
रगमग्यौ जगमग्यौ जोतिन कौ कंद है।
लालनि की माल है कि ज्वालिन की झाल है,
चामीकर चपला कि रबि है कि चंद है॥२४०॥

कासीराम कौ कवित्त--

मंद ह्व चपत इंद्रबधू के बरन होत,
प्यारी के चरन नवनीत हू तैं नरमैं।
सहज ललाई बरनी न जाइ कासीराम,
चुई सी परति अति वाकी मति भरमैं।
एड़ी ठकुरायनि की नाइनि गहति जब,
ईंगुर सौ रंग दौरि आवै दरबर मैं।
दीनौं है कि देवै है बिचारै सोचै बार बार,
बाबरी सी ह्वै रही महावरी लै कर[2] मैं॥२४१॥

इह भ्रमालंकार है। अथ सुद्ध अपह्नुति लछिन--

आरोप तैं धर्म जहाँ दुरै सो सुद्ध अपह्नुति।

भाषा[3] भूषन--

उर पर नाहि उरोज ए कनक लता फल मानि।

सोमनाथ-दोहा--

बंदन की बैंदी नहीं क्यौं अलि करति बिचार।
परगट भयो सुहाग यह तिय के ललित लिलार॥२४२॥

---

१. खड। २. कार। ३. भाष।

किसोर कौ कवित्त—

गाजत न घन ए सघन तन तूर बाजैं,
मोर की न कूक ए निबाजन के हेले हैं।
बग की न पांति ए लसति माल कौड़िन की,
जल की न धुंधि ए बिभूतिन के रेले हैं।
फूली नहीं साँझलाल चादरि किसोर कहैं,
दौरत न बादर चपल गति चेले हैं।
सुनि री सलौंनी नारि काहे कौ करति संक,
पावस न भेले ए मलंगनि? के मेले हैं ।।२४३।।

हेत अपन्हुति लछिन—

वस्तु कौं जुक्ति सौं दुराइयै सो हेत अपन्हुति।

भाषाभूषन—

तीव्र न चंदन रे न[1] रबि बड़वानल ही जोइ।

सोमनाथ-दोहा—

नर मैं इतौ न बल अमर छिति पै धरै न पाय।
गिरि धरिबे कै हेत यह सेस अवतर्‌यौ आय ।।२४४।।

अलंकार करनाभरण-दोहा—

लखि सरवर के सलिल मैं नीकौ सोभित होइ।
कमल न चंद लसनि नहीं बिन कलंक मुख जोइ ।।२४५।

काहू कौ कवित्त—

अंक जो ससांक मैं है ताही तैं कलंक कहैं,
कोऊ कतौ पंक जलनिधि कौ प्रमानैं हैं।
कोऊ छयाया धरिनी कौ कोऊ पूत हरिनी कौ,
कोऊ गुर घरनी कौ दाग पहचानैं हैं।

---

१. नि

कोऊ कहै मंदिर की टक्कर लगी है ऐसें

भोरे भारे लोग ए अयान तैं यौं मानैं है।

हम तौ सलौंनौ रूप देखि याकी जननी नैं,

काजर कौ मुख पैं दिठौना दीनौ जानैं हैं।।२४६।।

अथ परियस्त अपन्हुति लच्छन—

और के गुण और विषैं आरोपन कीजै सो परियस्त[1] अपन्हुति।

भाषाभूषन—

होइ सुधाधर नाहि इह बदन सुधाधर ओप।

अथ करणाभरन दोहा—

नही सुधा मैं मधुर ई मधुराई अधरानि।

मो अधरानि मिलाइ दै जीव दान सुखदानि।।२४७।।

सोमनाथ कौ दोहा—

हियैं लाल कैं चुभत ही बेसुधि किए निदान।

तीखे मनमथ सरन ही तिय दृग तीक्षण बान।।२४८।।

अथ भ्रांता अपन्हुति लछिन—

वचन तैं जब परायौ भ्रम जाइ सो भ्रांति अपन्हुति।

सोमनाथ कौ दोहा—

लाल अरुन ई दृगनि क्यौं कहौ आरसी ताकि।

होरी आगम जानि कैं पियौ रामरस छाकि।।२४९।।

अलंकार करणाभरन—

हियौ सिरायौ अति कहा चंदन लियौ लगाय।

बहुत दिननि में भावतौ मोहि मिल्यौ अलि आय।।२५०।।

भाषाभूषन—

ताप करत है ज्वर कहा ना सखि मदन सँताप।

---

१. परियस्थ।

अथ छेकापन्हुति लछिन—

जुक्ति करिकै और सौं बात दुराइयै सो छेकापन्हुति।

भाषाभूषन—

करत अधर छत पिय सखी नहीं सीत रितु बाइ।

अलंकार करणाभरन—

आए अति सीतल भई दीनी ताप निवारि।
क्यौं सखि प्रीतम के लखैं ना सखि ससिहि निहारि॥२५१॥

सोमनाथ कौ छन्द— अरिल

निरखत नैंननु चैन अधिक उपजावई।
कर परसैं ते अंग मनोज वढ़ावई।[1]
तिय यह चरचा करति सुरसिक गुविंद की।
नहि अलि सुंदर वरन सरस अरविंद की॥२५२॥

अथ कैतव अपन्हुति लछिन—

एक कौ मिसु करिकैं आन कौ वर्णन कीजै सो कैतव अपन्हुति।

भाषा भूषन—

तीक्षण तीय कटाक्ष मिस वरषत मनमथ वान[2]॥

सोमनाथ कौ दोहा—

राखि रही समझाइ पैं बिसरि गई कलकानि।
हरि मुरली की टेर मिस नित विष वरषत आनि॥२५३॥

अलंकार करणाभरन कौ दोहा—

निकसति[3] मालिन सौं झमकि चंचल गति दरसाइ।
कामिनि के मिस मो निकट दामिनि ह्वै ह्वै जाइ॥२५४॥

---

१. बढ़ावहीं। २. इस प्रति में यह पाठ 'तीक्षण तीय कटाक्ष मिस बरष बान' दिया हुआ है। इसे 'भाषाभूषण' ग्रंथ से मिलाकर शुद्ध किया गया है। ३. निकसिति।

अथ उत्प्रेक्षा लछिन—

मुख्य वस्तु मैं आन[1] कौ तर्क कीजै सो उत्प्रेक्षा। सो त्रिविधि। वस्तु, हेतु, फल।

अथ वस्तु उत्प्रेक्षा—

भाषाभूषन—

नैंन मनौ अरविंद हैं सरस बिलास बिसेष।

अलंकार करणाभरन कौ दोहा—

सोहत सुंदर स्याम सिर मुकुट मनोहर जोर।
मनौं नीलमनि सैल पर नाचत राजत मोर॥२५५॥
सोभित ओढ़ै पीत[2] पट स्याम सलौंने गात।
मनौ नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यौ प्रभात॥२५६॥

अलंकारमाला कौ दोहा—

तम देखैं संका यहै भई जु मो मन आइ।
चंकई की विरहागि कौ रह्यौ धूम यह छाइ॥२५७॥

पुनः ?—

लीपत सौतम ? अँगनि कौं वरषत अँजन अकास।

अलंकारमाला—

होरी खेलत है सखी दिसि जुवतिनि सौं जोर।
मानहु वीर अबीर इह फैलि रह्यौ चहुँ ओर॥२५८॥

सिरोमनि कौ सवैया[3]—

आयौ अषाढ़ परी अति गाढ़ पहार सी रैंनि भई सखी ठाढ़ैं।
प्रात ही तैं करैं कोकिला कूक सिरोमनि लेत करेजौ ई काढ़ैं।
कौन सुन अब कासौं कहौं चहूँ ओरतैं मारति दामिनी गाढ़ैं।
कामिनि के हनिवे कौं मनौ झमकी चमकी जमकी जम डाढ़ैं॥२५९॥

---

१. आनन। २. पीति। ३. कवित्त।

पुखी कौ कवित्त—

सिंघमर बर की सुधारी सरवर पारि,
फूले तरवर अरु बिपन सँवार्यौ है।
ठाढ़ी तहा प्यारी सँग बिहरि बिहारी इत,
रैंनि[1] उजियारी पुखी वदन उजारौ है।
कान तैं तरौंना टूटि परसि पयोधर कौं,
धरनी परत कणी झन झनकार्यौ है।
रोस भरिपूर जिय जानिकैं कलंकी कूर,
मानौं चन्द्रचूर चंद्रचूर करि डारचौ है॥२६०॥

अथ हेतु उत्प्रेक्षा—

अलंकार करणाभरन—दोहा—

छैल छबीले रावरे अधिक रसीले नैंन।
मानौ मद माते भए यातैं राते ऐंन॥२६१॥

अलंकार माला कौ दोहा—

भूमि चपत पद तुव पद जुगल भए अरुण इहि लेख।

सवैया—

एक बधू बहु भाँति बकै भटकै घरही घर दूसरी नारी।
तीसरे मार कुमार भयौ कहि गोविंद सो उनमत्त महारी।
सिंधु बसैं अहि की सयनी पुनि बांहन भोगिन ही कौ अहारी।
आपने भौंन के देखि चरित्रनि सूखल दार ? भए यौं मुरारि॥२६२॥

पुखी कौ कवित्त—

चौंथती चकोर चहुँ ओर मुखचंद जानि,
रहे बचि डरनि दसन दुति संपा के।

---

१. रैंनि।

लीलि जाते बरही बिलोकि बैंनी ब्यालगुण,
गुही पै न होती जौ कुसम सर पंपा के।
कहै कवि पुखी ढिग भोहैं न धनुष होती,
कीर कैसैं छाड़ते अधर बिंब झंपा के,
दाख के से झौंरा झलकै[1] जोति जोवन की,
भौंर चाटि जाते जौन होती रंग चंपा के ॥२६३॥

अथ फल उत्प्रेक्षा—

अलंकारमाला—

कुच धरिबे कौं कटि बलितु बाधी कंचन दाम।

अलंकार करणाभरन-दोहा—

तेरे तन के बरन की सुवरन हौं न समान।
मानौ परि पावक जरै बस्यौ सकल जिहान ॥२६४॥

भाषाभूषन—

तुव पद समता कौ कमल जल सेवत इक पाइ।

अलंकार करुणाभरन-दोहा—

तेरे सूक्षम लंक की लहन एकता काज।
करत मनौ बनबास है मृगनैनी मृगराज ॥२६५॥

केशव कौ कवित्त—

गृहन मैं कीनौ गेह[2] सुरनि दै राख्यौ देह,
सिव सौं कियौ सनेह जाग्यौ जग चारचौ है।
जलधि मैं जप्यौं जप तपनि मैं तप्यौ तप,
केसौदास वपु मास मास प्रति गारचौ है।
उडगन ईस द्विज ईस औषधीस भयौ,
जद्यप जगत ईस सुधा सौं सुधारचौ है।
सुनि नदनंद प्यारी तेरे मुख चंद सम,
चंद पै न भयौ कोटि छंद करि हारचौ है ॥२६६॥

---

१. झलकति। २. ग्रेह

अथ तीनौ उत्प्रेक्षा—[1]

सवैया—

वम ई ? नव नाभि हि तैं निकसी इक स्यामल ब्यालि रुमालि सही।
चित चाइ सौं उच्च चढ़ी जुग खंजन नैननि के भख कौं उमही।
मग मैं लखि नासा खगेस बिसेस डरी उर और ही रीति गही।
कुच द्वै दृढ़ सैल की संध्य कैं मध्य गुबिंद उहै दुरि जाति रही।।२६७।।

अथ रूपकातिसयोक्ति लछिन—

उपमान केवल ही होइ सो रूपकातिसयोक्ति।

सवैया—

चंप लता लगे श्रीफल द्वै तिनपै इक कंबुक सोहै सलौना।
तापै गुबिंद खिले इक कंज पै खेलत खंजन के जुग छौना।
तापै सरासन द्वै सर हैं तहाँ हेमपटी कौ बिछ्यौ है बिछौना।
तापै घटा बक पंगति साज लख्यौ इक अद्भुत आज खिलौना।।२६८।।
स्याम घटा मधि हैं ससि मंडल तामैं कछू चमकै चपला री।
एक नक्षत्र सुदर्प्पन द्वैं इक नील सरोज लसै सुखकारी।
द्वै सर दोइ सरासन द्वै रबि द्वै अवली अलि की अतिकारी।
त्यौं बनी एक त्रिबैनी[2] गुबिंद इहै छबि आज अनौखी निहारी।।२६९।।

भाषाभूषन—

कनक लता पर चंद्रमा धरै धनक द्वै बान।

अथ अपन्हवातिसयोक्ति लछिन—

और के गुन और पर जहाँ ठहराइयै सो अपन्हवातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

सुधा भर्‌यौ इह वदन तुव चंद कहैं बौराइ।

अलंकारकरणाभरन—

और फलनि मैं मधुर रस कहैं चतुर सोहैन।
तो नथ के लटकत तरैं बिंब भरे रस ऐन।।२७०।।

---

१. उत्प्रेक्ष। २. त्रबैनी।

सोमनाथ कौ दोहा—

निस दिन सुख सरस्यौ रहै राजत गुनी हजूर।
बिबुधपाल महाराज तू इन्द्रहि कहैं सुकूर॥२७१॥

केसव कौ कबित्त—

है गति मंद मनोहर केसव आनदकंद हियें उलहे हैं।
नैन बिलासनि कोमल हासनि अंग सुवासनि गाढ़े गहे हैं।
बंक बिलोकनि कौ अवलोक सुमार है नंद कुवार रहे हैं।
एई तौ काम के बान कहावत फूलन के बिधि भूलि कहे हैं॥२७२॥

अथ भेदकातिसयोक्ति लछिन—

'और' 'और' ए पद होइ जहाँ सो भेदकातिशयोक्ति।

अलंकारमाला—

औरै चलनि चितौनि तिय औरे औरै बानि।

भाषाभूषन—

औरै हसिबौ देखिबौ औरै याकी बानि।

अलंकारकरणाभरन—

औरै चितवनि चखनि की औरै ही मुसकानि।
औरै ही तेरी चलनि औरै ही बतरानि॥२७३॥

सोमनाथ कौ दोहा—

औरै गति बिथुरी अलक और रंग के नैंन।
तिय हमसौं अजहुँ कहति औरै विधि के बैंन॥२७४॥

सवैया[1]—

जद्यप[2] है अति ही अति सुंदर कोटिक मन्मथ के मन लोभा।
जो कोऊ जान सु जानैं सखी घनस्यांम सनेही के चित्त की चोभा।

---

१. काहू कौ सवैया—किन्तु यह सवैया गोविन्ददास की है।
२. जधप।

ज्यौं पुट सौं पट रंग खुलै यौं झिलैं अंग अंग अनंद की गोभा।
लाड़िले गोबिंद लाल जू के ढिग आयैं लड़ैती की और ही सोभा ॥२७५॥

अथ संबंधातिसयोक्ति लछिन—

अजोग्न कौं जोग्न कहिजै सो संबंधातिशयोक्ति।

भाषाभूषन—

या पुर के मंदिर कहैं ससि लौं ऊँचे लोग।

अलंकारमाला—

परसति या नृप की धुजा रबि हय के पद चाहि।

सोमनाथ कौ दोहा—

दशरथ राजकुवार सुनि जै ता जालिम जंग।
ऊँचे लगत सुमेर से तेरे समद मतंग ॥२७६॥

नंददास जी कौ दोहा—

धवल नवल ऊँचे अटा करत घटा सौं बात।

अथ असंबंधातिसयोक्ति लछिन—

जोग्न कौं अजोग्न कहनों सो असंबंधातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

तो कर आगैं कलपतरु क्यौं पावैं सनमान।

सोमनाथ कौ दोहा—

दसरथ राजकुवार सुनि जालिम तुव तरवारि।
तापैं दुखनि[1] विदारिवौ तड़िता पढ़ति विचारि ॥२७७॥

अलंकार करणाभरन—

पूरत प्रीतम काम जो उपजत जो मन माहि॥
ताकी सरवर कलपतरु कह्यौ जातु है नाहि ॥२७८॥

---

१. दुवनि।

अथ अक्रमातिसयोक्ति लछिन—

बिना क्रम कारन कारज जहाँ एक संग ही होइ सो अक्रमातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

तो सर लागै साथ ही धनुषहि अरु अरि अंग॥५१॥

सोमनाथ कौ दोहा—

नख सिख लौं तिय थरहरी उर मैं सरस्यौ नेह।
पिय के चाले साथ ही भई दूबरी देह॥२७९॥

अथ चपलातिसयोक्ति लछिन—

कारन के नाम ही तें कारज होई सो चपलातिसयोक्ति। बाजूबंद बलयादि बाहु तें छिटकि परे इत्यादि।

भाषाभूषन—

कंकन ही भई मूँदरी पियागमन सुनि आज।

सोमनाथ कौ दोहा—

नाम सुनत ही नेहकौ भये चीकने वार।

अलंकार करणाभरन—

मागी विदा विदेस कौं पिय साहस उर लाय।
सुनत वालकी हाल ही चुरी चढ़ी भुज जाय॥२८०॥

गंग कौ कवित्त—

बैठी तिय सखिन मैं ललन चलन सुन्यौ,
सुख के समूह मैं वियोग आगि भरकी।
कहैं कवि गंग जाके अंग के बसन हू कौं,
परसी जो सखी जाकैं व्यथा भई ज्वर की।
प्यारी कौ परसि पौन पौन गयौ मानसर,
परसत औरै गति भई मानसर की।
सूखि गयौ सरवर जरि गए जलचर,
पंक हू सुखाइ गई धरा सबै दरकी॥२८१॥

अथ अत्यन्तातिसयोक्ति अलंकार लछिन—

अगिलौ पिछिलौ क्रम जहा नही सो अत्यंतातिसयोक्ति।

भाषाभूषन—

बान न पहुचे अंग लौं अरि पहलैं गिरि जाहि॥

सोमनाथ कौ दोहा—

पीछैं पीयौ रामरस चढ्यौ पहल ही आय।

अथ तुल्ययोगिता त्रिविधि[1]—

प्रथम—

एक सब्द मैं हित अरु अहित ए दोउ होइ सो प्रथम[2]
अरु बहुतनि मैं एक ही बानि जहा होइ सो **दुतिय**।
बहु मैं गुननि करि जहाँ समता होइ सो **तृतिय**।

अथ प्रथम तुल्ययोगिता—

भाषाभूषन—

गुन निधि नीकैं होत तू तिय कौं अरि कौं हार॥

अलंकारमाला—

किय तुम सुबस कृपान करि मित्र[3] सत्रु मतिवान।

सोमनाथ—

बखत बली श्रीराम कौ है इह सहज सुभाव।
मित्र अमित्रनि कौं सदा निरखि देत सिरपाव॥२८२॥

अलंकार करणाभरन—

तो चतुराई निरखिहौं रीझी है मति ऐंन।
भरी लुनाई पिय दृगनि अरु सौतिन के नैंन॥२८३॥

---

१. त्रविधि २. 'प्रथम'—शब्द छूट गया है। ३. मित्रु।

काहू कौ कवित्त—

राजनि के राजा महाराजा रामचंद्र वीर,
धीरज जिहाज तेरे गुन अवदात हैं।
तू तौ गुणवत गुन जानतु है गुनीन कै,
निगुनी गुनी कौं देवौ वार न सुहात है।
कीनी वसुधा तैं सुभ गुण ते सुधा के सम,
तेरे साथ लरैं कौन भूपनि की जाति है।
तेरे घर हय हाथी रथ सुखपाल भरे,
यातैं तोतैं सत्रु मित्र पाइ चले जात हैं ॥२८४॥

अथ द्वितिय भेद—

भाषाभूषन—

नवल बधू को बदन दुति अरु सकुचत अरबिंद।

सोमनाथ कौ दोहा—

नैंक न चंचल ताल है किये हजारक छंद।
दिनकर नंदन की चलनि अरु मूरख मतिमंद ॥२८५॥

अलंकारमाला—

सकुचनि बिरहनि मुख कमल एकै गति यह जोइ।

सवैया—

बृच्छ विहंग तजैं फल हीन तजैं मृग जौ बन दग्ध दिखाई।
गंध बिना अलि फूल तजैं सर सूखे कौं सारस हू तजि जाई।
सेवक भूपति भ्रष्ट तजैं बिन द्रव्य तजैं नर कौं गनिकाई।
या जग माँझ गुविंद कहैं बिन स्वारथ कौन की कासौं मिताई ॥२८६॥

अथ तृतीय पद—

भाषाभूषन—

तुही सिद्धि तुही प्रेरमनिधि तुही चंद अरबिंद।

अलंकार करणाभरन—

रमा सची रति उरबसी रंभा गिरिजा नारि।
तू ही है अति सुंदरी श्री वृषभान कुमारि॥२८७॥

सोमनाथ कौ दोहा—

निसि बासर नँदलाल सौं नेंक न बिछुरति बाल।
तुही मोहनी मन तुही मुरली तू बनमाल॥२८८॥

अथ दीपक लछिन—

बर्ण्य अबर्ण्य कौ अपने अपने गुननि सौं एक भाव जहाँ होइ सो दीपक

भाषाभूषन—

गजमद सौं नृप तेज सौं सोभा लहत बनाइ।

अलंकार माला—

घर करि दामिनि लसति है नीलांबर करि बाम।

अलंकार करणाभरन—

सरनि सरोजनि सौं तरुनि फल फूलनि अधिकाय।
काजर सौं कामिनि दृगनि अति सोभा सरसाय॥२८९॥

सोमनाथ कौ दोहा—

सरसैं सिंधु तरंग तैं चंचल तातैं नैन।

कवित्त—

मद सौं दुरद अरबिंद सौं सरोवर,
सरवरी अमंद चंद सुंदर कौ छायकैं।
सुंदरि सुसील तैं तुरंगम तरलता मैं,
मंदिर गुविंद नित्य उत्सव कौ पायकैं।
बानी ब्याकरण तैं मिथुन तैं मराल सभा,
पंडित तैं कुल सतपुत्र उपजाइकैं।
नीति तैं रज्याई राजा तुमतैं अवनि त्यौंही,
विष्णु तैं तिलोकी छबि लहति बनाइकै॥२९०॥

अथ दीपक आवृत्ति[1] त्रिविधि वर्णनं—

पद की आवृत्ति जहाँ होइ सो **प्रथम दीपक**। **दूसरे** अर्थ की आवृत्ति। **तीसरी** पद अरु अर्थ दोऊन की मिलिकै आवृत्ति। तिनके क्रम सौं उदाहरन।

अथ प्रथम—

कवित्त काहू कौ—

तेज कौ प्रकास जहाँ तमकौ बिनास जहाँ,
कौंन देखिवे कौं कर दिया पकरत हैं।
ऐसौ स्वर्गवास अपछरा ससि पास सब,
सुखनि के साज करि दिया पकरत हैं।[2]
बैठ कवि मान सुनैं किन्नर कौं गान जाकौं,
मैंनका समान तन भूषन करत हैं।
सुंदर बसन जहाँ सुधा कौ असन हूरै,
मरन कौं जातैं पीरा भूषन करत हैं ॥२९१॥

भाषाभूषन—

घन बरषैहै री सखी निस बरषैहै देखि।

अलंकारमाला—

सरस कियौ कानन सकल आवत मनमथ मित्त।
कुसम सरासन अरु सरस कियौ कामिनिनु चित्त ॥२९२॥

सोमनाथ—

विरह सताई देह पिय अजहूँ दरसन देह।

अथ द्वितीय दीपक आवृत्ति—

अलंकार करणाभरन-दोहा—

आवत ही परदेस तैं पिय प्यारौ सुख दैंन।
लखि हरखे चख सखिन के मुदित भए तिय नैंन ॥२९३॥

---

१. आवर्ति २. 'दिया पकरत हैं'—पहली पंक्ति की ही आवृत्ति हो गई है। मूल पाठ लुप्त हो गया है।

भाषाभूषन—

फूले वृक्ष कदंब के केतुक विकसे आइ।

काहू कौ कवित्त—

जनक के बाग खरी राजति सुहाग भरी,
देखति कुसुम पुनि सवै द्रुम खूले हैं।
बिकसे गुलाब सौंन केतुकी औ चंपा खिले,
राय वेलि मल्लिका कुसुम पुंज फूले हैं।
छोटी बड़ी लता सब फूल सौं भईं सुपेद
नीर भयौ सेत बिब नलिन कौं झूले हैं।
जहाँ तहाँ सुक पिक सारिका के बोल सूधे,
श्रुतिन कौं लागैं तैसे पौंन अनकूले[1] हैं ॥२९४॥

अथ तृतीय दीपक आवृत्ति—

भाषाभूषन—

मत्त भए हैं मोर अरु चातक मत्त सराहि।

अलंकार करणाभरन—

दमकन लागी दामिनी करन लगे घन घोर।
बोलति माती कोइलैं, बोलतमांते मोर॥२९५॥

श्रीपति कौ कवित्त—

स्यामा स्याम जानतु हूँ स्यामा स्याम मानतु हूँ,
स्यामा स्याम पूजत जपत स्याम स्यामा हौं।
स्यामा स्याम ही सौं काम स्यामा स्याम कौं प्रनाम,
स्यामा स्याम ही कौ नाम रटौं आठौ जाम हौं।
श्रीपति सुजान स्यामा स्याम मेरे जीव प्रान,
स्यामा स्याम ही कौ ध्यान धरौं अभिराम हौं।
स्यामा स्याम मेरे मन काम के कलपतर,
स्यामा स्याम की सौं स्यामा स्याम कौ गुलाम हौं ॥२९६॥

---

१. अनकले।

सवैया—

श्रीमनमोहन राधिका कौं अखरा मथुरा चलिवे के सुनाए।
बात कहैं पुनि सूखि गयौ मुख अंग सबै बिरहानल छाए।
चाहै कह्यौ न कछू कहि आवत सीस नवाइ कैं नैंन दुराए।
जी भरि आयौ हृदै[1] भरि आयौ गरौ भरि आयौ दृगैं भरि आए ।।२९७।।

नेह भरी डोलति सनेह भरी सारी अंग,
आनँद उछाह भरी बालम समेत हैं।
गहकि गहकि गावैं बहकि बहकि गात,
डहकि डहकि वारी पिय मुख देत हैं।
हमकौं तौ होरी विधि होरी में दियौ है दुख,
प्रीतम बिदेस कहूँ दुख कौन छेत है।
और सब लालन कौं अंक भरि लेलि हम,
हियौ भरि गरौ भरि आखैं भरि लेति हैं।।२९८।।

अथ प्रतिवस्तुपमा लछिन—

दोऊ वाक्य समान होइ जहा सो प्रतिवस्तुपमा।

भाषाभूषन—

सोभा सूर प्रतापवर सोभा सूरहि बान।

सोमनाथ-दोहा—

सुख विलसौ मिलि कान्ह सौं तजौ अटपटे तेह।
लसति नारि मनिमाल सौं लसति नारि पिय नेह।।२९९।।

अथ दृष्टांत लछिन—

बिब अरु प्रतिबिब कौं एक भाव होइ सो दृष्टांत।

भाषाभूषन—

कांतिमान ससि ही बन्यौ तू ही कीरतिमान।

---

१. हृदौ।

सोमनाथ दोहा—

परबत पच्छि[1] विदारनौ सुरपुर मैं अमरेस।
परगट गंजन जगत मैं श्री रघुवीर नरेस॥३००॥

अलंकार करनाभरन—दोहा—

प्रीति रावरी साँमरे रही सकल व्रज छाइ।
फैली ससि की चाँदनी ज्यौं दिसानि मैं जाइ॥३०१॥

अथ त्रिविध निदर्शन वर्णनं—

दोऊ बाच्यार्थ समान कहियैं सो **प्रथम**।
और बस्तु मैं और गुन अरु एक ही क्रिया होइ सो **द्वितीय**।
कारज देखि कै भले बुरे कौ भेद बताइयै सो **तृतिय**।

अथ प्रथम निदर्शना—

भाषाभूषन—

दाता सौम्य सुअंक बिन पूरनचंद बनाइ।

सोमनाथ—

फैलि रह्यौ मनि सदन मैं आनन अमल प्रकास।
अलकनि चंचलता अजू नागिनि गमन विलास॥३०२॥

अलंकारमाला-दोहा—

अन हठ पिय हिय नवल तिय लगै चाह सौं धाइ।
अष्ट सिद्धि नवनिधि मिलत अनायास ह्वै जाइ॥३०३॥

द्वितीय निदर्शना—

भाषाभषन—

देखौ सहजैं धरत ए खंजन लीला नैंन।

---

१. पछि।

सोमनाथ-दोहा—

श्री रघुनाथ महाबली तेरौ सुजस गंभीर।
लहि बिहार कलहंस कौ लसत मानसरतीर।।३०४।।

अलंकार करनाभरन—

धारत लीला मीन की लोचन तेरे बाल।
होइ रहे मोहित अहे अलि नदनंद रसाल।।३०५।।

अथ तृतीय निदर्शना—

सोमनाथ-दोहा—

सबै ठौर समता भली दूजी बिधि न सबाद।
श्रवन सुखद कहि कौंन कौं सठ पंडित कौ बाद।।३०६।।

भाषाभूषन—

तेजस्वी सौ निबल बल महादेव अरु मैंन।[1]

कवित्त—

कवित्त करत तुक दौरैं मन दौरै जहाँ,
जहाँ जहाँ औरै औरै औरै सुठि साँकरैं।
सौंने की सी साँकर ए मिसुरी के काँकर से,
आँक रस आकरै सुहाँकरै निसांक रैं।
सौंठे की सी गाठैं तुक गाठैं तेऊ गांठिकीन,
सांठे सौं लै आंनी ऐसे आँकन के राकरैं।
तेऊ ते समान यों जिहांन कौ जमानौं जानि,
भौंर भयौ चाहै षटपद भद माँ करैं।।३०७।।

× × × ×

सज्जन कुलीनन कें पहलैं तौ कोय नाहि,
कदाचित करै छिन एक मैं परहरै।

---

१. मेंन।

देवीदास कौ कवित्त—

करैं परकाज लाज धरैं दृग उर मध्य
दया के समूह केते देवता से मौन हैं।
मनिख ? समान सम देखत हैं हित करि,
पंच में सरस मृत लोक जाके भौंन[1] हैं।
देवीदास कहैं फिरैं आपनेई स्वारथ कौ,
स्वान के समान ते तौ राक्षिस की ज्यौनि हैं।
इतने प्रसिद्धि जाकौं जानतु है जग परि,
और कौ करत बुरौ तेन जानौं कौंन है॥३०८॥

अथ व्यतिरेक[2] लच्छन—

उपमान तैं उपमेय अधिक देखियै से व्यतिरेक।

भाषाभूषन—

मुख है अंबुज सौं सखी मीठी बात विसेक।

अलंकारमाला—

श्रीफल से सुंदर उरज कठिन भेद इह एक।
गिरि से ऊँचे रसिक मन कोमल प्रकृति विसेक॥३०९॥

अलंकार करनाभरन—

राधा तुव मुख चंद सौ बिन कलंक सरसाइ।

अथ सहोक्ति लछिन—

एक संग ही रस कौं सरसाइकैं वर्णन कीजै सो सहोक्ति।

भाषाभूषन—

कीरति अरिकुल साथ ही जलनिधि पहुचे जाइ।

अलंकारमाला—

झटकि उपारयौ गिरि हरी मघवा गरब समेत।

---

१. भौंन। २. व्यतरेक

अलंकार करणाभरन—

मान मनावन आप ही आए श्याम सुजान।
मान मानिनी संग ही छूट्यौ सौति गुमान॥३१०॥

सोमनाथ—

हरि दुरि निरखौ हियें मैं जोवन कियौ विहार।
बढ़ दृगनु के संग ही नव तरुनी के बार॥३११॥

केसव कौ कवित्त—

सिसुता समेत भई मंदगति लोचननि,
गुननि सौं बलित ललित गति पाई है।
भौंहनि की होड़ा होड़ी ह्वै गई कुटिल अति,
तेरी वानी मेरी रानी लागति सुहाई है।
केसौदास मुख हास साथ छीन कटि तट,
छिन छिन सूछिम छबीली छवि छाई है।
वीर बुद्धि वारनि के साथ ही बढ़ी है पुनि,
कुचनि के साथ ही सकुच उर आई है॥३१२॥

बिहारी कौ दोहा—

अर तैं टरत न वर परे दई मुरक मन मैंन।
होड़ा होड़ी बढ़ि चले चितचतुराई नैंन॥३१३॥

अथ विनोक्ति[1]—

द्वै विधि। कछु बिन छोज प्रस्तुति होइ सो **प्रथम**। प्रस्तुति कछु हीन तातैं अधिक सोभा पावै सो **द्वितिय**।

अथ प्रथम विनोक्ति—

भाषाभूषन—

दृग खंजन से कंज से अंजन बिन सोभैं न।

---

१. **विणोक्ति—राजस्थानी प्रभाव—क्योंकि कवि राजस्थान का है।**

अलंकार करणाभरन—

बसन आभरन मिलि भई सोभा सरस अतोल।
सबै सिँगार अमोल पै फीकौ बिना तमोल॥३१४॥

मुकुंद कौ—

सब गुन सहित प्रवीन तू बिना नम्रता हीन।

काहू कौ कवित्त—

कंत बिन कामिनि बसंत बिन कोकिल ज्यौ,
दंत बिन दिग्गज कमल बिन सर है।
नीति बिन राज ज्यौँ महीप मजलसि बिन,
दान बिन मान जैसे मूँड़ बिन धर है।
पानी बिन मोती जैसैँ बानी बिन कंठ जैसैँ,
जोति बिन आखैँ जैसैँ पंछी बिन पर है।
बिन रीझ दैवौ यौ कवित्त रस चित्त बिन,
गति बिन हंस जैसे मति बिन नर है॥३१५॥

अलंकारमाला—

सब विधि नीकौ दुर्ग अति पै सदोष बिन कूप।

सोमनाथ—

नीकी आनन अरुनई भृकुटी की विधि वंक।
अलबेली बिन छीनता लसति न तेरी लंक॥३१६॥

अथ द्वितीय विनोक्ति—

भाषाभूषन—

बलि सब गुन सरसात तू रंक रुखाई है न।

अलंकारमाला—

बिना दुष्ट राजत सु अति नृप तव सभा सुढंग॥

अलंकार करणाभरन—

वह मोहन सबगुन निपुन जानत अति रस रीति।
है प्रतीति वाकी निपट बिना कपट की प्रीति॥३१७॥

मुकुंद कौ—

बिन काइरता नृपति तुव सब गुन अति छबि देत॥

अथ समासोक्ति लछिन—

प्रस्तुत बर्णन मैं अप्रस्तुति फुटै सौ समासोक्ति।

भाषाभूषन—

कुमुदिन हूँ प्रफुलित भई देखि कलानिधि साँझ॥

अलंकारमाला—

अरुन जु यह मुख वारुनी चुंबत चंद सुजान॥

सोमनाथ—

मधुपहु भए सचेत तिय लखि फूल्यौ रितुराज॥

अलंकार करनाभरन—

सहित सुमन रस लैंन मैं अलि यह महा प्रवीन।
पावत जहाँ सुबास है होत तहाँ ही लीन॥३१८॥

अथ परिकर लछिन—

आसय लियै जहाँ विसेषन होइ सो परिकर।

भाषाभूषन—

ससि बदनी यह नाइका ताप हरति है जोइ।

सोमनाथ—

पैंने तिय के नैन ये बेधत हियौ निधान॥

अलंकार करनाभरन—

सुधा बचन आनदकरन हियैं दया सरसाय।
विकल परी उह बाल है चलि बलि लेहु जिवाइ॥३१९॥

अलंकारमाला—

चलि मिलि पियहिय ताप[1] हरि अंगति चंदन बारि।

अथपरिकरांकुर लछिन—

अभिप्राय सहित सिसेष्य जब होइ सो परिकरांकुर।

भाषाभूषन—

सूधैं पिय के कहे तैं नेंकु न मानति बाँम॥

अलंकारमाला—

चारि पदारथ देत हैं सदा चतुर्भुज देव॥

अलंकार करनाभरन—

तन की रही सभार नहि गई प्रेम रस भोइ।
मोहन लखि तेरी दसा क्यौं न भटू यह होइ॥३२०॥

सोमनाथ—

आली इह दुपहर समै यह उपाय अभिराम।
सब गरमी मिटि जाइ जौ अब आवैं घनस्याम॥३२१॥

अथ अप्रस्तुति प्रसंसा—

दुविधि। प्रस्तुति बिना वर्णन कीजै[2] सो **प्रथम** अप्रस्तुति प्रसंसा **अरु** प्रस्तुतांस कौ वर्णन सो **दुतिय**।

अथ प्रथम अप्रस्तुति प्रसंसा—

भाषाभूषन—

धनि यह चरचा ज्ञान की सकल समैं सुख देति।

अलंकारमाला—

धनि बिहंगनि मैं सु तजि इन्द्र न जाचत अन्य।

---

१. तप। २. जौ।

अलंकार करनाभरन—

धनि वेई जे एक सौं करैं नेह निरबाहि।

सोमनाथ-कवित्त—

दिसि बिदिसानि तें उमड़ि मढ़ि लीनौ नभ,
छोरि दिये धुरवा जवा से जूथ जरिगे।
डहडही भए द्रुम रंचक हवा के गुण,
कहूँ कहूँ मुरवा पुकारि मोद भरिगे।
रहि गए चातक जहाँ के तहाँ देखत ही,
सोमनाथ कहैं बुंदावुदौ ऊन करिगे।
सोर भयौ घोर चहु ओर महि मंडल मैं,
आए घन आए घन आयकैं उघरिगे॥३२२॥

अथ दुतिय भेद—

भाषाभूषन—

विष राखत हैं कंठ सिव आप धर्यौ इहि हेत।

सोमनाथ—

राजहंस मन दै सुनौं यहै अनौखौ गाउँ।
बाँनि भुलायैं आपुनी लोग धरैंगौ नाउँ॥३२३॥

अथ अर्थश्लेष लछिन—

एक अर्थ अनेक पक्ष लगैं सो अर्थ श्लेष।

देवीदास कौ कवित्त—

सरद की चादनी से ऊजरे अमोल सुभ,
सुन्दर सुहात न दुरायैं दुरिबे के हैं।
बड़े गुणवंत देवीदास मन मोहि लेत,
पानिप सौं पूरन सुढार ढरिबे के हैं।

काहू एक क्रूर की कुराई करि फूटि गए,
फिरि मूढ़ मोरचौ चाहै वे न मुरिबे के हैं।
मीतनि कौ मन मोती फूटि टूट द्वै भए सो,
लाख दै कैं जौरौ कहा फेरि जुरिबे के हैं।।३२४।।

अथ प्रस्तुतांकुर लछिन—

प्रस्तुति मैं प्रस्तुताई कीजै सो प्रस्तुतांकुर।

भाषाभूषन—

कहाँ गयौ अलि के बरैं छाइ सु कोमल जाइ।

बिहारी कौ दोहा—

जिन दिन देखे उंह कुसुम गई सु बीति बहार।
अब अलि रही गुलांब[1] मैं अपत कटीली डार।।३२५।।

गिरधर कौ दोहा—

भौंरा ए दिन कठिन हैं सहि आपने सरीर।
जौ लौं फूलैं केतुकी तौं लौ बिरमि करीर।।३२६।।

केसव कौ सवैया—

जातु नहीं कदली की गलीन भली विधि लै बदली मुद्दु लावै।
चाहै न चंपकली की थली[2] मलिनी नलिनी की दिसा न सिधावै।
जौ कोऊ केसव नाग लवंग लता लवली अवलीनि चरावै।
खारिख दाख चखाइ मरौ परि ऊंटहि ऊंटक टेरौई भावै।।३२७।।

अथ परियायोक्ति—

सो द्वै विधि। कछु रचना सौं बात कहियै सो **प्रथम** मनभावतौ[3] कारज कछू मिसकरिकैं साधियै सो **द्वितीय**।

---

१. कुलाब २. थला ३. मनभामतौ।

अथ प्रथम—

भाषाभूषन—

चतुर उहै जिनि तुम गरैं बिन गुन डारी माल ॥

चिंतामनि कौ कवित्त—

सौंने कौन रूपे कौन जान्यौ जात पन्ननु कौ,
हीरे कौन मोती कौन काहे कौ बनायौ है ॥
देव कौ चढ्यौ है कि दिरी? कौ मढ्यौ है काहू,
गुनी कौ गढ्यौ है बिन गुण गारैं आयौ है ॥
चिंतामनि प्रान प्यारे उर सौं उतारि लीजै,
नैंक मेरे हाथ दीजै मोहू मन भायौ है।
छल कौ छला सौ इन्द्रजाल की कला सौ यह
सांची कहौ हाहा हरि हरा ? कहां पायौ है ॥३२८॥

काहू कौ सवैया[१]—

क्यौं घनस्याम इती दुचिती तुम मो तन दृष्टि करौ सुखदाई।
कंज गुलाबनि की अरुणाई तैं लाल गुलाननि तैं सरसाई।
नैंननि पैं अति घेरौ घनौं धनि है रग रेजनि की चतुराई।
सांची कहौं इनि आंखिनि की तुम दीनी कहा प्यारेलाल रगाई।
॥३२९॥

अलंकार करनाभरन—

जिन पद नख गंगा प्रगट भई अवनि मैं आइ।
तो तन लखि जिहि करज छत मो अघ गए बिलाइ ॥३३०॥

अलंकारमाला—

जिहि उर धरि भव तरिसु जिहिं सुरतरु जुतमहि कीन।

---

१. कवित्त सवैया—यहाँ 'कवित्त' शब्द अधिक है।

सोमनाथ[1]—

रीझि रही तुमकौं निरखि अति प्रवीन सो बाल।
आज सामरे तैं किये जिहि बहुरंगी लाल ॥३३१॥

अथ द्वितीय परियायोक्ति—

भाषाभूषन—

तुम दोऊ बैठो इहां जाति अन्हावन ताल।

सोमनाथ—

लखि मोहन तिय को बदन मृदु मुसकाइ अमोल।
लट सुरझैबे कौ मिसहि छिगुनी छियौ कपोल ॥३३२॥

अलंकारमाला—

रहौ इहां हो नेक तुम आवति कुंज निहारि।

अलंकार करणाभरन—

बैठौ नीकी छांह मैं तुम दोऊ बट मूल।
हौं लै आंऊं कुंज तैं हरिहि चढ़ावन फूल ॥३३३॥

मतिराम कौ सवैया—

मोहन सौं दिन द्वैक ही तैं मतिराम भयौ अनुराग सुहायौ।
बैठो हुती तिय माइके मैं सुसरारि कौ काहू सँदेसौ सुनायौ।
नाहकैं व्याह को चाह सुनी[2] उर माह छबीली कैं आनंद छायौ।
पौढि रही पट ओढ़ि अटा दुख कौ मिस कै सुख बाल छिपायौ ॥३३४॥

अथ व्याज स्तुति त्रिविधि—

निंदा मिस बड़ाई होइ सो **प्रथम** अरु[3] स्तुति मिस निंदा होइ सो **द्वितिय**; स्तुति मिस और की स्तुति होइ सो **त्रितिय**।

---

१. सोमनाथ। २. सुणी—राजस्थानी प्रभाव। ३. अर।

अथ प्रथम व्याजस्तुति—

भाषाभूषन—

पतित चढ़ाए स्वर्ग लै गंग कहा कहौं तोहि।

अलंकार करनाभरन—

कहा सिखाई कुटिलता लाल दृगनि दुख दैन।
जातन ताकत तनक हौ ताके लगत न नैंन॥३३५॥

सोमनाथ-दोहा—

घर मैं एक बिसाति है इह कराल किरवान।
परधन कौ हरि लेत हौ निरखे भले सुजान॥३३६॥

काहू कौ सवैया—

काननि लौं अखियां है तिहारी हथेरी हमारी कहाँ लग फेलिहैं।
मूदतहू तुम देखती हौ हम कौं रें तिहारी कहां धौं सकेलिहैं।
कान्हर हू कौ सुभाव यहै उन्हैं तौ हम हाथन ही पर झेलिहैं[1]।
राधे जू मानौ भलौ कि बुरौ अखिमींचनी संग तिहारे न खेलिहैं।
॥३३७॥

अथ द्वितीय भेद—

अलंकार माला—

धनि धनि सखि मोहित भई नख रद छत जुत अंग।

सोमनाथ-दोहा—

मोहैं ही मन लेति है छबि रावरी रसाल[2]।
आए हौ मेरे लियें छके छबीले लाल॥३३८॥

---

१. झेलिवौ २. ससाल।

कुलपति कौ सवैया——

देह धरी परकाज ही कौं जग माझ है तो सी तुही सब लाइक।
दौरैं थकैं अग स्वेद भयौ समझी सखी ह्वां न मिले सुखदाइक।
मोहीं सौं प्यार जनायौ भली बिधि जानी जू जानी हितून की नाइक।
सील की मूरति सांच की सूरति मंद किये जिनि काम के साइक।
॥३३९॥

अथ तृतीय भेद स्तुति में अस्तुति——

धन्नि बिभीषन राम मिलि अजौं करत हैं राज।
धनि पांडव हरि कृपा तैं लहे सकल सुखसाज॥३४०॥

अलंकार करनाभरन——

तू ही धन्नि तमाल है करत रहत है केलि।
प्यारी भुज सी पल्लवति तो सौं लपटी बेलि॥३४१॥

अथ व्याज निंदा लछिन——

निंदा मैं और की निंदा होइ सो व्याज निंदा।

भाषाभूषन——

सदा क्षीन कीनौ न तू चंद मंद है तोइ।

सेनापति कौ कवित्त——

बिन ही जिरह हथियार बिन ताके अब
भूलि जिनि जाहु सेंनापति समझाए हौ।
करि डारी छाती खोरि घाइनि सौं राती उनि,
मोहि धौ बतावौ कौन भांति छूटि आए हौ।
आऔ तुम सेज करौ ओषधि की रेज? प्यारे,
मैं[1] तौ तुम पूरब ले पुन्यनु ते पाए हौ।
कीने कौन[2] हाल उह वाघिनी सी बाल वाहि,
कोसति हौ लाल तानें फारि फारि खाए हौ॥३४२॥

---

१. में २. कोन।

दोहा—

समझावत ऊधौ कहा झूंठी बात बनाय।
उह तौ कपटी कान्ह है दासी लिये लुभ्याय॥३४३॥

सोमनाथ-दोहा—

बसु सठ सोई निपट ऐसी रची बनाइ।(?)
कीनी नही दुसाल तू अति छाती चहकाइ॥३४४॥

अलंकार माला—

कौन सौति उह अधम है, जिह मार्‍यौ तुव मान।

अलंकार करनाभरन—

कहा कहौ तौसौं सखी भली करी है आज।
दुसह दंत नख बेधना सही आप मो काज॥३४५॥

कवित्त—

बूझति हौं कान्ह कहौ आज ही अनौखे भए,
परम चतुर चतुराई सौं उगत हौ।
सामुहैं न होत केतौ साहस करत तुम,
नीचैं ही चहत हित बीच ही पगत हौ।
मेरी डीठि परे डीठि नैंक न जुरति ऐसैं,
स्यांम सौं लगे हौ आछा भांतिनि खगत हौ।
मेरे जान लाल कबू तजिए न लाज आज,
लाज भरे लोचन सौं नीकेई लगत हौ॥३४६॥

अथ त्रिविध आछेप लछिन—

निषेध कौ आभास जहाँ होइ सो **प्रथम**। पहलैं आप कछु कहियै फिरि ताही कौ फेरियै सौ **द्वितीय**। वचन की विधि तैं निषेध दुरै सो **तृतीय**।

अथ प्रथम आछेप—

भाषाभूषन—

उहौं नहिं दूती अगिनि तैं तिय तन ताप विसेष।

सोमनाथ-दोहा—

हठ करि बरजति हौं नही चलियै लाल बिदेस।
पै बिरहिन कौं देइगौ सामन मास कलेस॥३४७॥

अलंकार करनाभरन—

तुम सौं सरस सनेह पिय छिन छिन मैं सरसात।
हौं न कहति मुख तैं कढ़ति चित के हित की बात॥३४८॥

केसव कौ कवित्त—

नीकैं कै किवार दैहौं द्वार द्वार दरबान,
केसौदास आस पास सूर जौ न छावैगौ।
छिन मैं छवाइ लैहौं छप्पर अटानु आज,
आगन पटाय लैहौं जैसौं मोहि भावैगौ।
न्यारे न्यारे नारदानि मूंदौंगी झरोखा जाल,
जाइहै न पानी पौंन आमन न पावैगौ।
माधव तिहारे चलैं मोपह मरन मूढ़,
आमन कहत सुतौ कौन मग आवैगौ॥३४९॥

अथ द्वितीय आछेप—

भाषाभूषन—

सीत करन दै दरस तू अथवा तिय मुख आहि।

अलंकारमाला—

हित करि चित न चुराइयै कहि सखि पिय सौं जाइ।
तू जिनि जा हौंही सबै कहि लैहौं समुझाइ॥३५०॥

सोमनाथ—

अलबेली तिय कौं इहां ल्यावति सिखैं सयान।
कै मनि मंदिर मै उहां चलियै क्यौं न सुजान॥३५१॥

अथ तृतीय आछेप—

भाषाभूषन—

जाइ दई मो जनमु दै चले देस तुम जाइ॥

अलंकार करनाभरन—

कीजै गमन बिदेस जौ तुमहि सुहायौ लाल।
फूल्यौ सरस सुहावनौं निरखौं नैंन रसाल॥३५२॥

अलंकारमाला—

गमनहु जौ ह्वै है पिया जनम मोर उहि देस।

सोमनाथ-दोहा—

दंपति अंक भरन समैं ढिग आवति अलि हेरि।
मधुर बोलि बीरी नवल बिहसि मगाई फेरि॥३५३॥

केसव कौ कवित्त—

चलत चलत दिन बहुत वितीत भए,
सकुचत कित चित चलत चलायें ही।
जात है ते कहौ कहा नाहि न मिलत आनि,
जानि यह छाड़ौ मोह बाढ़त बढ़ाये ही।
मेरी सौं तुमहि हरि रहियौ सुखहि सुख,
मोहू कौं तिहारी सौ हैं रहौं सुख पायें[1] ही।
चलैं ही बनति जौपैं चलियै चतुर पिय,
सोवत ही छोड़ियै जगौंगी तुमैं आयें[2] ही॥३५४॥

अथ विरोधाभास लछिन—

पद मैं विरोध अरु अर्थ अविरोध होइ सो विरोधाभास।

काहू कौ दोहा—

हस्त बंद जे नृपति हैं जोगी लिप्त बिभूति।
हरि सुमरत जे भजत हैं तीनौं गए बिगूति॥३५६॥

---

१. पायैं २. आयैं।

भाषाभूषन—

उतरत है उरतन ही मन तैं प्रान निवास।। (?)

अथ छह प्रकार विभावना—बिना ही कारन काज होइ सो **प्रथम**। अपूरन न कारन तैं पूरन कारज होइ सो **द्वितिय**। प्रबंधक के होत हू कारज पूरन होइ सो **तृतीय**। अकारन वस्तु तैं जब कारज प्रकट होइ सो **चतुर्थ**। काहू कारन तैं विरुद्ध कारज होइ सो **पंचम**। कारज तैं कारन उतपन्न होइ सो **षष्टम**।

अथ प्रथम भेद विभावना—

भाषाभूषन—

बिन जावक दीनैं चरन अरुण लखे हैं आज।

अलंकार करनाभरन—

अलवेली रुचि सौं रमैं उही कदम की छांह।
बिन ही पिय निरखैं हरखि बिहसि पसारैं बांह।।३५७।।

मुकुंद कौ दोहा—

बिन तमोल तेरे अधर मोहत लाल रसाल।
अरु काजर बिन नैन ए कजरारे नव बाल।।३५८।।

दुतिय विभावना—

अलंकार माला—

सर कटाक्ष छोड़त तरुनि जिहि बिन भुव धनु लेखि।

भाषाभूषन—

कुसम बान कर गहि मदन सब जग जीत्यौ जोइ।

सोमनाथ-दोहा—

मो पैं नहिं बरनैं परैं तेरे तरुनि विचार।
नैंक विहसि चेरे किये हरि त्रभुवन सिरदार।।३५९।।

अलंकार करणाभरन—

नैंक मंद मुसिकाय कै चित लै गयौ चुराय॥

केसव कौ कवित्त—

चंचल न हूजै नाथ अंचल न ऐंचौ हाथ,
सोवै नैंक सारिकाहू सुक तौ सुवायौ जू।
मंद करौ दीप दुति चंद मुख देखियत,
दौरिकैं दुराइ आऊँ द्वार त्यौं दिखायौ जू।
मृगज मराल बाल वाहिरे बिडारि देहु,
भावै तुमैं केसव सु मोहू मन भायौ जू।
छल के निवास ऐसे वचन बिलास सुनि,
सौगुनौ सुरति हुतैं स्याम सुख पायौ जू॥३६०॥

सवैया—

पाय परैं मनुहारि करैं पलि कायर पाय धरे भय भीनैं।
सोइ गई कहि केसव कैसैं हूं कोरि ही कोरिक सौंहन कीनैं।
साहस कै मुख सौं मुख छ्वै छिन मैं हरि मानि सबै सुखलीनैं।
एक उसास ही कै उससैं सगरेई सुगंध बिदा करि दीनैं॥३६१॥

काहू कौ सवैया—

परदेस तैं कोऊ न आयौ सखी उठि रोज मनोरथ कीजतु है।
निस नीद न आवति सेज विषैं तन कोटि उपायनि छीजतु है।
बढ्यौ प्रेम वियोग बिहाल हियैं असुवानि सौं यौं तन भीजतु है।
निज प्रीतम की उनहारि सखी ननदी मुख देखिकैं जीजतु है।
॥३६२॥

अथ तीसरी विभावना—

भाषाभूषन—

निस दिन श्रुति संगति तऊ नैंन राग की खानि।

अलंकार माला—

तरवर रबि बिधु मुख निकट बढ़त सुकचतम स्याम ।।

सोमनाथ—

सदा सास वरजै घरी उघरन देइ न अंग।
तऊ जाय तिय कुंज मैं बिहरैं हरि के संग।।३६३।।

अलंकारमाला—

गुरजन दाढ़ दढ़े न ए खरे परे बस मैंन[1]।
नागर नट के रूप सौं बरबस[2] अटके नैंन।।३६४।।

अथ चतुर्थ विभावना—

भाषाभूषन—

कोकिल की बानी अवै, बोलत सुन्यौ कपोत।

मुकुंद[3] कौ दोहा—

आज अनौखौ मैं सुन्यौं जामैं सरस सवाद।
संखनि तैं निकसै मधुर वरबीना कौ नाद।।३६५।।

सोमनाथ—

कहा कहौं ता घरी तें उठति हिये मैं सालि।
जब तैं लख्यौ मयूर बन चलत हंस की चालि।।३६६।।
× × ×
कियौ सुधा रसपान सखि अधर बिद्रुम तैं आज ।।

अलंकारमाला—

पिक सुर सुनैं कपोत तैं सखि बड़ अचिरज आहि।

---

१. मैन २. वरवट ३. मुकंद

तीसरी[1] विभावना कौ है कवित्त—

सास खिजै बरजै ननदी तरजै पति भांति अनेक रिसैवौ।
और अनेक हसैं गुरलोग नही परवाह किसौ समझैवौ।
आनन चंद मुकुंद जू औं लखि नैंन चकोरनि कौं सुख दैवौ।
नेह लग्यौ नँदलाल सौं बाल लयौनित मंजु निकुंज कौ जैवौ।
॥३६७॥

अथ पंचम[2] विभावना—

मुकंद कौ दोहा—

तुव मुख मृदु अरबिंद तैं करकस बचननि भाखि॥

भाषाभूषन—

करत मोहि संताप यह सखी सीतकर सुद्ध।

सोमनाथ-दोहा—

प्यारी तू क्यौं करि रही अरुण तनैंने नैंन।
कढ़त[3] मधुर अधरानि तैं जहर लपेटे बैंन॥३६८॥

अलंकार माला—

अधिक सलौंनौ रूप तउ मधुर लगति अँखियानि।

केशव कौ कवित्त—

माखन सी जीभ मुख कंज तैं हूं कोमल पै,
काठ की कठेठी बातैं कैसे निकरति है।

अथ छठी विभावना—

भाषाभूषन—

नैंन मीन तैं देखियै सरिता[4] बहति अनूप॥

---

१. तीरी २. पंचमी ३. कटत ४. सलिला।

सोमनाथ दोहा—

तिय तन चंपक माल तैं प्रगटत जलकन पुंज।

अलंकारमाला—

निकसत मुख ससि सौ बचन रस सागर सुख दैंन।

बिहारी—

बेधक अनियारे नयन बेधत करत निषेध।
बरबस[1] बेधत मोहियौ तो नासा कौ बेध।। २६९।।

अथ बिसेसोक्ति लछिन—

कारन तैं जब कारज उतपन्न नहीं होइ सो बिसेसोक्ति।

भाषाभूषन—

नेह घटत नहि हिय तऊ कांम दीप मन मांह।

अलंकारमाला—

कटु बच नख रद छत कियें पिय हिय हित नहि जात।

मुकुंद कौ दोहा—

सापराध पिय निरखि तिय तऊ न कीनौ मान।

अलंकार करनाभरन—

आली या व्रज छैल के अंग अंग रसखानि।
निरखत मैं नहि होति है इन अखियानि अघानि।।२७०।।

अथ असंभव लछिन—

संभवै नही ऐसौ कारज कहियै सो असंभव।

---

१. वरवट।

भाषाभूषन—

गिरवर धरिहैं गोपसुत इह जानत को आज।

अलंकार करनाभरन—

को जानत हो इन्द्र कौं जीति कलप तरु ल्याय।
सतिभामा के अगनि मैं हरि लगाइहैं आय॥३७१॥

अलंकारमाला—

किन देख्यौ इह भुवन पर कहत जु भुव शिरि आइ।

सोमनाथ—

नींद भूख रुचि टरि गई बिछुरत ही बलवीर।
को जानत हौ दुखद यह ह्वै है त्रिबिधि समीर॥३७२॥

मुकुंद कौ—

को जानत हो सिंधु कौं कपि उलंघिहै आज।

अथ असंगति त्रिविध—

कारन कारज न्यारी ठौर होइ सो **प्रथम**। और ठौर के काम और ठौर ही कीजै सो **दुतिय**। और काज आरंभियै अरु[1] और ही कीजै सो **तृतीय**।

अथ प्रथम असंगति—

भाषाभूषन—

कोइल मदमाती भई झूंमत अंबा मौर।

सोमनाथ—

रचत राह गहौ मो हियौ पान रावरे खात।

---

१. अर।

बिहारी कौ दोहा—

दृग उरझत टूटत कुटम जुरति चतुर चित प्रीति।
परति गांठि दुज्जन हियै नई दई इह रीति॥३७३॥

अलंकार करनाभरन—

कान्ह लगावत चंद नहि मेरे नैंन सिरात॥

मुकुंद कौ—

तुम निसि जागे जो दृगनि भई अरुनई आइ।

अथ द्रुतिय असंगति—

भाषाभूषन—

तेरे अरि की अंगना तिलक लगायौ पाइ।

सोमनाथ कौ—

तिय सिंगार आरंभ ही आवत निरखे लाल।
ईंगुर लायौ चरन मैं रच्यौ महावर भाल॥३७४॥

अलंकार करनाभरन—

बंसी धुनि सुनि व्रजबधू चली बिसारि बिचार।
भुज भूषन पहरे पगनि भुजनि लपेटे हार॥३७५॥

अथ तृतीय असंगति—

भाषाभूषन—

मोह मिटायौ नाहि प्रभु मोह लगायौ आन।

सोमनाथ कौ दोहा—

सजी गूजरी एक कर त्यौं ही लखे सुजान।
आदर करि तिय नैंतवै बिहसि[1] खवाए पान॥३७६॥

---

१. बिहिस।

अलंकार करनाभरन—

दरसन दै अबही चले बातैं मधुर बनाइ।
बिरह मिटायौ नाहि पिय बिरह बढ़ायौ आइ।।३७७।।

त्रिविध विषम—

अनमिलते कौ संग होइ सो **प्रथम,** कारन कौ और रंग कारज कौ और रंग होइ सो **दुतिय,** भलौ उद्दम किये बुरौ फल होइ सो **तृतीय**

अथ प्रथम विषम—

अति कोमल तन तीय कौ कहां बिरह की लाइ।

अलंकारमाला—

हरि उहि मुक्ति पठाइ दी बकी तकी ही और।

मुकुंद कौ—

रसिक स्याम सुन्दर सुघर कहा सुबरी जोग।

सोमनाथ—

कहां उदर मृदु कान्ह कौ कहँ कठोर यह दाम।।

सवैया—

सागर कौ जल खार कियौ अरु कंटक पेड़ गुलाब कौ कीनौं।
मित्रनि मांझ वियोग रच्यौ पय पान विषद्धर कौं पुनि दीनौं।
पंडित लोग दरिद्रन गोविंद कूरनि कौं धन धाम नवीनौं।
सुद्ध सुधाधर है बिधु अंकित या बिधि सौं बिधि है बुधिहीनौं।
।।३७८।।

काहू कौ कवित्त—

सीता पायौ दुख अरु पारबती बंझा तन,
नृपा ने नरक पायौ गनिका गति पाई है। (?)
बैंन होइ सुखी हरिचंद नृप दुखी दियौ
बलि कौं पताल स्वर्ग पूतना पठाई है।

संकर कौं विष विषधर कौं दयौ है पय,
पांडव पठाए जहाँ हेम अधिकाई हैं।
हाल ठकुराइसि मैं यों लिखौ[1] अचंभौ कहा,
ईस्वर के घर ही तैं पोल[2] चलि आई है॥३८९॥

अथ द्वितीय विषम—

भाषाभूषन—

खड्गलता अति स्यांम तैं उपजी कीरति सेत।

मुकंद कौ दोहा—

हिरन कस्यप कैं हरिभगति उग्रसैंन कैं कंस।

अलंकारमाला—

घन सखि स्यामल देखियत बरषत उज्जल नीर।

सोमनाथ कौ०—

असित रावरे बिरह नैं जरद रगी ब्रजबाल।

अथ तृतिय विषम—

भाषाभूषन—

सखि लायौ घनसार तैं अधिक ताप तन देत।

दोहा—

नेह बढ़ैबे के लियैं सखी रावरी ओर।
सो तुम हम सौं भामते **सिरती**? गही मरोर॥३९०॥

बिहारी कौ दोहा—

मार सुमार करी अरी खरी मरीहि न मारि।
सींचि गुलाब घरी घरी अरी बरीहि[3] न बारि॥३९१॥

---

१. लिकौ। २. पोलि। ३. बरीहिहि।

अथ समत्रिविधि—

जथा जोग्य कौ संग सो **प्रथम,** कारज मैं कारन की बानि देखियै सो **दुतिय,** उद्दिम करत ही कारज[1] सिद्धि बिश्रनाम होइ सो **तृतिय।**

अथ प्रथम सम—

भाषाभूषन—

हार बास तिय उर कर्‌यौ अपने लाइक जोइ।

सोमनाथ कौ०—

जानि बराबरि साहिबी चित चतुराई आनि।
कीनी रबि सौं मित्रता हिमकरनैं सुख मानि॥३९२॥

अलंकार करनाभरन—

सागर सौं कमला निकसि निरखे आप समान।
निदरि सुरासुर अरु बरे गुन निधान भगमान॥३९३॥

मुकंद—

पान पीक ओठनि बनैं नैंना काजर जोग।

दुतिय सम—

भाषाभूषन—

नींच संग अचिरज नहीं लछिमी जलजा आहि।

अलंकार करनाभरन—

प्यारी चितवनि रावरी रही अतुल रस भोइ।
गई रसीली चख नितैं क्यौं न रसीली होइ॥३९४॥

सोमनाथ कौ—

मदन मनोहर कान्ह के सुत सुन्दर सुखदानि।
क्यौ न होइ प्रद्युम्न मैं तिय बस करनी बानि॥३९५॥

---

१. कार।

अथ तृतीय सम—

अलंकार करनाभरन—

होरी खेलन स्याँम सँग साँज सवारी बाल।
तबही लियैं गुलाल कौं आइ गए नँदलाल॥३९६॥

सोमनाथ कौ—

अलबेले सुन्दर सुघर नित विनोद के धाम।
जतन करत ही आपतैं सो बर पाए स्याम॥३९७॥

इहाँ रुकिमिनी कौ समय है।

भाषा भूषन—

जस ही कौ उद्दिम कियैं नीकैं पायौ ताहि।

अथ विचित्र लछिन—फल की इच्छा करिकैं बिपरित जतन कीजै सो बिचित्र।

भाषाभूषन—

नवत उच्चता लहन कौं जे हैं पुरुष पवित्र।

अलंकार माला—

न्हात लेत अधगति बुड़कि यह उचगति की प्रीति।

सोमनाथ कौ—

चाहत सुख संपति सहित अमरन कौ परसंग।
छाड़ि जगत की गति तजी भसम लपेटत अंग॥३९८॥

अलंकारकरनाभरन—

पति सेवा मैं रत रहति नित हित चित सौं बाल।
नवत उचाई लैन कौं इह चतुरई बिसाल॥४००॥

अथ अधिक-दुविधि—

आधार सौं आधेय अधिक होइ सो **प्रथम** आधेय सौ अधिक आधार होइ सो **दुतिय**।

अथ प्रथम अधिक

भाषाभूषन—

सात दीप नवखंड मैं कीरति नाहि समात।

सोमनाथ—

कैसैं ल्यांऊँ नवल तिय सुनियैं श्री ब्रजराज।
छलकै पलक पछेलि कैं अखियनि मैं ते लाज ॥४०१॥

अलंकार करनाभरन—

मोहन रसना एक सौं एकहि बरन्यौ जाइ।
अगिनत गुण हैं रावरे त्रिभुवन मैं न समाहिं[1] ॥४०२॥

अलंकारमाला—

जिहि नभ मधि ब्रह्मांड सब तहाँ न तुव जस मात।

अथ दुतिय अधिक—

भाषाभूषन—

सब्द सिंधु केतौ जहाँ तुव गुण बरने जाय।

सोमनाथ—

व्यापक चौदह भुवन मैं अरु अनंत गतिमित्त।
सो रघुवीर सुजान कैं हिय मैं विहरै नित्त ॥४०३॥
अखिल लोक जाके उदर भीतर रहैं समाइ।
सो हरि तैं कैसैं अहे राखे हियैं बसाइ ॥४०४॥
ऐसे बड़े दृग होत न मेरे तौ कान्ह कहौ तुम कैसें समाते।

अथ अल्पाऽल्प लच्छिन—

आधेय तैं आधार सूक्ष्म होइ सो अल्पाऽल्प।

---

१. समहि।

भाषाभूषन—

अँगुरी की मुदरी हुती[1] भुज मैं करति बिहार।

सोमनाथ कौ—

पिय वियोग तैं तरुनि की पियरानी मुख जोति।
मृदु मुखा की घूँघरी कटि मैं किंकिनि होति॥४०५॥

अलंकार करनाभरन—

सोहि सदा चाहत रहौ चित सौं नंद कुमार।
मो मन नाजुक ना सहै नैंक रुखाई भार॥४०६॥

अलंकारमाला—

छिगुनि छला पिय गवन तैं भयौ जु भालाकार।

अथ अन्योन्य[2] लछिन—

परस्पर उपकार होइ सो अन्योन्य।

भाषाभूषन—

ससि सौं निस नीकी लगै निसही मैं ससि सार।

सोमनाथ कौ—

पावै सोभा सीस तब रचियै मुकट बनाइ।
होति बड़ाई मुकट कौं तब हरि सीस लसाइ॥४०७॥

अलंकार करनाभरन—

पिय सौं नीकी तिय लगैं तिय सौं नीकौ नाह।

कवित्त रसखान कौ—

छूट्यौ ग्रहकाज लोकलाज मनमोहिनी कौ,
मोहन कौ छूटि गयौ मुरली बजाइवौ।

---

१. अहुती। २. अन्योम।

अब दिन द्वै मैं रसखान बात फैलि जैहै,
ए री ए कहाँ लौं चंद हाथनि दुराइवौ।
कालिन्दी के कूल काल्हि मिले हे अचानक ही,
दुहूँनि कौ दुहूँ और मृदु मुसिकाइवौ।
दोऊ लागैं पैयाँ दोऊ लेति हैं बलैयाँ उनैं
भूलि गई गैयाँ उनैं गगरी उचाइवौ ॥४०८॥

सवैया—

प्यारी बिहारी पैं हैं बलिहारि बिहारी सरब्बस प्यारी पै वारै।
प्यारी कैं जीवन मूरि बिहारी बिहारी कैं प्यारी ही प्राण अधारै।
प्यारी बिहारी की है सब भाँति बिहारी पिया कौ गुबिंद उचारै।
प्यारी सजै सिर सामरी सारी बिहारी पीतांवर कौं नित धारै[1]।
॥४०९॥

देव कौ—

मोहि मोहि मोहन कौ मन भयौ राधेमय,
राधे मन मोहि मोहि मोहन मई मई॥

विसेष्य[2] त्रिविध—बिना आधार आधेय होइ सो **प्रथम**, थौरौई आरंभ अधिक सिद्धि कौं जब करै सो **द्वितीय**।[3]

प्रथम विसेष्य—

भाषाभूषन—

नभ ऊपर कंचन लता कुसम स्वछ फल एक।

अलंकार करनाभरन—

लालन गए बिदेस कौं कहिकौं हित के बैन।
उनके गुण हिय मैं रहे छाइ कहूँ बिसरैं न॥४१०॥

---

१. धरैं। २. विसेष्य ती। ३. द्विय—इसके आगे तृतीय का लक्षण नहीं दिया गया है जबकि आगे उदाहरण दिया है।

अलंकारमाला—

अस्त भए हू रबि तमहि नसत दीप करि रूप ।।

बिहारी—

मोहन मूरति स्याँम की अति अद्‌भुत गति जोइ ।
बसति सुचित अंतर तऊ प्रतिबिंबित जग होइ ।।४११।।

दुतिय बिसेष्य—

भाषाभूषन—

कलप बृछ देख्यौ सही तुमकौ देखत नैँन ।।२६।।

सोमनाथ कौ—

सब कछु पायौ औचकाँ भुज भरि भेटे लाल ।।

अलंकार करनाभरन—

लगी लालसा रहति ही निस दिन आठौ जाम ।
तुम देखे घनस्याँम सौ नैंननि निरख्यौ काम ।।४१२।।
तीनि पैँड़ भुव लेत ही सर्बस लयौ छिनाइ ।
सकल मनोरथ सिद्धि मम प्रभु तुव दर्शन पाय ।।४१३।।
पीपर पूजन हौँ गई अपने कुल की लाज ।
पीपर पूजत हरि मिले, एक पंथ द्वै काज ।।४१४।।

अथ तृतिय विसेष्य—

भाषाभूषन—

अंतर बाहर दिस बिदिस उहै तिया सुख दैँन ।।

अलंकार करनाभरन—

नगर बगर बागनि डगर नगनि निकुंजनि धाम ।
बंसीवट जमुना निकट जित देखौँ तित स्याँम ।।४१५।।

सोमनाथ कौ—

नीर छीर थिर चरनि मैं लखियत नँदकुवार।

लाल कौ कवित्त—

प्यारी तेरे अंगन की उमगी सुबास सोई,
लागी हरि चंदन मैं इंदरा के घर मैं।
मालती लता बन मैं सेवती गुलाबनि मैं,
मृगमद घनसार अंबर अगर मैं।
उछरि उछरि छबि छिति पर छाइ रही,
देखियत सोई मनि मानिक मुकर मैं।
चंपक बनी मैं चिरागनि[1] की अनी मैं चारु,
चंपकलता मैं चपला मैं चामीकर मैं॥४१६॥

अथ व्याघात दुबिधि—और वस्तु सौं और ही कारज कीजै सो **प्रथम,** विरोधी सौं कारन तुरत ही कारज लहियै सो **द्वितिय**।

अथ प्रथम व्याघात—

भाषाभूषन—

सुख पावत जातैं जगत तातैं मारत मार॥

सोमनाथ - दोहा—

जाके छ्वै[2] तैं डरैं नर किन्नर अमरेस।
ता विषधर कौं सजत हैं नित आभरन महेस॥४१७॥

अलंकार करनाभरन-दोहा—

जिनि किरिनिनि सौं[3] जगत कौं बरसि सुधा सुख देत।
तिनही किरिनिनि चँद तू मो चित करत अचेत॥४१८॥

---

१. चिराकनि। २. छ्वै। ३. कौं।

मुकंद कौं—

जे प्रिय सुमन सु तिन सरनि मदन करत अति घाइ।

रसखान कौ सवैया—

संकर से सुर नाहि जपैं चतुरानन आनन धर्म बढ़ावै[1]।
नेंक हिये मधि आवत ही जड़ मूढ़ महा रसखान कहावै।
जाहि जपैं सब देव बरंगना वारति प्राण न बेर लगावै।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछियाँ भरी छाँछि कौ नाच नचावै।
॥४१९॥

मुकंद कौ दोहा—

त्रिभुवन पति पै व्रजवधू पाइ धुवावति आहि।

अथ द्वितीय व्याघात—

भाषाभूषन—

नहचैं जानत बाल तू करत काहि परिहार।

सोमनाथ दोहा—

हरि बिनि गौरि कही निरखि भस्मासुर कौ रँग।
नाचैं निज सिर हाथ धरि तौ बिहरौ तुव सँग॥४२०॥

मुकंद कौ दोहा—

सुधा हेत × × × × × × ×[2]असुरनि सौं मीठि।
प्रथम सुरनि कौ प्याइहौं नहि लगि जैहै दीठि॥४२१॥

अथ गुंफ लछिन—

कारज की परंपरा होइ सो गुंफ।

भाषाभूषन—

नीतिहि धन तह त्याग पुनि तातैं सुजस उदोत[3]॥

---

१. बढ़ामैं। २. यहाँ प्रति में यह दोहा खंडित है। ३. उदोत।

अलंकारमाला—

गुण तैं धन धन तैं सुखद तद? तातैं[1] जस अवगाहि ।।

सोमनाथ-दोहा—

होति समय ते तरुनई तातैं बाढ़त नैन।
तिनतैं सरस स्वरूप मुख लखि मोहे पिय ऐंन ।।४२२।।

अलंकार करनाभरन—

दरसनि तैं लागें लगनि लगनि लगे ते प्रीति।
प्रीति लगे तैं होति है मन मिलाप की रीत्ति ।।४२३।।

अथ एकावली लछिन—

सब्द कौ गृह करिकैं तजै फिरि गृह करै सो एकावली।

भाषाभूषन—

दृग श्रुति लौ श्रुति बाहु लौ बाहु जाँग लौं जानि ।।

छप्पय केसव की—

धिक मँगन बिन गुणहि सुगुण धिक सुनत नरिःझय।
रिझ सुधि कवि न मौज मौज धिक देत सुखिःझय।
दैवौ धिक बिन साँच साँच धिक धर्म न भावै।
धर्म सु धिक बिन[2] दया दया धिक अरिकौं आवै।
अरि धिक चित्त न सालई चितधिक जे न उदार मति।
मति धिक केसव ज्ञान बिन ज्ञान सु धिक बिन हरि भगति।
।।४२४।।

सोमनाथ कौ दोहा—

तैं फूलनि गूँथे चिहुर चिहुर चरन परिमान।
चरन महावर सौं रँगे लखि बस भए सुजान ।।४२५।।

---

१. ततै। २. कविन।

अलंकार करनाभरन—

उर पर कुच कुच पर कँचुकि कँचुकि ऊपर हार।
तहाँ जाइ मो हित भयौ पिय मन करत बिहार॥४२६॥

अथ माला दीपक लछिन—

दीपक अरु एकावलि मिलैं सो मालादीपक।

भाषाभूषन—

काम धाम तिय हिय भयौ तिय हिय कौ तुव धाम।

सोमनाथ कौ दोहा—

मेरौ तुव सौं नेह पिय तुम्हरौ नेह सु अंत।

मुकंद—

मो मन प्रीतम मैं बसै प्रीतम बसैं बिदेस।

केसव कौ सवैया—

दीपक नेह दसा सौं मिलै सो दसा[1] मिलि जोतिहि जोति जगावै।
जागै सो जोति नसै तमहीं तमहीं नसिकैं सुभता दरसावै।
सो सुभता रचै रूप कौ रूप करूप ही काम कला उपजावै।
काम सु केसव प्रेम बढ़ावत प्रेम लै प्राण प्रिया हि मिलावै।
॥४२७॥

× × ×

भुज लगे चापनि सौं चाप लगै बाननि सौं,
बान लगे अरि अरि लगे भूमिपात हैं॥

अथ सार लछिन—

उत्तरोत्तर उतकर्ष होइ सो सार।

भाषाभूषन—

मधु सौं मधुरी है सुधा कविता **मधुर**[2] अपार॥

---

१. तसा। २. मधु।

अलंकार करनाभरन—

धन सौं प्यारौ धाम है तासौं प्यारौ जीव।
तासौं प्यारौ पुत्र है तासौ प्यारौ पीव ॥४२८॥

अलंकार माला—

जल मधु तातैं मधु सुधा तातैं मधु बच मानि।

काहू कौ कवित्त—

प्रथम सरस देह देह तैं सरस नर,
नर तैं सरस गऊ बिप्र अवतार है।
बिप्र अवतारन मैं कहियत सरस सोई,
जाकैं जप तप बेद विद्या कौ बिचार है।
विद्या तैं सरस बिधि बिधि तैं सरस बेद,
बेद तैं सरस जज्ञ तातैं ज्ञान सार है।
ज्ञान तैं सरस ध्याँन ध्यान तैं सरस दया,
दया तैं सरस रामनाम जू अपार है ॥४२९॥

अथ जथासंख्य लछिन—

अनुक्रम सौं अर्थ कौ जहा निर्वाह कीजै सो जथासंख्य।

भाषाभूषन—

करि अरि मित्त विपत्ति कौं गँजन रँजन भँग।

अलंकार करनाभरन—

लखि नव जोवन जोति जुत तुव मुख सुन्दर चँद।
पिय हिय सौं तिनि सखिनि कौं हरख अनख आनँद।
॥४३०॥

सोमनाथ कौ—

आनन भृकुटी बचन अधर अरु नाभि गवन पुनि।
चँद धनुष बीना प्रबाल सरवर गयंद पुनि।

सरद स्याम तंत्र तर साल सूक्षम सपुष्ट तन।
उदय निगुन अरु सुथर पानि नव हेम तरुण पुन।
पूरन मनोज बर्ज्जित अरुन बृत्ति बहुरि मद बृन्द कौ।
लखि यह कामिनि आनँदनिधि हिय हरषत ब्रजचंद कौ।।४३१।।

काहू कौ दोहा—

सिद्धिसिया राधा रमन भाल अवधि ब्रजचँद।
गन रघु गोकुल नाथ जय सिव दसरथ नदनँद।।४३२।।

अथ परियाय लछिन—सो दुविधि-अनेक कौ आश्रय क्रम सौं एक ही होइ सो **प्रथम**, एक कौ आश्रय[1] क्रम सौं अनेक होइ सो **दुतिय**।

अथ प्रथम परियाय—

भाषाभूषन—

हुती तरलता चरन मैं भई मँदता आइ।

सोमनाथ कौ—

प्रति वासर हरि होत हैं तिय के सुघर सुभाय।
हुती लरिकई अँग सो बसी तरुनई आइ।।४३३।।

अलंकारमाला—

जिहि दृग पहलैं रिस लखी अब तिहिं रस सरसाइ।

मुकुंद कौ—

जब जल थे[2] अब थल भये सुनि सखि याही ठौर।

द्वितीय परियाय

भाषाभूषन—

अंबुज तजि तिय बदन दुति चँदहि रही बनाय।

---

१. आय। २. हे।

सोमनाथ कौ—

सुनहु राम तुव तेग की कौंन करि सकै रीस।
लखी समर मैं म्याँन तजि लखी अरिनि के सीस ॥४३४॥

अलंकार करनाभरन—

जाइ बजाई बाँसुरी बन मैं सुन्दर स्याँम।
ता धुनि कुंजनि ह्वै श्रवण आइ कियौ ममधाम ॥४३५॥

अथ परिव्रत[१] लछिन—थौरौई सौ दैकैं अधिक लीजै सो परिव्रत अलंकार।

अलंकार करनाभरन—

नेक दरस ही देत हौ सर्वसु लेत चुराइ।

भाषाभूषन—

अरि इंदरा कटाक्ष तुव एक बान दै लेत ॥

सोमनाथ—

नैंक दृगनि की सैंन दै सर्वस मम हरिलीन।

मुकंद कौ—

नैंक दिखाई दै भटू सर्वसु लियौ बनाइ[२]।

× × ×

तुम कौंन धौं पाटी पढ़े हौ लला मन लेत पै देत छटाँक नहीं[३]।

अथ परसंख्या लछिन—एक ठौर बरजि कैं दूसरी ठौर बस्तुकौं ठहराइए सो परसंख्या।

भाषाभूषन—

नेह हानि हिय मैन ही भई दीप मैं जाइ[४]।

---

१. परिव्रता। २. नाइ। ३. यह घनानंद की पंक्ति है। ४. जाई।

सोमनाथ—

कठिनाई उर मैं नहीं भई उरोजनि आनि।

मुकंद कौ—

खंजन मैं नहि चपलता है तिय तुव दृग माहि।

अथ समुच्चय दुबिधि—एक सँग ही बहुत भाव उपजैं सो **प्रथम,** एक के लिऐं बहुतन कौ अन्वय कीजै सो **दुतिय**।

अथ प्रथम समुच्चय—

भाषाभूषन—

तुव अरि भाजत गिरत फिरि भाजत हैं सतराय।

× × ×

आनि अचानक मीड़ि मुख हसि भजि मुरि फिरि धाइ।
बाल छबीले लाल पर गई गुलाल चलाइ।।४३६।।

अलंकार माला—

कर पकरत पिय केस की चकी[1] सुहरखी बाल।

सोमनाथ कौ—

कर परसत नँदलाल के उर मैं सरस्यौ नेह।
सकुची निरखि सखी निपुन पुलकि थरहरी देह।।४३७।।

सुन्दर कौ सवैया—

गौनौ भयैं दिन द्वैक भये कबि सुन्दर नेह दुहूँ मैं नवीनौं।
खेलत काम कलोलनि मैं ललना कौ सरूप लला लखि लीनौं।
कोऊक अंगद व्यौति पकौ? तब एकही बार सबै यह कीनौ।
रोई रिसानी डरी थहरानी चकी सकुचानी चितै हसि दीनौ।
।।४३८।।

---

१. केच की सकी-वर्ण विपर्यय।

कौन त्रसै बिहसै लखि कौन ही कापर कोपिकैं भौह चढ़ावै।
भूलति लाज भटू[1] कबहूँ कबहूँ लखि अंचल मेलि दुरावै।
कौन की लेति बलाइ बलाइ ल्यौं तेरी दसा यह मोहि न भावै।
ऐसी तौ तू कबहू न भई अब तोहि दई जिनि बाय लगावै।
॥४३९॥

कवित्त—

चोरि चोरि चित चितवति मुहु मोरि मोरि,
काहे तैं हसति हिय हरखु बढ़ायौ है।
केसौराइ की सौं तू जभाँति कहा बार बार,
बीरा खाउ मेरी बीर आरस जौ आयौ है।
ऐड़ सौं ऐड़ाति अति अंचल उड़ात उर,
उघरि उघरि जात गात छबि छायौ है।
फूलि फूलि भेंटति रहति उर झूलि झूलि,
भूलि भूलि कहति कछू तैं आज खायौ है॥४४०॥

अथ द्वितिय समुच्चय—

भाषा भूषन—

जोवन विद्या मदन धन मद उपजावत आइ।

सोमनाथ कौ—

पावति सीख सखीनि की तरुनाई रति नाह।
ए सब मिलि तिय नवल कैं उपजावति पिय चाह॥४४१॥

अलंकार करुणाभरन—

गुण गरवाई चतुरई जोवन रूप रसाल।
ए सब बिहसि परे खरे करत तोहि सद बाल॥४४२॥

---

१. यह शब्द इस ग्रंथ में कई बार आया है—अर्थ है—'सखी'।

देवीदास कौ कवित्त—

कोऊ कहूँ मिलै ताहि जानि सनमान करै,
हसि दीठि जोरै पुनि हिय तैं दिखावै हेत।
अपनौं गरब कहूँ नेक न दिखावै अरु,
कोऊ नाहि जानैं तैसे गुपत ही दान देत।
कोऊ उपकार तारै ताकौं परकास करै,
धरम नयन पर नित रहै सावचेत।
आप उपकार करि चुपु रहै देवीदास,
ए ते सब गुण कुलवंत कौं बताऐं देत।।४४३।।

ब्रह्म कौ सवैया—

पूत कपूत कुलछिना नारि लड़ाक परौसी लजामन सारौ।
भाई बटोहित प्रोहित लंपट चाकर चोर अतीत धुतारौ।
साहिब सूँम अड़ाक तुरंग कसान कठोर दिमान न कारौ।
ब्रह्म भनैं सुनि स्याह अकब्बर वारौ ही बाँधि समुद्र मैं डारौ।
।।४४४।।

देवीदास कौ कवित्त[1]—

पूरे कुल जनम निरोगिल सरीर घर,
बैभव बिलास सुरसरी तीर धाम है।
पत्तीब्रता नारि सील साहसी सपूत सुख,
दाइक कुटंब करै पूरें मन काम है।
राम जू की भगति सकति दिन दैबे ही की,
चाकरहु कमकारी जाकौ जस नाम है।
देवीदास ए ते गुन पाइयैं जगत मैं जो,
सूनसान मुक्ति ही कौं दूरि तैं प्रनाम है।।४४५।।

---

१. यह देवीदास का कवित्त है, पर प्रति में 'देव कौ कवित्त' दिया गया है।

केसव कौ—

बाहन कुचाल चोर चाकर चपल चित,
मित्र मतिहीन सूँम स्वामी उर आनियैं।
पर घर भोजन निवास बास कुपुरनि,
केसौदास बरषा प्रवास दुखदानियैं।
पापिन कौं सँग अँग अँगना अनंगबस,
अपजस जुत सुत चित्त हित हानियैं।
मूढ़ता बुढ़ाई व्याधि दारिद जुठाई आदि,
इहाँ ही नरक नरलोकनि बखानियैं॥४४६॥

अथ विकल्प लछिन—

वह कै यह या रीति सौं कहियै सो विकल्प।[१]

भाषाभूषन—

करिहै दुख कौ अंत सखि जम कै प्यारौ कंत।

\+ \+ \+

कै वह बसत बहार की प्रफुलति नंत? कतार।
कै निरखत हरखत हियौ यह धर बन की धार॥४४७॥[२]

काहू कौ कवित्त—

कृष्ण जू तिहारे आगैं लखहू चौरासी भेष,
नट ज्यौं में तेरे रीझिबे के हेत आने हैं।
केते भेष भूचर के केते भेष खेचर के,
केते भेष नीरचरहू के पहचाने हैं।

---

१. विकल्प। २. यह दोहा अलंकारकरणाभरन का है अथवा सोमनाथ का, किन्तु ऊपर लिखना प्रतिलिपिकार भूल गया है।

केते भेष नीचे सिर केते भेष ऊँचे सिर,
उलट पुलट ह्वै कैं केते दरसाने हैं।
यातैं रीझि मौज दीजै नातौ मोहि मनै कीजै,
द्वै मैं एक कीजै आप जैसी मनमानैं हैं ॥४४८॥

दीजियै कमंडल कै राज महीमंडल कौ,
दीजियै तुरंग कै कुरंग[1] छाला कटकौं।
दीजै गजराज कै बिराजिबे कौं बृन्दाबन,
दीजियै अवास कै निवास गंगातट कौं।
कंचन सिंघासन कै बाघंबर आसन कै,
चंदन चढ़ाऊँ कै भभूति लाऊँ घटकौं
मानियै अरज वीर बाँकुरे बिहारी लाल।
द्वै मैं एक कीजिए पर्‍यौ न बीच भटकौं ॥४४९॥

निपट कौ कवित्त—

भूख लगै प्यास लगै घाँम जल सीत लगै,
मो पै नाहि मिटै प्रभु मिटै तौ मिटाइए।
चाहे देह दीजै चाहे लीजै देह अपनी कौं,
निपट निरंजन जू अंत न डुलाइये।
रावरौ भिखारी है कैं कौन पै हौं मागौं भीख,
भीख यह मागौं मो पै भीख न मगाइयै।
साधनु औ सिद्धनु कौं सत और महंतनि कौ,
जौ लौ जीवै जीव तौलौं जीवका तौ चाहियै ॥४५०॥

मुकंद कौ—

कै इत अैजै आपु कै लीजै मोहि बुलाइ।

अथ कारक दीपक लछिन—

एक मैं अनेक भाव क्रम सौं जहाँ होइ सो कारक दीपक।

---

१. कुरं।

भाषाभूषन—

जाति चितै आवति हसति बूझति बात बिबेक ।।

सोमनाथ दोहा—

पिय वियोग चहु ओर लखि चपला तमक समेत ।
छीन होति छिन छिन तिया हसति नैंन भरि लेति ।।४५१।।

अलंकार करनाभरन—

चंचल बाल सखीनि मैं बहसति लखति लजाति ।
गावति ऐंड़ावति चलति पिय तन चितवति जाति ।।४५२।।

काहू कौ कवित्त—

गहि गहि लेत पिय हिय मैं लगाइ तिय,
ससकति जाति पुनि जिय ललचाति है ।
सेज मैं बिराजै नाथ साथ इतराति बत-
राति तुतराति अगराति अरसाति है ।
नाहि नाहि करि सौंहै देति हाहा खाति अन-
खाति अकुलाति रसमाती न समाति है ।
हसति डराति नीबी खोलत लजाति, कर,
ठेलति सिराति सतराति कतराति है ।।४५३।।

दूलह कौ कवित्त—

बोलनि मैं नाही पटखोलनि मैं नाहीं कवि,
दूलह उछाहीं कला लाखनि लखाई हौ ।
चुंबन मैं नाहीं परिरंभन मैं नाहीं सब,
हास औ विलासनि मैं नाही ठीक ठाई हौ ।
मेलि गलबाही केलि कीनी मनभाई इह,
हाँतैं भली नाही सो कहाँ तैं सीखि आई हौ[1] ।।४५४।।

---

१. कवित्त अधूरा है, सम्भवतः एक पंक्ति छूट गई है ।

अथ समाधि लछिन—

और कारन मिलि कैं कारज सुगम होइ सो समाधि।

भाषाभूषन—

उतकंठा तिय कैं भई अथयौ दिन उद्दोत।

अलंकारमाला—

सूने घर दंपति मिले ज्यौं घन तम छय आइ।

अलंकार करनाभरन—

लाल मिलन कौं होति ही तिय तन अधिक अधीर।
तबई घर तैं टरि गई सब गुरजन की भीर।।४५५।।

सोमनाथ कौ—

निरखन कौ तिय बदन दुति पठई दीठि मुरारि।
उत ह्वाँ चपल समीर नैं घूँघट दियौ उघारि।।४५६।।

नागरीदास कौ सवैया—

भादू की कारी अँध्यारी निसाँ झुकि बादर मँद फुँही बरसावैं।
स्यामा जू आपने ऊचे अटा पै छकी रस मीत मलारहि गावैं।
ता समैं नागर के दृग दूरि तैं आतुर रूप की भीख यौं पावैं।
पवन मया करि घूँघट टारै दया करि दामिनी दीप दिखावै।
।।४५७।।

अथ समाहितालंकार लछिन—कारन तैं कारज क्यौं हू नही उतपन्न होइ तब दैवयोग तैं होइ सो समाहित।

केसव कौ कवित्त—

छबि सौं छबीली बृषभान की कुमारि आज,
रही हुती धरि मान रूप मद छकि कैं।
मार हू तैं सुकुमार नँद के कुमार ताहि,
आए री मनामन सयान सब तकि कैं।

हँसि हँसि[1] सौँहैं करि करि पाय परि परि,
केसौराइ की सौं तब रहे जिय जकि कैं।
ताही समैं उठे घन घोरि घोरि दामिनी सी
लागी घनस्याम जू के उर[2] सौं लपकि कैं ॥४५८॥

अथ प्रत्यनीक लक्षन—अरि सौं बस्याइन ही अरि के पक्षि के कौं दुख होइ सो प्रत्यनीक।

काहू कौ दोहा—

रबि सौं चलै न चँद की कँज प्रभा हरि लेत।

अलंकार करनाभरन—

तो पर जोर चल्यौ न कछु निबल अपनपौ मानि।
केलनि[3] कौं तोरत करी जँघनि की सम जानि ॥४५९॥

सोमनाथ कौ दोहा—

नव नव स्यानी पत्थ सौं औसर हियैं विचार।
भारथ मैं अभिमन्यु[4] तब लियौ सबनि मिलि मारि ॥४६०॥

केसव कौ सवैया—

रावरे रूप सौं जीत्यौ है काम औ चंद जित्यौ मुखचंद की बानिकैं।
प्यारे तिहारे सिधारे पै ए अब दोऊ मिले इक मोपर आनिकैं।
ज्यौन्ह की पैनी कृपानि निकारि औ फूल के चाप मैं बानकौं तानिकैं।
राखहु बेग दया करिकैं सब मारत हैं मोहि तेरीयै जानिकैं।
॥४६१॥

अलंकारमाला—

जानि अजित दृग अरुन श्रुत कंजनु निज तर कीन।

---

१. हसि हसि। २. उ। ३. केलिनि। ४. अभिमन्य।

अथ काव्यार्थापत्ति लछिन—बिसेष कौ निदरियै तहाँ सामान्य की कहा चलै सौ काव्यार्थापत्ति।

भाषाभूषन यथा—

मुख जीत्यौ वा चंद तैं कहा कमल की बात।

अलंकारमाला—

तुव कटाक्षबर मदन सर जीतैं कहाँ सर आन। (?)

सोमनाथ कौ दोहा—

हारि मानि अमरेस हू हरिके परसे पाय।
औरन की चरचा कहा जौ बरनियै बनाइ॥४६२॥ (?)

अलंकार करनाभरन—

गति तैं जीतें हंस हैं कौन करी मद धाम।
रति जीती तैं रूप तैं कहा जगत[1] की बाम॥४६३॥

अथ काव्यलिंग लछिन—जुक्ति सौं अर्थ कौ समर्थन कीजै सो काव्यलिंग।

भाषाभूषन—

तो कौं मैं जीत्यौ मदन मो हिय मैं सिव सोइ॥

सोमनाथ कौ—

रे घन अब न बस्याइगो जिनि सोखै तुव सोत।
सो मैं पूजति प्रेम करि भए अगस्त उदोत॥४६४॥

अलंकार करनाभरन—

अनियारे हैं ही बहुरि काजर लागी दैंन।
नाइक मन बसकरन कौं लाइक तेरे नैंन॥४६५॥

---

१. जग।

अलंकारमाला—

क्यौं जीतैंगौ बिरहतम चन्द मुखी मो चित्त।

अथ काव्य प्रकास के मत कौ काव्यलिंग—

सोमनाथ कौ—

पद समूह कौ हेत जहाँ होत कबित मैं आइ।
कैं प्रतिपद कौ हेत यौं काव्यलिंग द्वै भाइ॥४६६॥

अथ पदसमूह कौ हेत—

चैत चाँदनी कमल बन कोकिल त्रिविधि समीर।
सबै हितू बैरी भए बिछुरत ही बलवीर॥४६७॥

इहाँ एक तुक मैं हेत बलवीर कौ बिछुरिबौ पद कौ हेत कहैं हैं।

खिले कमल निवरी निसाँ करत मधुप मधुपान।
चकई हरखी निरखि रबि तउ ललचात सुजान॥४६८॥

इहाँ कमल लखिबे कौ हेत निसाँ निबरिबे कौ हेत, चकई हरखिबे कौ हेत रबि निरखिबौ इति सोमनाथ उक्ति।

अथ अर्थान्तरन्यास लछिन—विसेस कहिकै सामान्य सुभाइतैं दृढ़ करनौ सो अर्थान्तरन्यास।

भाषाभूषन—

रघुवर के गिरिवर तरे, बड़े करैं न कहास।

अलंकारमाला—

नाख्यौ बारिधि पवन सुत कहा समर्थ कलेस॥४॥

सोमनाथ कौ—

बसन चोरि हरि द्रुम चढ़े पुनि बनि बैठे साह।
कहा न करिहैं ए सखी प्रगट भये हित चाह॥४६९॥

अलंकार करनाभरन—

राधे आधे दृगनि तैं मोहन लीने मोहि।
रूप भरी अति गुण भरी कहा कठिन है तोहि॥४७०॥

नन्ददास जी कौ कवित्त—

जमुना मैं जल केलि करत कुँवर कान्ह,
ऐसी छबि देखि देखि जिय जीजियत है।
तीर ठाढ़ी रहि गई नवल नवोढ़ा तिय,
पिय व्रजचन्द कौ अनँद दीजियत है।
सखिनु पकरि वारि माझ डारि दीनी बाल,
भीति[1] भई नैन मन माझ खीजियत है।
नंददास प्यारे कौं यौ धाइ लपटानी उह,
बिपति मैं न कहा कहा कीजियत हैं ।।४७१।।

अथ दुतिय अर्थांतरन्यास—

बड़े कौ सँग पाइकैं छोटे की बड़ाई जहाँ होइ सो दुतिय अर्थान्तर-न्यास।

अलंकार करनाभरन—

चली चली तू इहि गली अली कटी कहु आइ।
तरवा तर की रज पिया नैंननि लई लगाइ ।।४७२।।

वृंद सतसई—

ढाक पात सँग[2] पान कै चढ्यौ छत्रपति हाथ।

अथ बिकश्वर लच्छन—बिसेष होइ कैं फिरि सामान्य बिसेष होइ सो बिकश्वर।

भाषाभूषन—

हरि गिरिधारयौ सतपुरुष भार सह्यौ ज्यौं सेस।

सोमनाथ कौ—

राधाहरि हिय मैं बसी रँगी रँगीले रंग।
यही नेह की रीति है हरषैं तिय अरधंग ।।४७३।।

---

१. भात। २. सग।

अथ प्रोढोक्ति[1] लछिन—

बड़े अकारन **में** कारज कौं कलपित करै सो **प्रथम**, अधिकाई कौ अधिकार जहाँ होइ सो **दुतिय**।

प्रथम प्रोढ़ोक्ति[2]—

जमुना तीर तमाल से तेरे बार असेत।

अलंकार करनाभरन—

अरुन सरस्वती फूल के बंधु जीव के फूल।
तैसेई तेरे अधर लाल लाल अनुकूल।।४७४।।

अथ दुतिय प्रोढ़ोक्ति—

सोमनाथ कौ—

श्री महाराज कुँवार जग जाहर तेरे बान।
तोरि जबर पाखर करी गर कै भूमि निदान।।४७५।।

भाषाभूषन—

केस अमावस रैनि घन सघन तिमर के तार।

काहू कौ कबित्त—

मथि कैं सिंगाररस सार तैं निकारी सुधा,
ताकौ सार लै कैं तेरौ बचन सुधार्यौ है।
कदली के खंभ लौं निचोरि कै सुधाकर कौं,
ताकौ मध्य सार लै बसन सेत सार्यौ है।
तिमर के थार कौं झकोरि गुण तामस मैं,
ताकौ सार लै कै केसपास बिसतार्यौ है।
प्यारी तेरौ रूप ऐसौ रचि कै बिरंचि हाथ
धोइ कैं कुमद कंज पुंज विस्तार्यौ है।।४७६।।

---

१. प्रोढयोक्ति। २. प्रोढाक्ति।

प्यारी कौं बनाइ बिधि धोए हाथ ताकौ रंग,
जमि भयौ चंदा हाथ झारे भए तारे हैं ।।

अथ संभावना[1] लछिन—

ऐसौ होइ तौ ऐसौ होइ इह कथन जहाँ सो संभावना।

अलंकारमाला—

जौ तू सब तजि हरि भजै तौ दुख रहै न कोइ।

भाषाभूषन—

बक्ता हौ तो सेस तौ लहतौ गुणहि अपार।

अलंकारमाला—

उद्धव जौ होतौ कछू ब्रजबासिन सौं प्यार।
तौ मथुरा सौ आवते कान्ह एक हू बार।।४७७।।

सोमनाथ—

जितै दीठि अटकी अली िततही कियौ पयान।
हम सौं होतौ नेह तौ इत आवते सुजान।।४७८।।
कहति रहति नित नेह सौं सुनि अलबेली बाल।
आजु चलौ जौ कुंज मैं तौ तोहिं मिलाऊँ[2] लाल।।४७९।।
दुख मैं तौ हरि कौं भजै सुख मैं रहे सु सोइ।
जौ सुख मैं हरि कौं भजै तौ दुख काहे कौं होइ।।४८०।।

काहू कौ कवित्त—

सुनहु सुजान उह बावरौ बिरंचि बिधि,
मैं हूँ होतौ तौ पैं बिधि ऐसी ही बनावतौ।
मृगनि की नाभि पैं जौ कीनौ मृगमद गंध,
सौ तौ खल रसना पैं नीकैं कै सुहावतौ।

---

१. संभावना। २. मिलऊँ।

सागर के पानी कौं तौ करतौ सुधा सौ सुधा-
धर कौ कलंक लैकैं पानी मैं बहावतौ।
तरुनी तिया कौ नव जोवन मैं प्रीतम[1] सौं,
कबहूँ न कैसैं हूँ बियोग हौं न पावतौ ॥४८१॥

नागरीदास जी कौ कवित्त—

कीरति दारीनी वृषभान आदि गोप गोपी,
कैसैं धँनि धँनि है कैं जग जस पावते।
कौन तप करतौ या ब्रजवास बसिबे कौ,
कौन बैकुंठ[2] हू के सुख बिसरावते।
नागरि या राधे जू जौ प्रकट न होती जौ पै,
स्याँम पर काम हू के बिपती कहावते।
छाइ जाती जड़ता बिलाइ जाते कबि सब,
जरि जातौ रस औ रसिक कहा गावते ॥४८२॥

केसव कौ सवैया—

बोलिबौ बोलनि कौ सुनिवौ अवलोकनि कौं अवलोकनि जोते।
नाचिबौ गाइबौ बैंन बजाइबौ रीझि रिझाइबौ जानत तोते।
राग बिरागन के परिरंभन हास बिलासनि के रस कोते।
जौ मिलतौ हरिमित्रहि को सखी ऐसे चरित्र जौ चित्र मैं होते।
॥४८३॥

प्रसिद्धि कौ कवित्त—

क्रूर होते कृपन कपूत होते कवरौहैं,
कैद होते कूबरे बिचारि चित धरतौ।
कहत प्रसिद्धि जे प्रबीन होते पतरौहैं,
काननि कुंडिल भौहैं हेरि मन हरतौ।

---

१. प्रीतिम। २. बैकुठ।

लवरे को दोऊ जाब चौकस न होती अरु,
चोरनि के करतार बूचेकान करतौ।
स्यार होते मकना मुछ्यारे होते सूरवीर,
गांडू होते नकटे निवेरौ जानि परतौ।।४८४।।

दोष दुख दुरित सकल दौरि दूरि हेरे,
कोटिक जनम के कलंक कोटि कटि हैं।
अैहै सब संपति बढ़ैहै अति ही उमंग,
लैहै पद उच्च श्री गुविंद के निकटि हैं।
घरी घरी घन बरसै है घने आनंद[1] के,
सोभा सरसैहै प्रेम पूरन प्रगटि है।
पैहै सुख साधा जग सुजस अगाधा ह्वै है,
बाधा मिटि जैहै जौ तू राधा राधा रटिहै।।४८५।।

मिथ्याधिवसित लछिन—

एक झूँठि की सिद्धि कैं हित अनेक झूठि कहियै सो मिथ्याधिवसित।

भाषाभूषन—

कर मैं पारद जौ रहै करै नवोढ़ा प्रीति।

अलंकार करनाभरन—

द्वै कमलनि पैं चरन धरि चढ़ी नदी ह्वै पार।
मुग्धा सौं कीनी सुरति मोहित करि तिहि बार।।४८६।।

× × ×

हरदी जरदी जौ तजै षटरस तजै जुआम।
सीलवंत गुन कौ तजै औगुन तजै गुलाम।।४८७।।

---

१. आनद।

अथ ललित लछिन—

प्रस्तुति कौं बिंब प्रस्तुत मैं कहियै सो[1] ललित।

अलंकार करनाभरन—

ग्रीषम दियौ बिताइ सब ए री बौरी बीर।
बनवावति पावस समैं अब यह महल उसीर॥४८८॥

सोमनाथ कौ—

पिय जौवन के अमल मैं दृग छकि रहे निदान।
जलम करत डरपत न ए क्यौं लहियत मधुपान[2]॥४८९॥

मुकंद—

काजर दै करिहै कहा तिय तुव दृग अति स्याम।

भाषाभूषन—

सेत बाँधि करिहै कहा अब तौ उतर्यौ अंब॥

केसव कौ कवित्त—

हसत खेलत खेल मंद भई चंद दुति,
कहत कहानी अरु पूछत पहेरी जाल।
केसौदास नीद बस आप आपने घरनि,
हरैं हरैं उठि गई बालका सकल बाल।
घोरि उठे गगन सघन घन चहूँ दिस,
उठि चले कान्ह धाइ बोली हसि तहकाल[3]।
आधी राति अधिक अँधेरे माँहि कैसे जैहौ,
राधिका की आधी सेज सोइ रहे प्यारे लाल॥४९०॥

अथ प्रहर्षण त्रिविधि[4]—

जतन बिन वांछित फल की प्राप्ति होइ सो **प्रथम** वांछित हू तै अधिक फल श्रम बिन प्राप्ति होइ सो **दुतिय,** साधन[5] कौ जतन करत ही वस्तु प्राप्ति होइ सो तृतिय।

---

१. सोसो—पुनरुक्ति। २. मद्यपान। ३. तहकील। ४. त्रविधि। ५. सोधन।

अथ प्रथम प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

जाकौं चित चाहत सुतौ आई दूती होइ।

सोमनाथ—

व्याकुलता प्रगटी महा ग्रीषम के दुख दँद।
नैंननि सुधा तृषा भई तबही दरस्यौ चँद।।४९१।।

अलंकार करनाभरन—

अली सहज ही बनि गयौ जो मन हुतौ विचार।
उहीं भाम ते बाह गहि करी नदी के पार।।४९२।।

मुकंद कौ—

चित मैं चाह भई तबै तुमहि मिले पिय आनि।।

सुन्दर कौ सवैया—

'लोग बारात गए सब रे ?'[1]—इत्यादि।

अथ द्वितिय प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

दीपक कौ उद्दम कियौ तौ लौं उदयौ भान।

अलंकार करनाभरन—

अरे चितेरे मित्र कौ अबही लिखि दै चित्र।
कह्यौ तिया तबही दियौ दरसन प्यारे मित्र।।४९३।।

सोमनाथ कौ—

चिबुक छियौ चाहत हुते नव तिय की हरि आज।
भेटि भुजा भरि आपतैं सुबह सहित सुख साज।।४९४।।

---

१. सवैया का केवल इतना ही अंश देकर इत्यादि कर दिया गया है।

देवीदास[1] कौ कवित्त—

जलद सौ तीनि चारि बुँदनि की चातकनैं,
चित चाँप टेरि टेरि कैं गुहार करी है।
त्यौंही दस दिसहू तैं उमड़ि घुमड़ि घन,
आइ इक छिन ही मैं घटा नभ ढरी है।
बरषन लाग्यौ इक टक हू मुसलधार,
जल कौ न पार सब नद नदी भरी है।
बड़े कौ बिचार कहा कीवौ करौ देवीदास
छोटे कौ ज़ुलम सौं न बड़ेनि की घूरी है॥४९५॥

अथ तृतीय प्रहर्षन—

भाषाभूषन—

निधि अंजन की ओषधी सोधति लही निदान।

सोमनाथ—

परसौं तैं ढूँढ़ति हुती घर बन हरिके हेत।
सो मैं पाए आज अब हिरदय भयौ सचेत॥४९६॥

अलंकार करनाभरन—

पिय आवन हित पथिक सौं कहन लगी समझाइ।
तबही चल्यौ बिदेस तैं मिल्यौ भावतौ आइ॥४९७॥

अथ विषाद लछिन—

चित्त की चाह तैं बिपरीति वस्तु की प्राप्ति होइ सो विषाद।

भाषाभूषन—

नीबी परसत श्रुति परी चरनायुध धुनि आइ।

सोमनाथ कौ—

राज लहन अभिलाष जिय पहुँचे पितु के पास।
सुत सनेह तजि राम कौं उन दीनौ बनबास॥४९८॥

---

१. देव।

अलंकार करनाभरन—

दिन ही मैं निसि मिलन कौं कियौ मनोरथ बाल।
साँझ होत परदेस कौं चल्यौ भावतोलाल॥४९९॥

सोरठा—

ए आए घनस्याम काहू कह्यौ पुकारि कैं।
बिहसत निकसी बाम देखत दुख दूनौ भयौ॥५००॥

मुकंद कौ सवैया—

चंड लगी रवि की किरनै खलु बाट की टाटि मुकंद तचावै।
सो श्रम मैं टन कौं तकि छाँह सुबील के वृच्छ तरैं चलि आवै।
त्यौं फल उच्च तैं टूटि महा सिर पैं परि फूटि कैं सब्द सुनावै।
भागि बिना नर सुख्ख कौ धावै पै दुख्ख दई तिहि दूनौ दिखावै।
॥५०१॥

बिहारी कौ—

कन दैवौ सौंप्यौ सुसर बहू थुरहथी[1] जानि।
रूप रहचटैं लग लग्यौ मागन सब जग आनि॥५०२॥

कवित्त—

नीकैं मधु पीकै मत्त मधुप सरोज ही मैं,
रुकि गयौ जबै लुकि गयौ दिनमनि[2] है।
जानैं जो है राति ह्वै है प्रात दरसैहै रबि,
बिकसैहै कंज तब ही तौं निकसनि हैं।
एतैं गज आयौ उह पंकज उपारि खायौ,
भयौ भायौ[3] विधि कौ किसन धरि धनि हैं।

---

१. थुरहती शुद्ध पाठ 'बिहारीसतसई'—सम्पादक लाला भगवानदीन से लिया गया है। २. दिनमानि। ३. भयौ।

वैसैं बहुतेरी तू तौ चाहत बनायौ भैया,
तेरी न बनाई बनैं बनिहैं सुबनिहैं[1] ॥५०३॥

मुकंद कौ—

अतन ताप मैं टन ? गई सुन्दर बाग बिचारि।
अतन ताप दूनौ कियौ तरु फल फूल निहारि॥५०४॥

अथ चतुर्विधि उल्लास—

एक के गुण तैं और कौं गुण होइ सो **प्रथम**, एक के दोष तैं और कौं दोष होइ सो **द्वितिय**, एक के गुण तैं और कौं दोष होइ सो **त्रितिय**, एक के दोष तैं और कौं गुण होइ सो **चतुर्थ**।

अथ प्रथम उल्लास—

न्हाइ संत पावन करै धरै गंग इह आस।

अलंकारमाला—

साध संग तैं जन भए पावन करत न बास।

---

१. इसी कवित्त से मिलती-जुलती 'बेनी प्रबीन' की निम्नलिखित सवैया है। दोनों का भाव एक ही है।

पंकज कोष में भृंग फँसो करतो अपने मन यों मनसूबो।
होइगे प्रात उवैंगे दिवाकर जाउँगो धाम पराग लै खूबो॥
बेनी सुबीचहुँ और भयौ नहिँ जानत काल को ख्याल अजूबो।
आय गयन्द चबाय लियौ रहिगा मन का मन ही मन सूबो॥

ठीक इसी भाव का संस्कृत का निम्नलिखित श्लोक भी है—

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति पद्मगते द्विरेफे हा हन्त ! हन्त ! नलिनीं गजमुज्जहार॥

अलंकार करनाभरन—

बंधुजीव की माल यह नैक पहरि लै बाल।
चाहत हौं न सुगंध यह तो तन परसि रसाल॥५०५॥

केसव कौ कवित्त—

निपट निगंध यह हार जीवबंध कौ सु,
चाहत सुगंध भयौ नैक ग्रीव[1] नाइयैं॥

दोहा—

कहा न ह्वै सतसंग ते देखौ तिल अरु तेल।
मोल तोल सब घटि गयौ पायौ नाम फुलेल॥५०६॥

× × ×

साची संगति साध की हरै और की ब्याधि।

× × ×

पाहन कौ गिरि धन्य गुविंद जिन्हैं मन या जग के करि लीनैं।
आकठू ढाक करीर बबूर सबै मलयागिरि चंदन कीनैं।

सवैया केसव कौ—

मत्त गयंदनि साथ सदा इन थावर जंगम जूह बिदार्‌यौ।
ता दिन तैं कहि केसव बेधन बंधन दै बहुधा विधि मार्‌यौ।
सो अपराध सुधारन काज इही इनि साधन सिद्धि बिचार्‌यौ।
पावन पुंज तिहारौ हियौ यह चाहत है अब हार बिहार्‌यौ॥५०७॥

अथ त्रुतिय उल्लास—

अलंकारमाला—

महि बिकार तैं खार रस भयौ सुनहु कबि लोइ।

---

१. ग्रीम।

तुलसीदास—

महमा घटी समुद्र की रामन बस्यौ परोस[1]।

अलंकारमाला—

रही मनाय मनैं नहीं मानी नंदकिसोर।
लै कठोरता स्याँम की मैं हूँ होंहुँ कठोर ॥५०८॥

× × ×

खोटी संगति नीच की आठौ पहर उपाधि।

सवैया—

आनद दाइक चंदन मित्र बसै जिनि ह्याँ यौं गुविंद उचारैं।
या बन मैं दुरबंस कठोर असार हियै जिनको बढ़ वारै।
सो सब आपस मैं मिलिकैं अति जाल की झाल कराल निकारैं।
हैं मतिमंद सुगंधनि लै अपने कुल कौ पुनि और कौं जारैं ॥५०९॥

अथ तृतीय उल्लास—

अलंकार करनाभरन—

भई मलिन प्यारी जदिप सुघर सौति सुनि कान।

सोमनाथ कौ—

लाज चतुरई सील जुत तिय गुण रूप निधान।
एते पर रीझत नहीं पिय हिय मैंन सयान ॥५१०॥

मुकंद कौ—

उदय होत ही सूर कैं चंद मलिन दुति होति।

अथ चतुर्थ उल्लास—

अलंकारमाला—

निसा धरति तम घोर कौं चंदहि परम प्रकास।

---

१. परौस

तुम तीखी चितवनि चितै करी बाहिरी हाल।
लाभ यहै जीवति रही उह ललना नँदलाल।।५११।।

मुकंद कौ०—

कुटम सहित रामन हत्यौ मिल्यौ बिभीषन राज।।

अथ अवज्ञा[1] लछिन—

एक कौ गुण दोष और कौं न लगै सो अवज्ञा।

भाषाभूषन—

परम सुधाकर किरिनि कैं खुलैं न पंकज कोस।

सोमनाथ कौ—

निस बासर तरुनीनि मैं बिहरै पर घट गोइ।
सूर बीर नर नैंक हूँ हियैं न काइर होइ।।५१२।।

कवित्त—

सब करि हारी सुरनारी यौं गुविंद कहैं,
तदपि पुरारी कौ बिकारी चित्त ना भयौ।।

तुलसीदास जी कौ सोरठा—

फूलै फलै न बैत जदपि सुधा बरषै जलद।
मूरख हृदै न चेत जौ गुर मिलैं बिरंचि सम[2]।।५१३।।

दोहा—

धिक सुमेर तौ कनक तन पाहन सब परिवार।
× × ×
राखौ मेलि कपूर मैं हींग न होइ सुगंध।।

अथ अनुग्या लछिन—

दोष कौं गुन मानिलीजै सो अनुग्या।

---

१. वज्ञा। २. सत।

भाषाभूषन—

होहु बिपति जामैं सदा हियैं चढ़त हरि आनि।

सोमनाथ कौ—

बिरह दियौ सु भली करी हमैं छबीले लाल।
टरै न छिन भरि दृगनि तैं उन कौ रूप रसाल॥५१४॥

अलंकार माला—

सखि दृग होइ निलज्जता जौ हरि दरसन होइ।

अलंकार करनाभरन—

उद्धव बिछुरन हीं भलौं मिलन चहत हम नाहिँ।
नंद दुलारौ सामरौ सदा बसै मन माहिँ॥५१५॥

काहू कौ सवैया—

लाज[1] के ऊपर[2] गाज परौ ब्रजराज मिलैं सुइ लाज करौरी।

निपट की तुक—

तोसौं न उज्यारौ प्रभु मोसौ न पतित भारौ,
मोहि जिनि तारौ बैकुंठ कौं बिगारौगे।

कवित्त—

दूनौ भलौ सुपथ कुपथ पै न ऊनौ भलौ,
सूनौ भलौ घर पै न खल साथ करियै।
अनल की लपट झपट भली नाहर की,
कपटी के कपट सौं दूरि ही तें डरियै।
यह जग जीवन परम पुरुषारथ है,
पर घर बैठि पुनि रस सौं निकरियै।
हारि मानि लीजै पैं न कीजै बाद मूरख सौं,
सरबस दीजै परबस पै न परियै॥५१६॥

---

१. जल। २. उपर।

अथ दुबिधि लेख लछिन—

गुन मैं दोष की कल्पना सो **प्रथम,** दोष मैं गुन की कल्पना सो **द्वितीय**

अथ प्रथम लेख—

भाषाभूषन—

शुक यह मधुरी बानि तैं बंधन लह्यौ बिसेष।

सोमनाथ कौ—

सुनौ सयाने छीरनिधि वचन चारु चित लाइ।
रतन संग्रहनि तैं सुरनि उदर मथ्यौ तुव आइ।।५१७।।

अलंकार करनाभरन—

सुख सौं दधि बेचति फिरति और सबै ब्रजबाल।
घेरि लहे हरि मोहि यह रूप भयौ जंजाल।।५१८।।

अलंकारमाला—

मधु बच करि सुक पिँजरा पर्‌यौ आनि कै बंदि।।

निपट कौ कवित्त—

हाँसी मैं विषाद बसै विद्या मैं विवाद बसै,
भोग माझ रोग अरु सेवा मैं अधीनता।
आदर मैं मान बसै सुचि मैं गिलान बसै,
आवन मैं जान बसै रूप माहि हीनता।
जोग मैं अभोग औ सजोग मैं वियोग बसै,
× × × पुन्य[1] माहि दीनता[2]।
निपट निरंजन प्रवीननि ए बीनि लीनी,
हरि जू सौं प्रीति सबही सौं उदासीनता।।५१९।।

---

१. पन्थ। २. यह पंक्ति प्रस्तुत प्रति में खण्डित है।

देव कौ कवित्त—

देखैं अनदेखैं सुखदाई भए दुखदाई,
सूखत न आँसू सुख सोइबौ तरें परयौ।
पानी पान भोजन सजन गुरजन भूले,
देव दुरजन लोग हसत खरैं परयौ।।
कौन पाप लाग्यौ पल एकौ न परति कल,
दूरि गयौ गेह नव नेह नियरैं परयौ।
होतौ जौ अजान तौ न जानतौ बिरह बिथा,[१]
ए री जिय जान तेरौ जानिबौ गरैं परयौ।।५२०।।

अथ दुतिय लेख—

अलंकार करनाभरन—

रिस सौं गोरे बदन मैं भई अरुनई आइ।
इहि छबि मानिनि की रही पिय हिय माहि समाइ।।५२१।।

सोमनाथ कौ—

आपु कलंकी ह्वै रह्यौ दृग कौ दियौ अनंद।
निपुन बचन प्रतिपाल कौ अजहुँ कहावत चंद।।५२२।।
हौं सब कौं देखौं जगत मोहि न देखै कोइ।
तुव प्रसाद हौं सिद्ध भौ न मो दरिद प्रभु तोहि।।५२३।।
कोटि कोटि सज्जन करौं या दुर्जन की भेट।
रज नीकौ मेला कियौ बिधि के अच्छिर[२] मेटि।।५२४।।

अथ मुद्रा प्रस्तुति लच्छिन—

प्रस्तुति पद मैं और ही अर्थ प्रकासै सो मुद्रा प्रस्तुति।

भाषाभूषन—

अली जाइ किनि पिय जहाँ जहाँ रसीली बास।

---

१. विथ। २. अछिर।

सोमनाथ कौ—

लाल लसति तिहि ठौर जहाँ नवमनि बनी बनाइ।

अलंकार करनाभरन—

होइ बावरी जो सुनैं बँसी नाद रसाल।

अथ रत्नावली लच्छन—

प्रस्तुत अर्थ के और ही नाम क्रम सौं जहाँ होइ सो रत्नावली।

भाषाभूषन—

रसिक चतुर तुव भूमिपति सकल ज्ञान कौ धाम।

सोमनाथ कौ—

असुर बिदारन तुव सदा सिय नायक रघुबीर।

अलंकार करनाभरन—

बानी विधि कमलारमन गौरी सिव अभिराम।
तुम ही सीताराम हौ तुम राधा घनस्याम॥५२५॥

मुकंद कौ दोहा—

नवल किसोरी लाडिली श्री वृषभान कुवारि।
प्रीतम प्यारी रसिकनी त्रिभुवन की सिरदारि॥५२६॥

अथ तद्गुण लछिन—

अपनौ गुण तजिकैं संगति कौ गुण लेइ सो तद्गुण।

भाषाभूषन—

बेसरि मोती अधर मिलि पदमराग छबि देइ।

सोमनाथ कौ—

सरसति जानि सरीर पैं रुचि सौं पहरी बाल।
केसरिया रग ह्वै रही सेत कंचुकी लाल॥५२७॥

बिहारी कौ—

अधर धरत हरि कैं परत ओठ दीठि पट जोति।
हरित बाँस की बाँसुरी इंद्रधनुष रग होति॥५२८॥

अलंकार करनाभरन—

मुक्तामाल दई जु मैं[1] पहरि लई नव बाल।
तन दुति मिलि पुखराज की भई माल नँदलाल।।५२९।।
तरुण अरुण एड़ीनि के किरिनि समूह उदोत।
बैनी मंडन मुक्त के पुंज गुंज रुचि होत।।५३०।।

कवित्त—

मोतिनु कौ हार मैं सवारि दयौ प्यारी हाथ,
तब लख्यौ लालनि कौ बिनु उपचार है।
पहर्यौ हरखि हिय हाटक कौ ह्वै रह्यौ,
हसैं ते लस्यौ हीरन कौ सरस सुढार है।
अधर तैं विद्रुम दृगनि छबि नीलम सु,
अँग अँग और और उदित अपार है।
श्री गुविंद कौ कुवार रिझवार भयौ प्यार,
सौं निहारि बलि हार बार बार है। (?) ५३१।।

काहू कौ सवैया—

बेल कौ हार दियौ गुहि मालिनि प्यारी के हाथ गुलाब दिखानौं।
लायौ हियैं तव चंपे कौ ह्वै गयौ मंद हसी तव कुंद कौ जानौं।
नैंननि कौं प्रतिविंव परैं गुलसोनन की दुति ह्वै गयौ मानौं।
ऐसौ कछू पलटयौ अग मैं रंग देखत ही मन मेरौ बिकानौं।
।।५३२।।

अथ अतद्गुण लछिन—

संगति भए तैं गुन नहीं लगै सो अतद्गुण।

भाषाभूषन—

पिय अनुरागी ना भए बसि रागी मन माहि।

---

१. म।

सोमनाथ कौ—

सबरी निस नव कंज मैं कीनै रह्यौ निकेत।
निरखौ तऊ भयौ नहीं स्यामल मधुकुर सेत।।५३३।।

कवित्त—

चन्दन कौ खौरि चारु अँगराग घनसार,
अँग अँग सुमन सिगार मन मोहियै[1]।
मोतिनु मुकट धरैं हीरनु के हार गरे,
पायजेब पाइनि जरायनि के जोहियै।
चटक मटक पट पीति की फरहरानि,
कहत गुविंद उपमान आन टोहियै।
गोरिन के रँगरगे आठौ जाम घनस्याम,
तौ हू घनस्यामनि तैं घनेस्याम सोहियै।।५३४।।
केसौदास दिगाज कै × × ×[2]
नैक हू न कारी भई कीरति महेस की।।१।।

अथ पूर्वरूप द्विविध—

संगति कौ गुण लैकैं तजिकैं फिरि अपनौ ही लेइ सो **प्रथम**, मिटि के उपाइ किये हू तैं नहीं मिटै सो **द्वितीय**।

प्रथम पूर्वरूप—

सोमनाथ कौ—

चौकी हीरनि जटित पर चरन धरै नवनारि।
लसी अरुन छबि हास तैं भई सेत उनहारि।।५३५।।

भाषा भूषन—

सेस स्याम है सिव गरैं जस तैं उज्जल होत।

---

१. मोहिए। २. पंक्ति खण्डित है।

अलंकार करनाभरन—

राधे तन दुति मिलि भए तुम गोरे घनस्याम।
फिरि उन सौं अंतर भए रहे स्याँम के स्याम।।५३६।।

काहू कौ दोहा—

अधरन दुति बिद्रमनि रखि नासा मुक्ता गुँज।
रह्यौ जलज कौ जलज ही हसत मालती पुँज।।५३७।।

अथ द्रुतिय पूर्वरूप—

भाषाभूषन—

दीप न दाये हूँ कियौ रसनामनि उद्योत।।

सोमनाथ—

विरह समय तिय जानिकैं बिथा जौं हौंकी होति।
दुरी सदन प्रगटी तऊ अति सरीर की जोति।।५३८।।

बिहारी कौ—

अँग अँग नग जगमगैं दीपशिखा सी देह।
दिया बढ़ायैं[१] हूँ रहैं बड़ौ उज्यारौ गेह।।५३९।।

काहु[२] की तुक—

ज्यौं ज्यौं प्यारौ करत अँध्यारी रसरँग हेत,
त्यौं त्यौं प्यारी करति उज्यारी बिहसनि[३] तैं।।

अलंकार करनाभरन—

बैठी हुती प्रभा भरी बाल चाँदनी माहि।
ससि अथयैं हूँ रूप की मिटी उज्यारी नाहि।।५४०।।

---

१. बड़ायै। २. कहू। ३. वहसनि।

अनुगुन लछिन—

भाषाभूषन—

मुक्तमाल हिय हास तैं अधिक सेत ह्वै जाइ।

अलंकार करनाभरन—

गई चाँदनी बनक बनि प्यारी प्रीतम पास।
ससि दुति मिलि सौ गुण भयौ दूषन बसन प्रकास।।५४१।।

मुकंद कौ—

प्रभु तुव कीरति मिलि सरस बिमल ज्यौंन्ह दरसाति।

सोमनाथ कौ—

विरी संग तें तिय अधर अधिक सेत ह्वै जात।

× × × ×

गृहै नीच घर बाय मय ते पुनि बीछी मार।
ताहि पिवावै बारुनी कहौं कौंन उपचार।।५४२।।

देवीदास कौ कवित्त—

पहलैं तौ बाद रहै बाय भर्यौ बावरौ है,
बीछी खायौ बूढ़ी बैस बुरौ बिकरार है।
मदिरा कछूक प्यायें बिजिया खवायें बीन,
बीसक धतूरे हू के खाए बेसुमार है।
ताहू पै कटाक्ष पाग्यौ डोलै भाग्यौ भाग्यौ तातैं
एते पर भूत लाग्यौ सौसौ[1] कु प्रकार है।
देवीदास कहै ताकौं बैद न बुलावै कोई,
करौं धौं बिचार याकौ कहा उपचार है।।५४३।।

---

१. सै सै।

अथ मीलत लछिन—सादृश्य तैं भेद न लखाइ सो मीलत।

भाषाभूषन—

अरुण बरण तिय चरन पर जावक लख्यौ न जाइ।

विहारी कौ—

मिलि परछाँहीं ज्यौंन्ह मैं रहे दुहुनि के गात।
हरि राधा इक साथ ही चले गली मैं जात॥५४४॥

मतिराम कौ कवित्त—

उमड़ि घुमड़ि दिगमँडल निमँडि रहे,
झूमि झूमि बादर कुहु की निसकारी मैं।
अँगनि मैं कीनैं मृगमद अँगराग तैसौं,
आँनन छिपाय लयौ स्याम अँग सारी मैं।
मतिराम चीबुक मैं स्याँम रगि रागि रही,
आभरन साजि मरकत मनि बारी मैं।
मोहन छबीलें कौं मिलन चली ऐसी छबि,
छाँहलौं छबीली[1] छिपि जाति अधियारी मैं॥५४५॥

अँगनि सघन घनसार अँगराग सेत,
सारी छीर फैंन कैसी भाँति उफनाति है।
सोहत रुचिर रुचि मोतिन के आभरन,
कुसुम कलित केस सोभा सरसाति है।
कवि मतिराम प्राणप्यारे कौं मिलन चली,
करिकैं मनोरथनि मृदु मुसकाति है।
होति न लखाई निसि चंद की उज्यारी मुख,
चन्द की उज्यारी तन छाँहौं छिपि जाति है॥५४६॥

---

१. छबील।

अथ सामान्य लछिन—सादृश्य तेँ बिसेष जानि परै नही सो सामान्य।

भाषाभूषन—

नाहिं फर्क श्रुति कमल अरु तिय लोचन अनमेष ॥८९॥

विहारी कौ—

बरन बास सुकुमारता सब बिधि रही समाय।
पाखुरी लगै गुलाब की गात न जानी जाय॥५४७॥

अलंकार करुनाभरन—

बैठे दरपन भौन मैँ चारु वदन नँदलाल।
ठौर ठौर प्रतिबिंब लखि चकित ह्वै रही बाल॥५४८॥

सोमनाथ कौ—

लखियै पिय निसि मैँ नवल कौँतुक सुख सरसात।
हिमकर अरु तिय बदन मैँ अँतर लह्यौ न जात॥५४९॥

अलंकारमाला—

जाने जात न कमल अरु तिय मुख लखि सरमाहि।

अथ उन्मीलत लछिन—सादृश्य तेँ भेद फुरै सो उन्मीलत।

भाषाभूषन—

कीरति आगैँ तुहिनि गिरि छुयै परसहैँ जानि॥९१॥

विहारी कौ—

दीठि न परत समान दुति कनक कनक सौ गात।
भूषन करकस से लगत परस पिछाने जात॥५५०॥

सोमनाथ कौ०—

कैसेँ बरनौ रंग सुनि प्रीतम नँदकुवार।
झनकत जान्यौ तिय हियैँ सुबरन हिमकर हार॥५५१॥

काहू कौ कवित्त—

तन की गुराई तरुनाई की निकाई छाई,

जाकी उजराई तें उज्यारी हू लसति है।
सरद निसा मैं प्यारी उज्जवल सिंगार साजै,
गजगमनी की नीकी सोभा सरसाति हैं।
चली अनुरागी मन मोहन के मिलिबे कौं,
चाँदनी मैं मिलि गई क्यौं हूँ न लखाति है।
लपट सुगंध की अछेह उपटति अंग,
ताही की तरंग लगी सखी संग जाति है।।५५२।।

अलंकार करनाभरन—

भूषन सुबरन तन बरन मिलि लखाइहै नाँहि।
परस करैं कोमल कठिन ए री जानें जाँहि।।५५३।।

बिहारी—

मिलि चंदन बिंदी रही गोरे मुख न लखाय।
ज्यौं ज्यौं मद लाली चढ़ै त्यौं त्यौं उघरति जाय।।५५४।।

अथ विसेष लछिन—समता मैं विसेष फुरे सो विसेष[1]।

भाषाभूषन—

तिय मुख अरु पंकज लखैं ससि दरसन तैं साँझ।

सोमनाथ कौ :—

बिमल बरन सब एक से नीर निकट रहे ठानि।
बकुलनि सँग सुत हंस के लियैं चलन तैं जानि।।५५६।।

बिहारी दोहा—

रंच न लखियत पहरियत कंचन से तन बाल।
कुम्हिलानी जानी परति उर चंपे की माल।।५५७।।

अलंकार करनाभरन—

सर मैं कमलनि मधि बदन तिय कौ परत न जानि।
मुसिकावनि लावनि पलक बतरावनि पहचानि।।५५८।।

---

१. विसोष।

देवीदास कौ कवित्त—

माथौ बन्यौ मुह[1] बन्यौ मूँछ बनी पूँछ बनी,
लाघव बन्यौं हैं पुनि बाघ समतूल कौ।
रच्यौ चग्यौ अंग बन्यौ लंक बन्यौ पंजा बन्यौ,
कृत्रम ही के समूह सिघ ही के मूल कौ।
गुंजिबे की बेर मौंन गहि बैठ्यौ देवीदास,
वैसोई सुभाव कूद फाँद फैल फूल कौ।
कुंजर के कुंभहि बिदारिवे की बेर कैसैं,
कूकर पै निबहैगौ स्वांग सारदूल कौ॥५५९॥

अथ गूढ़ोत्तर लछिन—हिय मैं कछू भाव कौं लियैं जब उत्तर दीजै सो गूढ़ोत्तर।

भाषाभूषन—

उनि बातनि[2] मैं पथिक तू उतर न लाइक सोइ।

सोमनाथ कौ—

इहाँ न लखियै साँवरे दिनकर तेज कछूक।
बनी रहति दिन राति नित अति कोकिल की कूक॥५६०॥

अलंकार करनाभरन—

जल फल फूल भरयौ हरयौ सुखद सघन आराम।
इत ह्वै जो निकसत पथिक बिरमि निवारत घाम॥५६१॥

केसव कौ कवित्त—

केसौदास घर घर नाचत फिरत गोप,
एक परे छकि कैं मरेई गनियत हैं।
बारुनी के बस बलदाऊ किये सखा सब,
संग लै को जैयै दुख सीस धुनियत हैं।

१. मह। २. बैतनि।

मोहि तौ गए ही बनैं दीह दीपसाला पाय,
गाइनि सभारिवे कौं चित चुनियत हैं।
जौवन[1] सौं लोल नैंनी लेरुवा मिलैं ई सब,
खरिख खरेई आज सूने सुनियत हैं॥५६२॥

आपनेई भाइके वे सोहत सरीख से ए,
केसौदास दास ज्यौं चलत चित लीनैं हैं।[2]
आपु ही अगाऊ कै कै लेत नाम मेरो वे तौ
बापुरे मिलाप के सलाप करि हीनैं हैं।
प्रिया कौं सुनाइ कैं कहत ऐसे घनस्यांम,
सुवन कौ लै लै नाम काम भय भीने हैं।
साथ लै सखानि हम जैबौ बन छाड़्यौ अब,
खेलन कौ संग सखा साखामृग कीने हैं॥५६३॥

कवीन्द्र कौ कवित्त—

सहर मझावत पहर द्वैक लागि जैहै,
बसती के छोर मैं सराहिहै उतारे की।
भनत कविंद्र मग माझ ही परैगी साँझ,
खबरि उड़ानी है बटोही द्वैक मारे की।
प्रीतम हमारे परदेस कौं सिधारे याते
मया करि बूझति हौं रीति राहवारे की।
करषैं नदी के बरबर के तरें तू बसि,
चौकैं मति चौकी इतै पाहरू हमारे की॥५६४॥

---

१. जौनव।

२. इस प्रति में इसका पाठ इस प्रकार है—'केसौदास ज्यौं चलत चित लीनैं हैं'। शुद्ध पाठ 'रसिकप्रिया' से दिया गया है।

सासु है नियारी नँद सासु कैं सिधारी इह,
घटा अँधियारी भारी सूझत न कर है।
प्रीतम कियौ है गौंन सूनौ × × ×[1]
× × ×

अथ चित्र लछिन—

प्रश्न अरु उत्तर एक ही वचन मैं होइ सो चित्र।

सवैया—

कोप करै ससि कौं लखि राहु सु कोकिल बोलति है मृदुबानी।
कोक हियै दुखी या नित जामिनि कोकल है सु महा रस जानी।
का मधुरा सखि या व्रज मैं ब्रज चंद गुविंद जू के मन मानी।
फागुन मैं तिय आपनी लाज रखैं घर कौंन मैं बैठि सयानी।
॥५६५॥

चित्रभेद—अनेक प्रश्न कौ एक उत्तर।

चतुरबिहारी कौ कवित्त—

चतुर बिहारी जू पै मिलि आई बाला सात,
मागति हैं आज कछू हमकौं दिवाइयै।
गोद लेहु फूल देहु नाकै पहराइ मोती,
पानन की पातरि हुतासन हूँ लाइये।
ऊचे से अवास के झरोखैं बैठाइयै जू,
सेज स्याम चलियै जू रतिपति ध्याइयै।
ग्वारि समझाइबे कौं उत्तर सु दीनौ एक,
उकति विसेष भाँति बारी नही आइयै॥५६६॥

---

१. प्रति खण्डित है।

अलंकार करनाभरन—

राधा रहति कहाँ कहौ कौहै सुरपति[1] धाम।
रुचिर हियैं पर कौ लसै कहीं उरबसी स्याँम ॥५६७॥

अथ बहिरलापिका—

काहू कौ दोहा—

पान सरै घोरा अरै विद्या बीसरि जाइ।
जग रामैं वाटी? बरै कहौ सु कवि कह दाइ ॥५६८॥
फेरी नही विष्नु बरन को सलिल गति,
रद अंवर कहा चाहि उतर अधर। (?)

अथ अंतरलापिका—

नट सिखवत कहा नचत कौ पावस मध्य कलापि।

केसव की छप्पै—

कहा न सज्जन बसत[2] कहा सुनि गोपी मो हित।
कहा दास कौ नाम कवित में कहियत को हित।
को प्यारौ जग माँझ कहा छत लागैं आवत।
को बासर कौ करत कहा संसारहि भावत।
कहि काहि देखि काइर कपत आदि अंत है को सरन।
यह उत्तर केशवदास दिय सवै जगत सोभाधरन ॥५६९॥

अथ प्रतिलोभ—

केसव की छप्पै—

को सुभ अछिर कौन जुवति जो धन वस कीनी।
बिजय सिद्धि संग्राम राम कहु कौनें दीनी।
कंसराज जदुवंस वसत कैसे केसवपुर।
वट सौं कहियैं कहा नाम जानौ अपने उर।

---

१. सरपति। २. ववत।

कहि कौन जननि गनपत्ति की कमल नैंन सूक्षम वरुनि।
सुनि वेद पुराननि में कही सनकादिन संकर तरुनि।।५७०।।

अथ व्यस्त गतागत—

हवी की छप्पै—

कहा दूती सौ कहत पुरुष कहा गुहत मंग तिय।
कौंन गंध कौं लहत मधुप कहाँ रहत हरषि हिय।
कहा सुर-बधू नाम ज्ञान तैं कोकहि भागत।
कहा प्रात कौ नाम कहा लेखौ करि मागत।
मीन कहँ बिधिता हियौ कहा कहि लहत हुलास री।
हवी कौंन मोही बधू कहत लाल की बाँसुरी।।५७१।।

अथ सूक्षम[1] लछिन—

कछू भाव सौं पर आसै सैंननि मैं जहाँ लखियै सो सूक्षम।

भाषाभूषन—

मैं देख्यौ उहि सीसमनि केसनि लियौ छिपाय।

सोमनाथ—

सनमुख ह्वै मीड़ै करनि श्रीफल रसिक मुरारि।
कसकि हसी तिय बदन पै घूँघट असित सुधारि।।५७२।।

कवित्त पुरान कौ—

बाँसुरी के बीच एक भौंर डारि लाई सखी,
मूँदिबट पल्लव तैं महा बुधि भारी सौं।
भनत पुरान जामैं आपु ही तें धुनि होति,
कान दै कैं सुनौं कह्यौ राधे सुकमारी सौं।

---

१. सक्ष्म्मा।

रीझी रिझवार ताहि देखत मगन भई,
नभ तन चितै मुख ढाप्यौ स्याम सारी सौं।
आँचर मैं गाँठि दै विहसि उठि चली आली,
प्यारी कह्यौ आज ह्याँ ही रहियै तिहारी सौं ॥५७३॥

केसव कौ सवैया—

बैठी हुती वृषभान कुवारि सखीन की मंडली मंड प्रबीनी।
लै कुम्हिलानौ सौ कंजक पायकैं पाइनि लायौ गुवालि नवीनी।
चंदन सौं छिरक्यौ बहुबारक पान दिये करणारस भीनी।
चंदन चित्र कपोलनु लोपि सुअंजन आँजि बिदा करि दीनी।
॥५७४॥

मतिराम कौ सवैया—

जानतु चोर सो चोरन की गति साह की साह बली की बली।
ठग की ठग कामक कामक की छलकी छल छैल छली की छली।
कछु लंपट जानत लंपट की मतिराम न जानै कहाँ धौ चली।
उनि फेरि दियौ नथ को मुकता उन फेरिकैं फूँकी गुलाब कली।
॥५७५॥

अथ पिहित लछिन—

पराई बात छिपी जानि कैं भाव सो लखावै सो पिहित।

भाषाभूषन—

प्रातहि आए सेज पिय हसि दावति तिय पाय।९।

सोमनाथ कौ—

बिथुरे कच रति रंग मैं समुझि सखी मुख मोरि।
दई तरुनि कौं बहसिकैं अरुण पाट की डोरि॥५७६॥

अलंकार करनाभरन—

प्रीतम आए प्रातही अनतै रैंनि बिहाइ।
बाल दिखायौ आदरस सादर सौं बैठाय॥५७७॥

अलंकारमाला—

पियहि प्रात आवत सुघर सेज सुधारति भीर ॥११॥

नरोत्तम कौ कवित्त—

आए मनमोहन बिताइ रैँनि अनतैं सु,
काहू सौति जावक लगाय दियौ भाल कौँ।
सुकवि नरोत्तम जलज नैँनी आदर सौँ,
देखत ही मिली उठि मदन गुपाल कौँ,
अंचल सौँ झारि पग चंदन नयन लाइ
हसि मुख पौँछि बैन रिसन रसाल कौँ।
कह्यौ उठि धाइ हसि सहचरी[1] जाइ अब,
आरसी के महल बिछौँना कियौ लाल[2] कौँ ॥५७८॥

केशव कौ सवैया—

आवत देखि लिये उठि आगेँ ह्वै आपु ही आइकैँ आसन दीनौँ।
आपु ही पाइ परवारि भलैँ जलपान कौ भाजन लाइ नवीनौँ।
बीरा बनाइकैँ आगैँ धरे जब ही कर कोमल बीजन लीनौँ।
बाँह गही हरि ऐसेँ कह्यौ हसि मैँ तो इतौ अपराध न कीनौँ।
॥५७९॥

अथ ब्याजोक्ति लछिन—

आकार दुराइकैँ कछू और बिधि वचन कहै सो ब्याजोक्ति।

भाषाभूषन—

सखि सुक कीने कर्म ए मानिक जानि अनार।

अलंकार करनाभरन—

फूल लैंन कौ साँझ मैँ आज गई ही बीर।
अरुण बिंब फल जानि कैँ करे अधर छत कीर ॥५८०॥

---

१. हचरी। २. लल।

सोमनाथ—

मृगछौंना सुन्दर निरखि लियौ अंक मैं आज।
खुर की लगी खरौट उर सखि करि कछू इलाज ॥५८१॥

मतिराम कौ—

भलौ नहीं इह केवरौ आली गृह आराम।
बसन फटैं कंटक लगैं निस दिन आठौ जाम ॥५८२॥

कवित्त[1]—

कहा तू हसैहै सब जगत हसतु है री,
मेरौ मन भाँति भाति सरमन भारचौ है।
मेरी ओर देखि मुसिकात नटि जात मेरे,
घर के रिसात इनि नित ब्रत धारचौ है।
छतिया चढी हौं तऊ बतिया बनावतु है,
दतिया लगावत हू हियरा न हारचौ है।
होइगी सु हूजौ इह नहचै विचारचौ है,
कन्हैया जू कौं आजु तौ मैं पकरि पछारचौ है ॥५८३॥

अथ गूढ़ोक्ति लछिन—

और के मिस और सौं कहियै सो गूढ़ोक्ति।

भाषाभूषन—

कालिह सखी हौं जाउगी पूजन देव महेस।

सोमनाथ कौ—

कही टेरि समझाइ उत निरखि छबीलौं छैल।
कालिह अकेली जाउँगी सखि मधुवन की गैल[2] ॥५८४॥

---

१. सवैय कवित्त—'सवैय' पद अधिक है। २. सैल।

सुन्दर कौ सवैया—

सुन्दर जानिकैं मंदिर के पिछवारैं ह्वा आँनि कैं ठाढ़े कन्हाई।
चाहै कछू कह्यौ यैं सकुचै तब कीनी है बातनि मैं चतुराई।
पूछि परौसिनि कौं मिसु कैं मुख याही मैं पीकों[1] सहेट बताई।
साथ तिहारी ए कालिह हौं जाऊँगी देवी कैं देहरै पूजन माई।
॥५८५॥

अथ बिबृतोक्ति लछिन—

छिप्यौ श्लेष परायौ प्रगट करै सो बिबृतोक्ति।

भाषाभूषन—

पूजन देव महेस कौ कहा सिखावत सैंन।

अलंकार करनाभरन—

गरजत कहु बरसत कहू कहुँ दरसत घनस्याँम।
कहु तरसावत ही रहौ कहति जाति यौ बाम॥५८६॥

× × ×

काची ही दाखह चाहत चाख्यौ सु अंत तऊ तुम कुंज बिहारी॥२४॥

× × ×

कहूँ उघरत घुमड़त कहूँ घनस्याम,
कहूँ गरजत कहूँ रंग बरसात हौ।
कहूं साँझ कहूँ अधराति कहूँ पिछराति,
कहूँ प्रात आनिकै मुकंद मड़रात हौ॥

बिहारी कौ—

पहुला[2] हार हियैं लसै सम की बैंदी भाल।
राखति[3] खेत खरी खरी खरे उरोजन बाल॥५८७॥

---

१. यीकौ। २. पगुला।

३. रामति—पाठ सुधार 'बिहारी-सतसई' के अनुसार किया गया है।

चिरजीवी जोरी जुरै क्यौं न सनेह गभीर।
उह वृषभानु कुमारिका तुम हलधल के बीर[1]।।५८८।।

अथ जुक्ति लछिन—

क्रिया करिकैं कर्म कौं छिपाइये सो जुक्ति।

भाषाभूषन—

पाय चलत आँसू चलैं पौंछति नैंन जभाय।

सोमनाथ कौ—

हर कौं पनघट मैं निरखि पुलकित भयौ सरीर।
तिय नैं अंचल ओट दै रोक्यौ त्रिविधि[2] समीर।।५८९।।

अलंकार करनाभरन—

चित्र मित्र कौ लिखति ही कामिनि सुमति निदान।
निरखि सखी कौं लिखि दियौ कुसम धनुष करवान।।५९०।।

अलंकारमाला—

सुक निसि रव सब मधि कहत, तिय मन चंचुहि दीन।।

अथ लोकोक्ति लछिन—

लोक की कहनावति सो लोकोक्ति।

भाषाभूषन—

नैंन मूँदिषट माँस लौं सहियै बिरह विषाद।

मुकंद कौ—

तिय तो तन मैं सरस छबि जगमग जगमग होति।।

---

१. प्रस्तुति पंक्ति का पाठ 'बिहारी-सतसई' में इस प्रकार है—
"को घटि ये वृषभानुजा वे हलधर के बीर।"

२. त्रिविधि।

देव कौ कवित्त—

सहर सहर सौंधौ सीतल सुगंध[1] बहै,
घहर घहर घन घोरिकैं घहरिया।
झहर झहर झुकि झीनौ झरलायौ देव,
छहर छहर छोटी बूँदन छहरिया।
हहरि हहरि हसि हसि कैं हिडोरै चढ़ै,
थहरि थहरि तन कोमल थहरिया।।
फहर फहर होत पीतम कौ पीतपट,
लहर लहर करै प्यारी कौ लहरिया।।५९१।।

धन जोवन चारि दिना महमान सु ए तौ विचारि विचारि लै री।
अब तोपै अधीन भयौ पिय प्यारौ सु तू हू मनोरथ सारि लै री।
कहि ठाकुर चूकि गयौ जौ गुपाल तौ तू बिगरी कौं सुधारि लै री।
बहुरयौ समयौ जु बनैं न बनैं बहती नदी हाथ परवारि लै री[2]।
।।५९२।।

अलंकार करनाभरन—

उद्धव कछु दिन बनि गयौ वा कपटी संग[3] भोग।
कहाँ काँन्ह अब हम कहा नदी नाव संयोग।।५९३।।

सोमनाथ—

आवति है उर मैं सखी करियै यही उपाय।।
जित है नँद किसोर तित जैयै पंख लगाय।।५९४।।

अथ छेकोक्ति लछिन—

कछु अर्थ सौं लोकोक्ति जहाँ होइ सो छेकोक्ति।

---

१. सुगंध —

२. यह ठाकुर की सवैया है पर इसके ऊपर प्रति में 'ठाकुर कौ सवैया' लिखा नहीं है। ३. सग।

भाषाभूषन—

जो गाइनकौं फेरिहै ताहि धनंजय जानि।

सोमनाथ—

ग्वालनि सौं बतरात हौ गहैं कदम की डार।
हौं मोही मुसिकाइकैं अलि उहि नँदकुमार।।५९५।।

अलंकार करनाभरन—

उद्धव तुम जानत कहा जानैं कहा अहीर।
जानति नीकी भाँति है बिरहनि बिरहनि पीर।।५९६।।
× × ×
जादौं कुल की राखि लै मति ह्वै जाइ अहीर।।

अथबक्रोक्ति लछिन—

रसिक अपूरव हो पिया बुरौ कहै नहि कोइ।
× × ×
तैं जु कह्यौ मुख मोहन कौ अरविंद सौ है सु तौ चंद सौ देख्यौ।

अथ सुभावोक्ति लछिन—

जाति सुभाव वर्णन कीजै सो सुभावोक्ति।

भाषाभूषन—

हसि हसि देखति फिरि झुकति मुहु मोरति इतराइ।

सोमनाथ—

धरि कपोल पर अँगुरी बात कहति मुसिकाइ।
ए री ए तेरी अदाँ मो पै कही न जाइ।।५९७।।

अलंकारमाला—

दृग ना ऐं अंगनि ढकैं लसैं कुलबधू मौन।

काहू कौ कवित्त—

दोहन के समै मनमोहन लला की वह,
ललित लुनाई कबि बरनि कहा कहै।
कबहूँ किलकि धाइ नंद के निकट आइ,
कटि लचकाइ मुख तोतरै बबा कहै।
ताकौं ब्रजरानी देखि लोचन सिरानी मुख,
बोलै मृदुबानी सो बलैया लै उमा कहै।
ओट ह्वै कै गैया की ललैया बिलुकैया दैकै,
जसुमति मैया सौं कन्हैया जब ताक है॥५९८॥

अथ भाविक लछिन—

भूत भविष्य वर्तमान जो प्रत्यक्ष भली प्रकार देखियै सो भाविक।

भाषाभूषन—

वृन्दावन मैं आजु उह लीला देखी जाइ।
× × ×
पूरे प्रेम भरे खरे राधानन्द कुमार।
लखि आई चलि लखि भटू अबलौं करत बिहार॥५९९॥

सोमनाथ—

हमसौं ऐसौ जतन कहि सूधौ निपट विचारि।
बरसाने मैं आज उह बहुरि भेटियै नारि॥६००॥

अलंकार माला—

नखत विदेसहु जनु प्रिया देति समित जुत पानि।

अथ उदात लछिन—

उपलछिन दैकै अधिकारी कौं सोधियै सो उदात। **सोद्विविधि—श्लाघ्य चरित, रिद्धि[1]वंतचरित।**

चरित प्रसंसा कीजै सो श्लाघ्य चरित। रिद्धिवंत चरित्र कहियै सो रिधिवंत चरित्र।

---

१. रद्धि।

अथ श्लाघ्य[1] चरित उदात—

अलंकार करनाभरन—

बिहरत वृन्दाविपन मैं बन बन[2] मैं ब्रजराज।
सुर नारी मोहित भई जोहत सकल समाज॥६०१॥

भाषाभूषन—

तुम जाके बस होत हौ सुनत तनक सी बात।

सोमनाथ कौ—

नीठि करी है सुमन उह जसुमति नैं समुझाइ।
तुम आए हौ आज हरि जाकौ माखन खाइ॥६०२॥

देव कौ कवित्त—

पाँवड़ी न पावड़े परे हैं पुर पौरि लगि,
धाम धाम धूपनि के धूम धुनियत हैं।
कस्तूरी अतरसार चोवा रस घन सार,
दीपक हजारनि अध्यार लुनियत हैं।
मधुर मृदंग राग रंग के तरंगनि मैं,
अंग अंग गोपिन के गुन गुनियत[3] हैं।
देव सुखसाज ब्रजराज राज महाराज,
राधा जू के सदन सिधारे सुनियत हैं॥६०३॥

अथ रिद्धिमंत चरित्र उदात—

अलंकार करनाभरन—

बसन जरी के पहरिकैं बैठी कंचन धाम।
निकट गए पै सखिनि हूँ नीठि निहारी बाम॥६०४॥

---

१. अश्लाघ। २. बनि। १. गुयतु।

अथ अत्युक्ति[1] लछिन—

अर्थ कौ अतिसय वर्णन होइ सो अत्युक्ति।

अलंकार करनाभरन—

नँद दिये नँदन भए मनि सुबरन के ढेर।
कामधेनु गोपी भई जाचिक भए कुबेर॥६०५॥

भाषाभूषन—

जाचक तेरे दान तें भए कलपतरु भूप।
× × × ×

सोमनाथ—

खेलन चलत सिकार तू जब जब ह्वै असवार।
सहसफनी के सीस पैं खरकति हय खुर तार॥६०७॥

नंददास जी—

अष्टसिद्धि बहुकष्ट कै बिरलै काहू दीख।
सो संपत्ति वृषभान कैं परति भिखारिनु भीख॥६०८॥

कवित्त—

काँपि उठ्यौ आप निधि तपन हू ताप चढ़ी,
सीरी ए सरीर गति भई रजनीस की।
अजहूँ न ऊँचौ चाहै अनल मलिन मुख,
लागि रही लोकलाज मानौं मन बीस की।
छबि सौं छबीली लछि छाती मैं छिपाइ हरि,
छूटि गई दान गति कोरिहू तेतीस की।
केसौदास तिहिँ काल कौरोई ह्वै गयौ काल,
श्रवण सुनत बकसीस एक ईस की॥६०९॥

---

१. अतियुक्ति।

राम भए आज महाराज दशरथ साजि,
दीने गज बाज रथ किंमिति बिसेस के।
और निधि बिबिधि सु कापै कहि आवै श्री
गुविंद की सौं देखि गरैं गरब सुरेस के।
बिदा ह्वै कै बंदी निज घर कौं सिधारे भारे,
दलनि निहारि भूप भाजे देस देस के।
भूचल निहारी तब इन यौं उचारी तुम,
डरौ[1] जनि हम हैं भिखारी कोसलेस के॥६१०॥

अथ निरुक्ति लछिन—

जोग ते अर्थ की कल्पना औरई होइ सो[2] निरुक्ति।

भाषाभूषन—

उद्धव कुबिजा बस भए निरगुन उहै निदान।

सोमनाथ—

उत ही चितहि लग्यौ रहै नेंकु न चत निकेत।
नित प्रति जैबौ खिरक कौ इही सुगोरस हेत॥६११॥

अलंकार करनाभरन—

निसबासर बिहरत फिरत बहु बनितनि के धाम।
नीकी बानि गही कियौं सही बिहारी नाम॥६१२॥

अथ प्रतिषेध[3] लछिन—

प्रसिद्धि अर्थ निषेध कीजै सो प्रतिषेध।

भाषाभूषन—

मोहन कर मुरली नहीं है कछु बड़ी बलाइ।

---

१. डरौ। २. 'सो'—शब्द का लोप है। ३. प्रतिषेव।

सोमनाथ—

निरखत ही बस ह्वै रहे हरि कुलकानि बिगोइ।
नहि तिय की मुसिकानि इह और बस्तु ही होइ ॥६१३॥

तुक—

चंदन ही विष कंद है केसव राहु यही गुण लीलि न लीनौं।

अथ बिधि लच्छन—

प्रसिद्धि अर्थ कौं फिरि साधियै सो बिधि।

भाषाभूषन—

कोकिल है कोकिल जबै रितु मैं करिहै टेर।

अलंकार करनाभरन—

जैसी पावस मैं लगै तैसी अब कछु नाहि।
केकी हे केकी करै जब केका रितु माहि ॥६१४॥

सोमनाथ—

चरन रावरे नैम सौं नित सेवत मन लाइ।
दीनबंधु तब जौ सजौ मो अति दीन सहाइ ॥६१५॥

काहू कौ कवित्त—

कारे कारे कोकिलरु काक तन कारेकारे,
दोऊन कौ भेद कोऊ कबूँ तौ पिछाँनै हैं।
काक है सो काक अरु कोकिल सो कोकिल है,
याके भेद लोग रितुराजही मैं जानै हैं।
कोऊ काग[1] मार काच बाँधतु है सिर पर,
मनिन के भूषन लै चरन मैं ठानै हैं।
लैन दैन माँझ जब किमित परछ्या होति,
काच है सो काच मनि मनिही प्रमानै हैं ॥६१६॥

---

१. कग।

देवीदास कौ कवित्त—

ए रे गुनी गुणपाय चातुरी निपुन पाइ,
कीजियै न मैलौमन काहू जौ कछू करी।
बीर न बिराने घर गए कौ सुभाव इहै,
मान अपमान काहू रे करी कि जू करी।
और सब गुनी सु तौ जात हे नृपति पास,
तौ कौं जौहू टोक देवीदास पल दूकरी।
द्वार गजराज ठाढ़े कूकर सभा के बीच,
तू करी सु तू करी औ कूकरी सु कूकरी ॥६१७॥

अथ हेत द्वै प्रकार लछिन—

कारन सहित[1] कारज कहियै सो **प्रथम,** कारन कारज ए दोऊ एक ही वस्तु के अंग होइ सो **द्वितीय।**

प्रथम हेत।

भाषाभूषन—

उदित भयौ ससि मानिनी मान मिटा मन मानि।

अलंकार करनाभरन—

कामिनि अति हरषित भई फरकत वाँयौ नैंन।
जानौ आइ बिदेस ते मिलिहै पिय सुख दैंन ॥६१८॥

सोमनाथ—

सखि यह जल के परस तैं आवत त्रिविधि[2] समीर।

केसव कौ सवैया—

आई है[3] एक महाबन तैं तिय गावति मानौं गिरा पगधारी।
सुंदरता जनु काम की कामिनि बोलि कह्यौ वृषभान दुलारी।

---

१. सहत। २. तृविधि। ३. हैं।

गोपी कै लाँई गुपालहि वे अकुलाइ मिली उठि सादर भारी।
केसव भेटत ही भरि अंक हँसी सब कीक दै गोपकुमारी ॥६१९॥

देव कौ कवित्त—

राजगौरिया कौ रूप राधे कौ बनाइ लाँई,
गोपी मथुरा ते मधुबन की लतानि मैं।
टेरि कह्यौ कान्ह अब चाहैं नृप कंस तुम्है,
कौंन के कहे तें दधि लूटत उदानि[1] मैं।
संग के न जानैं गए डगर डरानैं घन,
स्याँम सिसकानैं सोपकरि किये पानि मैं।
छूटि गए छल सौं छबीली की विलोकनि मैं,
ढोली भई भौंहैं वा लजीली मुसकानि मैं ॥६२०॥

अथ द्वितीय हेतु—

भाषा भूषन—

मेरै रिद्धि समृद्धि सब तेरी कृपा बखानि।

सोमनाथ कौ—

साँचो बात यही सुनौं दसरथ राजकुमार।
बाज बृच्छ[2] सुर नर सबै तेरी कला अपार ॥६२१॥

अलंकार करनाभरन—

जात न तुम चितवत तनक मंद मंद मुसिकाइ।
ताहि तुरत सब भाँति सौं नवनिधि सुख सरसाइ ॥६२२॥

अथ अनुमान लछिन—

जहाँ अनुमान कछू वस्तु कौ कीजै सो अनुमान।

---

१. उदान। २. बृछ।

सोमनाथ कौ सवैया—

कूबरी के रसरंग छके ससिनाथ जू वे सुख साजनि साजिहै।
जोग हमैं तुमहीं कहौ उद्धव ए बतियाँ उनकौ पुनि छाजिहै।
ह्याँ निसि मैं असुवानि कौ सिँधु बढ़ै मति कौन नई उपराजिहै।
जानति हौं वा अक्षैवट[1] कौं बसुरीवट मैं व्रजराज बिराजिहै।।६२३।।

इहाँ 'जानति हौं' इह अनुमानु।

केसव की तुक—

नैंसिक दूध कौ राख्यौ सु बाँधि सु जानति हौं माई जायौ न तेरौ।

अथ उरजस्वत वर्णन—

केसव कौ सवैया—

को वपुराज मिल्यौ है बिभीषन है कुलदूषन जीवैगौ कौलौं।
कुंभकरन्न सरचौ मघवा रिपु तोर कहा डर है जम सौं लौं।
श्री रघुनाथ के सुंदर गातनि जानिहि (?) कुसरातिन तौं लौं।
सालु सबै दिगपालनि कैं कर रावन कैं करवाल है जौं लौं।।६२४।।

केसव की छप्पै—

जिहि सर मधु मद मर्दि महासुर मर्द्दन कीनौं।
मार्‌यौ कर्क सुनर्क संख हति संख सु लीनौं।
निकंटक सुर कटकि कर्‌यौ कैटप बपु खंड्यौ।
खर दूषन त्रसिरा कबंध जिनि खंड बिहंड्यौ।
कुंभकरन जिहि संघरचौ पलन प्रतिज्ञा[2] तैं टरौं।
जिहि वान प्राण दसकंठ के कंठ दसौ खंडन करौं।।६२५।।

इह रौद्र कौ उदाहरन है।

---

१. अषैवट। २. प्रतज्ञा।

अथ रसवत[1] लछिन—

रसमय वर्णन जहाँ कीजै सो रसवत।

अलंकारमाला—

लखि सखि दोऊ परस्पर निरखत दृग न अघात।

इह श्रृंगार कौ उदाहरन है।[2] ऐसैं ही और रस जानि लीजैं।

जा करिकैं छवि पावति ही रसना सु इहै कर है सुखदानी।
जंघ नितंब उरू कटि नाभि उरोजनि कौ परसै हौ गुमानी।
मोचत हौ नित नीबी के बंद × × × × ×।[3] इत्यादि।

× × ×

एक धरैं कमलासन पै कर एक सुदर्शन चक्र धरैं हैं। इत्यादि।

अथ जात्य लछिन—

जैसौ जाकौ सिंगार सोइ तैसौई बर्णन कीजै सो जात्य।

बिहारी कौ दोहा—

सीस मुकट कटि काछनी, कर मुरली उरमाल।
इहि बानिक मो मन बसौ सदा बिहारीलाल॥६२६॥

सोमनाथ कौ—

केसरि रँग भीनें बसन कटि गुलाल की फेंट।
इहि बानिक नँदलाल सौं आजु ह्वै गई भेट॥६२७॥

काहू कौ कवित्त—

माथे पै मुकट देखि चंद्र का चटक देखि,
छबि की लटक देखि रूप रस पीजियै।
लोचन बिसाल देखि गरें गुंजमाल देखि,
अधर सु लाल देखि चितै चौप कीजियै।

---

१. रसव। २. हैं। ३. पाठ खण्डित।

कुंडल हलनि देखि अलकैं बलनि देखि,
कुंडल हलनि देखि[1] सरबसु दीजियै।
पीतांबर[2] छोर देखि मुरली की घोर देखि,
साबरे की ओर देखि देखिवौई कीजियै ॥६२८॥

छप्पै—

क्रीट कुंडल अरु तिलक भाल राजत छबि छाजत।
पीत बसन तन स्यांम काम कोटिक लखि लाजत[3]।
कंठ त्रिबलि[4] श्रीवत्स बक्ष सोहत मन मोहत।
बैजंती बनमाल कौंन उपमा कवि टोहत।
संख चक्र गदा पद्मधर अमित रूप गुन गरुड़ धुज।
गोबिंद चरन बंदत सदा जय जय जयश्री चत्रभुज ॥६२९॥

अथ सुसिद्धालंकार लछिन—सिद्धि कौ साधि साधिकैं मरै अरु भोगै और सो सुसिद्ध।

केसव की छप्पै—

सर्धा[5] सचि सचि मरैं सहर मधुपान करत मुख[6]।
खनि खनि मरत गमार कूप जल लोग पियत सुख[7]।
बाग मान वहि मरैं फूल बाँधत उदार नर।
पचि पचि मरत सुवार भूप भोजनन् करत वर।
भूषन सुनार गढ़ि गढ़ि मरत भामिनि भूषित करति तन।
कहिकेस लेखक लिखि मरहि पंडित पढ़त पुराण गन ॥६३०॥

× × ×

खनि खनि कैं मूसा मरैं अरु भोगवैं भुजंग।

अलंकारमाला—

घवई ? पचि पचि मरत दुख[8] मंदिर लहत धनेस।

---

१. ऊपर की ही पंक्ति का पाठ दुहरा दिया है—पुनरुक्ति। २. पीतावर। ३. लाज। ४. त्रवलि। ५. सर्घा। ६. मुखं। ७. सुखं। ८. मुख।

अथ प्रसिद्धि लछिन—साधन कौं साधै एक अरु भोगवें अनेक सो प्रसिद्धि ।

केसव कौ सवैया—

मात के मोह पिता परितोष न केवल राम भए रिस भारे।
औगुन एकहि अर्जुन कौ भुवमंडल के सब छत्रिय मारे।
देवपरी कहूँ औधिपुरी जन केसवदास बड़े अरु बारे।
सूकर स्वान समेत सबै हरिचंद के सत्त सदेह सिधारे ।।६३१।।

× × ×

एकहि पापी बैठ तैं बूड़ति सिगरी नाव।

× × ×

करत लगा लग दृग भए पीड़ित सब अंग अंग। इत्यादि।

अथ अमित लछिन—साधक की सिद्धि साधन ह्वै कैं भोगै सो अमित।

केसव कौ सवैया—

आनन सी करसी कहि काहे तें तोहि तकौं अति आतुर आई।
फीकौ पर्यौ सुख ही मुख राग क्यौं तेरे पिया वहु बार बकाई।
प्रीतम कौ पट क्यौं लपट्यौ सखि केवल तेरी प्रतीति कौं लाई।
केसव नीकें ही नाइक सौं रमि नाइका बात नहीं बिहराई ।।६३२।।

अलंकारमाला—

पठई पिय हिय लगन हित पाती अपुनहि लाग।

अथ विपरीत लछिन—सिद्धि साधिवे कौ साधन बाधक जहाँ होइ सो बिपरीत।[1]

केसव कौ कवित्त[2]—

साथ न सयानौ कोऊ हाथ न हथ्यार रघु-
नाथ जू के जज्ञ कौं तुरंग गहि राख्यौई।

---

१. विपरीति। २. सवैय कवित्त—'सवैय' पद अधिक है।

काक नक छोटी सिर छोटी छोटी काक पछ,
पाँच ही बरस के नैं छत्र अभिलाख्यौई।
नल नील अंगद सहति जामवंत[1] हर,
मंत से अनंत जिनि नीरनिधि नाख्यौई।
केसौदास देस देस भूपन सौ रघुकुल,
कुस लव जीति कैं बिजय रस चाख्यौई।।६३३।।

टीकाकार कौ दोहा—

प्रश्न—

साथ सयानौ नाहिनैं हाथ हथ्यार न कोइ।
हितू नही जय कौ सु क्यौं नहि विभावना होइ।।६३४।।

उत्तर—

तहाँ इहाँ कुस लव तनय प्रभु के साधन आइ।
जय केतिनहि विजय लही यौ बिपरीति सु चाहि।।६३५।।

अलंकारमाला—

मैं पठई पर दूति इह चूक सो मो मन माहि।

अथ बिरुद्ध लछिन—बिरुद्ध धर्म जहाँ बर्णियै सो बिरुद्ध।

केसव कौ सवैया—

कृष्ण हरैं हरयैं हरैं संपति संभु विपत्ति यहै अधिकाई।
जातक काम अकामिनि के हितु घातक काम सकाम सहाई।
छाती मैं लच्छि[2] दुरावत वे तौ फिरावत हैं सबके संग[3] धाई।
जद्दिप केसव ए कतऊ हरि तैं हर केसव कौ सुखदाई।।६३६।।

अथ प्रेम लछिन—कपट मिटि जाइ अरु पूरन प्रीति उपजै सो प्रेम।

---

१. जावबंत २. लछि। ३. संग।

केसव कौ सवैया—

उह बात सुनैं सपनैं हूँ वियोग की होत[1] है दोइ टूक हियौ।
मिलि खेलियै जा सहुँ बालक सौं कहि तासौं अबोलौक्यौं जातु कियौ
कहियै कवि केसव नैननिँ कौं विन काजहि पावक पुंज पियौ।
सखि तू बरजै अरु लोग हसैं कहि काहे कौं प्रेम कौ नेम लियौ ।।६३६।।

सावरे रंग रँगे सुरगे पुनि प्रेम पगे सु पगेई पगे हैं।
रूप अनूप समुद्र[2] अपार मझार खगे सुखगेई खगे हैं।
और कहा कहौं आली अवै अति ठीक ठगे सु ठगेई ठगे हैं।
या ब्रजचंद गुविंद की सैन सौं नैंन लगे सुलगेई लगेहैं ।।६३७।।

अलंकारमाला—

सखि मनभावत तिहिँ कहत जिनि देखहु इहि लोग !

अथ जुक्ताजुक्त[3] लछिन—जुक्त मैं अजुक्त सो जुक्ताजुक्त अजुक्त मैं जुक्त सो अजुक्ताजुक्त।

केसव कौ सवैया—

पाप की सिद्धि सदा रिन बृद्धि सु कीरति आपनी आप कही की।
दुख्ख कौ दान औ सूत कन्हान सुदासी की संसति लागति फीकी।
बेटी कैं भोजन भूषन राड़ कौं केसव प्रीति सदा पर तीकी।
जुद्ध मैं लाज दया अरि की पुनि वाह्मन जाति तैं जीत न नीकी।।६३८।।

अलंकारमाला—

पोषन इंद्रिय गगन भल मारन मन वर जुक्त।

अजुक्ताजुक्त—

केसव[4] कौ सवैया[5]—

पातक हानि पितानि सौं हारनि गर्ब की सूलनि सौं डरियै जू।
तालनि कौ बंधिवौ बध रौरि कौ नाथ के साथ चिता जरियै जू।

---

१. होन। २. समुद। ३. जुक्तजुक्त। ४. केस। ५. 'सबैया' शब्द छूट गया है।

पत्र फटैं[1] ते कटै रिन केसव कैसेंऊ तीरथ जौ मरियै जू।
गारी सदाँ नीकी लागैं सज्जन्न की डंड भलौ सो गया भरियै जू ॥६३९॥

अथ उत्तर लछिन—परस्पर प्रति उत्तर होइ सो उत्तर।

केसव कौ सवैया—

बन जैयै चलौ कोऊ ठालौ है केसव हौ तुम ही तौ अरी अरिहौ।
कछू खेलियै खेल न आवत आजु ही भूल्यौ न भूल्यौ गरैं परिहौ।
हितु है हिय मैं किधौं ना हित हू हितु नाहि हियैं सु लला लरिहौ।
हम सौं इह बूझियै ऐसी कहा जक ही तौ कही वकहा करिहौ ॥६४०॥

अथ आसिष लछिन—माता, पिता, गुरु, देव, मुनि सुख पायकैं कछु कहै सो आसिष।

केसव कौ कवित—

मलय मिलत बास कुंकुम कलित जुत,
जावक सु नख पुनि पूजित ललित कर।
जटित जराय की जजीरी बीचनीलमनि,
लागि रहे लोकनि के नैंन मानौं मीनहर।
चिरु चिरु सौं हैं रामचन्द्र के चरन जुग,
केसौदास दीवौ करैं आसिष असेष नर।
हय पर गय पर पलिक सु पीठि पर,
अरि उर पर अवनीसनि के सीस पर॥६४१॥

हरिबंस जू की तुक—

हित हरिबंस असीष देत मुख चिरुजीवौ भूतल यह जोरी।

आनंद घन की तुक—

रानी तेरौ चिरुजीवौ गोपाल।
इति श्री दूसन हुलास संपूर्णम् शुभ।

---

१. फटैं।

परिशिष्ट

सूचना—इस ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति के अन्त में गोबिन्ददास की दो और छोटी-छोटी रचनाएँ जुड़ी हैं। ये हैं—(१) देसनि की भाषा और (२) जुगलरसमाधुरी। ये दोनों रचनाएँ छोटी-छोटी हैं, किन्तु बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। अतः ग्रन्थ के साथ इनका भी सम्पादन परिशिष्ट के अन्तर्गत (क) और (ख) कर के कर किया जा रहा है।

—सम्पादक

परिशिष्ट (क)

देसनि की भाषा

पूर्वभाषा—

ककुभ छंद—

रंग भरि भरि भिजवइ मोर अँगिया,
दुइ कर लिहिस कनक पिचरुरवा।
हम सन ठन ठन करत डरत नहि,
मुख सन लगवत अतर अगरवा।
अस कस कस बसियत सुन ननदी,
फगुन के दिन इहि गुकुल नगरवा।
मुहिँ तन तकत बकत पुनि मुसकत,
रसिक गुविंद अभिराम लँगरवा॥१॥

पंजाप भाषा—

सवैया—

रोलियाँ मुख्य लगाँ बदा लाल गुलाल अबीर उडांवदा झोलियाँ।
खोलियाँ गालियाँ तालियाँ दैंदा करै दागली बिच्च बोलियाँ।
ठोलियाँ घोलियाँ कित्ती नीसा डङो जिद उसीसैं लगी दिल प्रीति-
कलोलियाँ चोलियाँ रंग गुबिंद भिजाँ वदा गाँवदा रंग रंगीलियाँ
होलियाँ ॥२॥

ढुंढाहर भाषा—

कवित्त—

पाँवड़ा विछास्याँ छस्याँ चँदवा गुलाल चोवा,
फूल बरस्याँ सा मोती बरिस्याँ सुहांवणाँ।
अतरल गास्याँ पान खास्याँ मुसकास्याँ गास्याँ,
गोविंद जी साजिस्याँ सिंगार मन भांवणाँ।
आयौ भेट धरिस्याँ भुजाँ मैं थानैं भरिस्याँ म्हे,
करिस्याँ जीरा जिरली रंग सौं बधांवणाँ।
सेज डल्याँ मांणी गरमांणि ज्यौ अनंत सुख-
कंत म्हारा महलाँ बसंत आज्यौ पाहुणाँ ॥३॥

ब्रजभाषा सवैया—

रंग भिजैहै रिझैहै गुविंद जू तारी दै गारी अनेक सचैगी।
छीनि पितांबर बासुरी माल कपोलनि लाल गुलाल रचैगी।
लैहैं सखी सब घेरि तवै यह मूरति नांच अनोखे नचैगी।
रावरी छैलता जानिहैं जू जब गोरी किशोरी सौ होरी मचैगी ॥४॥

दिल्ली की भाषा रेखता—

फरजंद नंद काहै उर की अजब अदा है.
बेदर्द परवा है जानैं सबा बक्या।

रहता सदा मगन मैं मुस्ताख है हुसन मैं,
जोबन की मस्ती तन मैं जिस्कौं सराब क्या।
उस्की हसी मैं माई मरनां है और काही,
अब लगी आसनाई फिरि है जबाब क्या।
गोविंद रसिक प्यारा महबूब है हमारा,
महताब आफताब कमल अर गुलाब क्या॥५॥

रेखता—

गोविंद रसिक ज्यानी सुनि नंद के गुमानी,
लागो चसम न छानी मुजकौं सलाह क्या।
पग फूँकि फँकि धरना हरदम सबी सैं डरना,
नित इस गली का फिरनाँ मुजकौं सलाह क्या।
मुसकल्ल इस्कबाजी दिल हैं तुम्ही सैं राजी
तुम तौ हौ खुसमिजाजी मुजकौं सलाह क्या।
जाहर जिहान यारी इतने पैं बेकरारी,
कुरबान वे बिहारी मुजकौं सलाह क्या॥६॥

रेखता—

नंद फरजंद सैं यारी लगी दिल जौ मिलावैगा।
जोबन मस्ती लियें तन्मैं बेदर्दी जौ निबाहैगा॥१॥
अजायब हुस्न है उस्का अदा सैं मुख दिखावैगा।
किसू नैं खुस बदन ऐसा न पाया है न पावैगा॥२॥
बिछाँऊं पलक चस्मौं दी सजन गलियौं मैं आवैगा।
नजरि भरि देखि कर ज्यानी तपनि[1] तन की बुझावैगा॥३॥
खुसी दिल आनि महलौं मैं नसे करि पान खावैगा।
मजे मैं इस्क की बातैं सुनैंगा अरु सुनावैगा॥४॥

---

१. तपति।

खूब महबूब है मेरा मुझैं छतियाँ लगावैगा।
मुरादैं हौंइगी हासल बिरह दुख दूरि जावैगा॥५॥
जिगर बिच दर्द है भारी उसी बिन कौन मिटावैगा।
जरब किया उस दिवानें नैं उही वेदन गमावैगा॥६॥
रसिक गोविंद प्यारे सैं कोई मुजकौं मिलावैगा।
करौं कुरबान जिंदगानी मेरा वह जो जिवावैगा॥७॥

अष्टदेस की भाषा—

अस्मभ्यं दर्शनं देहि ननुजिंद साड़ी कीती कुरबान।
कस कस करिहै मीत पियरवा हम जु बिकल कछु जतन न आन।
नौनें इदिकि? आसिबे तड़फैं जिस्कैं लगे इस्क के बान।
स्याम सुजान रसिक गोबिंद जो थेछौ म्हाँ को प्रीतम प्रान॥८॥

परिशिष्ट (ख)

जुगलरसमाधुरी

रोलाछन्द—

जय जय श्री गुरुदेव गुवर्द्धन बिदित विभाकर।
भ्रम तम श्रम अघ ओघ हरन सुखकरन सुघर बर॥१॥
कृपासिन्धु आनंदकंद दंपति रस भीनें।
मोसे मूढ़ अनेक पतित जिनु पावन कीनें॥२॥
जासु कृपा सु प्रसाद जुगल रस जस कछु गाऊँ।
सब रसिकनि कौं हाथ जोरि पुनि सीस नवाऊँ॥३॥
श्रीवृन्दावन सघन सरस सुख नित छबि छाजत।
नंदन बन से कोटि कोटि जिहिं देखत लाजत॥४॥

जहँ खग मृग द्रुम लता बसत जे सब अभिरुद्धित।
काल कर्म गुन काम क्रोध मद लोभ[1] रहित हित ।।५।।
परम्पवन सत[2] चिदानंद सर्वोपर सोहै।
तदपि जुगल रस केलि काल जड़ ह्वै मन मोहै ।।६।।
तैसिय निर्मल नीर निकट जमुना बहि आई।
मनहुँ नील मनि माल बिपिन पहरै सुखदाई ।।७।।
अरुन नील सित पीत कमल कुल फूले फूलनि।
जनु बन पहरैं रंग रंग के सुरंग दूकूलनि ।।८।।
इंदीवर कल्हार कोकनद पद्मनि ओभा।
मनु जमुना दृग करि अनेक निरखति[3] बन सोभा ।।९।।
तिन मधि झरत पराग प्रभा लखि दृष्टि न हारति।
निज घर को निधि रमा रीझि जनु बन पर वारति ।।१०।।
सरस सुगंध पराग मधुप[4] छकि[5] मधु[6] गुँजारत[7]।
मनु सुषमा लखि रीझि परसपर सुजस उचारत ।।११।।
पुलिन पवित्र बिचित्र चित्र चित्रित जहँ अवनी।
रचित कनक मनि खचित लसति अति कोमल कमनी ।।१२।।
सुघट घाट बहु रंग छबीली छत्री सोहैं।
कुसुम भार झुकि लात परसि जल मनुको मोहैं ।।१३।।
जल मैं झाँई झलमलाति प्रतिबिंबित सरसैं।
जल के भमर तरंग रंग रंगनि के दरसैं ।।१४।।
तट पै ताल तमाल साल गहवर तरु छाए।
सभा काज रितुराज बितान मनहुँ तनवाए ।।१५।।

---

१. 'लोभ'—शब्द छूट गया है—यह सम्भावित पाठ है।
२. 'सत' शब्द छूट गया है।
३. निरखत, ४. मधु, ५. छक, ६. मधुप, ७. गुँजारज।

कलप बृक्ष संतान पारजातक हरिचन्दन।
देवदार मंदार अगर अंबर मलय सघन॥१६॥
तिन पर चढ़ि करि लता उच्च अतिफूल झरतिखिलि॥
मनु विमान चढ़ि देवबधू बरसति कुसुमावलि॥१७॥
तुलसी कुंद कदंब अंब निंबू बहुरंगी।
बट असोक अश्वथ अगस्त आमई? पतंगी॥१८॥
कोविदार कचनार बंस के विरुआ चोखे।
विजयसार शृंगारहार अरु अनोखे(?)॥१९॥
अमलबेत आरू अँगूर अँजीर अमृतफल।
बरना अरिर्ना कर्निकार कलियार लसत कल॥२०॥
सैँमरि विदुक मधुक बिलु? पापरी पलासा।
सरिस बहेरा कुडा कैथ कमरख सबिलासा॥२१॥
सीताफल जंबूफल श्रीफल ××××××[1]
कटहर बड़हर हरर पड़ल पिस्ते बदाम भल॥२२॥
खारिक खिरनि खिजूरि दाख दारिमहि बिजोरे।
नासपाति नारँगी सेव सहतूत लिसौरे॥२३॥
जाइ जाइ[2] फल वकुल इलाइचि लौंग सुपारी।
कदली मिली कपूर गहरि जिहिं लगिरहि भारी॥२४॥
केतुकि अरु केवरा नागकेसरि केसरि अति।
मंहिदी अरु माधवी माधुरी मल्ली मालति॥२५॥
फूली चंपक फैलि रही जिहिं गंध विसाला।
ज्यौं निज गुननि समेत लसति नवजोबन बाला॥२६॥
जुही चमेली फूलि रही अस लगति सुहाई।
सरद जौन्ह जनु जुगल दरस हित बिहसति आई॥२७॥

---

१. पाठ खण्डित।

२. जाइ जाइ जाइ।

नागबेलि अरु राइबेलि कौ है बिसतारा।
नगरस मुक्ता मदन बान मोगरा नवारा ।।२८।।
सुगँधराय सतबर्ग बेलित बंधुक अरु दौना।
गुलह बाँस बहुरंग खिले जनु मदन खिलौंना ।।२९।।
सूरजमुखी गुलाब गुलाला नाफर मानी।
सौंनजुही सेवती सरूलै बिच बिच ठानी ।।३०।।
और लता बहु भाँति जाति कापैं कहि आवति।
एक एक तैं अधिक जुगल हित छबिहि बढ़ावति ।।३१।।
कोउ छोटी कोउ बड़ी कोऊ अधबिच की जानी।
गुलमलता उलही अनेक अवनी लपटानी ।।३२।।
सुरतरु सम द्रुम बेलि जाति सब सुखकर श्रैनी।
चिंतामनि महि सकल सबनि चिंतित फल दैंनी ।।३३।।
द्रुमवल्ली संकुलित सकल अस लगत सुभग तन।
मनु जड़ ह्वै निज तियनि सहित सेवत सब सुरगन ।।३४।।
मौर मंजरी मूल फूल दल मनि मोती।
ओत-प्रोत प्रतिबिंब परत अगनित छबि होती ।।३५।।
मुकुलित पल्लव फूल सुगंध परागहि झारत[1]।
जुग मुख निरखि विपिन जु राई लौंन उतारत ।।३६।।
फूल फलनि के भार डार झुकि यौं छबि छाजैं।
मनु पसारि दइ भुजा दैंन फल पथिकनि काजैं ।।३७।।
मधु मकरंद पराग लुब्ध अलि नंदित मत्त मन।
बिरद पढ़त रितुराज नृपति के मनु बंदीजन ।।३८।।
सुवा रिका पढ़ति कोकिला कूक मचावति। (?)
मनहु टेर दै पथिक जननि[2] कौं निकट बुलावति[3] ।।३९।।

---

१. झारति। २. जनि। ३. कुलावति।

चातक मोर चकोर सोर चहुँ ओर निकाई।
रतिपति नृप के दूत देत जनु फिरत दुहाई ।।४०।।
राजहंस कलहंस बंस यौं सब्द सुनावत।
मनहुँ संच स्वर मधुर साजि मिलि गंधृव गावत ।।४१।।
सुधा सार सर भरे बिमल कमलनि जुत अलिगन।
निगुन ब्रह्म जनु सगुन होइ सोहत मोहत मन ।।४२।।
ठौर ठौर जल जंत्र जाल बँगला उसीर[1] के।
हौद भरे केसरि गुलाब सौरभ की भीर[2] के ।।४३।।
कुंज गली कुसुमित रसाल बहुभाँति सुहाई।
फरस सुलप हैं सरस अतर बरसौं छिमकाई ।।४४।।
सब रितु संत वसंत लसत दूनी छबि दिन दिन।
सीतल मंद सुगंध सहित मारुत वह सब छिन ।।४५।।
महा छबिनि की भीर रहति नित नव[3] गुल क्यारी।
जनु रति नृप नित विहार की निज फुलवारी ।।४६।। (?)
या बन की बानिक समान या बनहि निकाई।
जाकी छबि की छटा छलकि छबि सब बन छाई ।।४७।।
मनमथ मदन मनोज मार मकरद्धज माली।
उज्ज्वल[4] रस सौं सींचि करत रचिपचि रखवाली ।।४८।।
चित्रित चित्र बिचित्र महल झुकि रहे झरौखे।
छज्जेदर बज्जे कपाट फटि कनि के गौखे ।।४९।।
मनि मानिक जगमगत जोति जित तित बिस्तारत।
बहुत दृगनि करि भुवन जुगल छबि मनहुँ निहारत ।।५०।।
द्वारनि बंदन मालनी गज मुक्तनि भारी। (?)
विहसत हैं जनु सदन रदन दुति लगति उज्यारी ।।५१।।

---

१. उरसीर। २. भीरि। ३. नब। ४. उजल।

ऊपर हीरनि कलस धुजा फहरति पचरंगी।
मनु कारीगर काम सदन सिर धरी कलंगी ॥५२॥
परसत रबि ससि रसमि सरस दुति जगमगाति यौं।
बन घन मैं दामिनि समूह इक रस राजति[1] ज्यौं ॥५३॥
घनसारनि के घनेंसार घसि अँगन लिपाये।
गावति मंगलचार सखीजन बजत बधाये[2] ॥५४॥
साईबान बितान बिमल बादिले झलाझल।
जरकस परदा परे बिछे मँहगे मृदु मखमल ॥५५॥
बहुत सुगंधनि धूप दीप बहु रत्न दिखावत।
निसि दिन होत प्रकास तिमिर कहुँ रहन न पावत ॥५६॥
रंगमहल की छबि अनूप कछु कही[3] न जाई।
अखिल भुवन सिरमौर सहज जाकी ठकुराई ॥५७॥
मर्नि मंडल मुक्ता मयूख मधिरत्न सिंघासन।
सरस सुबासिनि सहित कमलदल कोमल आसन ॥५८॥
तहँ राजत दोउ मीत प्रीति सौं नित सुखदानी।
रसिकराय महराज[4] राधिका श्री महरानी[5] ॥५९॥
प्रीतम सुन्दर स्याम प्रिया छबि फबी गुराई।
मनु सिंगाररस सँग सिंगार कियँ सुन्दरताई ॥६०॥
दोऊ परस्पर प्रतिबिंबित अदभुत छबि छाजत।
गौर स्याम मिलि हरित होत उपमा सब लाजत ॥६१॥
चटकीले पट नील पीत फरहरत सुहाए।
रस बरसन कौं उनहि मनहुँ घन दामिनि आए ॥६२॥
दोउ तन दर्पन अंग अंग प्रतिबिंबित सरसैं।
दुगुन तिगुन चौगुन अनेक गुन भूषन दरसैं ॥६३॥

---

१. राजत। २. बधये। ३. कई। ४. महाराज।
५. महारानी।

अँग सँग बिहरत कुंजबिहारिनि कुंजबिहारी।
दामिनि घन रति काम कन मनि छबि पर बारी॥६४॥ (?)
जावक रंग सुरंग अरुन महा मृदु तिय पगतल।
पिय हिय कौ अनुराग लग्यौ जनु प्रनवत पल पल॥६५॥
अरुन चरन तल चिह्न चारु जगमगत बिराजैं।
मो मन के अभिलाष लगे जनु पद रज काजैं॥६६॥
चंपकली अंगुली भली मुख चन्द जुन्हाई।
सखिजन नैंन चकोर निरखि रहे इकटक लाई॥६७॥
अमल अमोल अनौंट बीछिया सद्दित ऐसैं।
कूजित कलकल हंस प्रभा के निधि मैं जैसैं॥६८॥
कमल चरन नूपुर जराइ के राजत गाजत।
मनहुँ सुरत संग्राम विजय के बाजे बाजत॥६९॥
गुलफ गुलाब प्रसूननि रखि अलिपिय मति भूली।
अतलस अतरौटा अनूप नीबी मखतूली॥७०॥
अति सूछिम कटि तट सुदेस मनि किंकिनि जाला।
मदन सदन कैं द्वार बँधी जनु बंदन माला॥७१॥
रस सर उदर तरंग उमगि त्रिबली छबि छाई।
नाभि कमल अलि अवलि रुमावलि मनु छबि छाई॥७२॥
केसरि अँगिया कसैं उरज उन्नत अरु गाढ़े।
कनक कवच सजि सुभट जीति रति रन जनु ठाढ़े॥७३॥
बिमल सजल कल मुक्तमाल उर हरति उदारा।
मनु सुमेर के शृंग जुगल बिच सुरसरि धारा॥७४॥
उरसि[1] उरबसी मध्य अरुन नग यौं छबि छाजत।
तिय हिय कौं अनुराग बिदित जनु बाहिर राजत॥७५॥

---

१. उरसि उरसि—पुनरावृत्ति।

बलया बाजूबंद भुजा पिय अंसनि दीनैं।
मनु घनस्याम सरूप दिव्य दामिनि कसि लीनैं ।।७६।।
कंकन पौंची चुरी चारु जे भूषन करके।
आलबाल किय मनहुँ मैन माली सुरतरु के।।७७।।
कमल पानि दल अँगुरि बूढ़ महिंदी लपटानी।
छल्ला बजत सित मनहुँ हंससुत कहत कहानी।।७८।।
दुतिय हाथ लियँ अमल कमल कलफूल फिरावत।
ज्यौं श्रीपति सँग श्री सुजान सुन्दर छबि पावत[1] ।।७९।।
कंठ सरी दुलरी हीरनि धुकधुकी सुधारैं।
लटकत मुक्ता मनहुँ नचत नट मदन अखारैं ।।८०।।
पोति पुंज मखतूल श्रवन भूषन जगमग छबि।
मनु दुरि चल्यौ पतार तिमिर दुहुँ ओर उदित रबि ।।८१।।
धसति पान की पीक लसति गोरे गल ऐसी।
ललित लाल की गुलीबंद भूषित नव जैसी।।८२।।
कंठ कंबु सम मुख प्रसन्न श्रम जलकन नीके।
मनहुँ चंद लगि सुछंद रहे बूँद अमी के।।८३।। (?)
नीलांबर मधि गौर बदन सोभित सविलासा।
मनु पावस घन चीरि सरद ससि कियौ प्रकासा।।८४।।
उज्जल रस कैं आस पास छबि फबी किनारी।
चंद्र चारु जनु घेरि रही नव दामिनि प्यारी।।८५।।
ललित चिबुक बिच सुभग स्याम लीला सोहति अनु।
गिरचौ गुलाब सुमन मझार मधु छक्यौ मधुप जनु।।८६।।
अरुन अधर तर मुख सहासि[2] मृदु सित दसनावलि।
अरुन सेज संजि बसंत सहित जनु तड़ित बज्र मिलि।।८७।।

---

१. पावति। २. सवाहासि।

दीपसिखा सी नाक मुक्त वर मुख ढिग डोलै।
मनहुँ चंद की गोद चंद कौ कुँवर कलोलै॥८८॥
हसति[1] कपोलनि गंड[2] परत[3] पुनि इकतिल स्यामल।
मनहुँ सुधा सर मध्य खिल्यौ इक नील कमल कल॥८९॥
मुकर कपोलनि श्रुति भूषन प्रतिबिंब सुहाए।
अमल कमल बरबदन अलक अलि कौतुक आए॥९०॥
करन तरौँना तरल झलमलत नीलांचल[4] मैं।
पर्‌यौ प्रात प्रतिबिंब भान जनु जमुना जल मैं॥९१॥
सलज पलक सित असित लाल दृग सरस सुअंजन।
बनि बैठ्यौ रसराज नृपति जनु कमल सिंघासन॥९२॥
मदजोबन छकि रहे सआलस घूंम घुमारे।
मदन बान बहु कुटिल कटाछिन ऊपर वारे॥९३॥
कोरैं चपल बिसाल बहुरि भृकुटी अनियारी।
मनहुँ सकल जग जीति मदन धनु धरे उतारी॥९४॥
केसरि खौरि सुबाल गुलाली बिंदु बिसाजत[5]।
बिछावात? साकल लग्यौ लाल नग मनु छबि छाजत॥९५॥ (?)
हीरनि बैंना सीसफूल बर अरुन रतन गनि।
भाल भाग सिर पैं सुहाग जनु बैठे बनि ठनि॥९६॥
चिकुर चंद्रिका चारु जगमगत मुख मन मोहै।
मनु ससि मूरतिवंत चंद्रिका सँग लियँ सोहै॥९७॥
अग्रभाग पाटिका रही गुहि जुही चमेली।
दुँहुँ दिसि उमड़ी घटा मनहुँ बकपांति नबेली॥९८॥
असित केस सित मुक्त माँग गुन अरुन गुही है।
मनु सिगाँर भुव सुजस प्रेमरस नदी बही है॥९९॥

---

१. पुपहसति। २. गाड। ३. परति। ४. नीलंचल। ५. विसजत।

पीठि लुलित बैंनी बिसाल पर बसन प्रभा इम।
कदली दल पर अलि अवली पर स्याम घटा जिम ।।१००।।
सौंधैं तैं सतगुन सुबास सहजैं अँग अंगी।
केसरि रँग अँग रँग्यौ अँग रँग केसरि रँगी ।।१०१।।
सारी कारी सरस देह दुति अति नव बाला।
मनहुँ कुहू निसि मध्य दिपै दीपनि की माला ।।१०२।।
स्याम घटा मधि किधौं दिव्य दामिनि दुति सोहै।
रसिक राइ रिझवार चतुर चातक चित मोहै ।।१०३।।
नख सिंख अतुलित छबि सु कौंनपै जाति उचारी।
जिहिं लखि पिय बस भयौ कियौ सर्बसु बलिहारी ।।१०४।।
पिय पद पृष्ठ जु स्याम अरुन तल नख सित सैंनी।
मनु सोभा के सिंधु मध्य यह ललित त्रिबैंनी ।।१०५।।
अंकुस कुलिस कमल जवादि मुनिजन से न्हांवैं।
नूपुर बाजत मनहुँ हंस कल सब्द सुनावैं ।।१०६।।
गुलफैं पिंडुरी सुफल जुगल जंघनि की सोभा।
मनु सिंगाररस मिली भली कदली के गोभा ।।१०७।।
स्याम सचिक्कन देह चटक पीतांबर पहरैं।
मरकत मनि पर पर्‌यौ प्रात आतप जनु गहरैं[1] ।।१०८।।
कटि तट किंकिनि बनी मनिमई भूषित ऐसी।
तरु तमाल इक चमू लगी खद्योतनि कैसी ।।१०९।।
सुन्दर उदर उदार ललित रोमालि लसति अनु।
नाभि भमर त्रिवली तरंग श्रृंगार[2] सरित जनु ।।११०।।
रसनिधि उर उरबसी लसी मनु मनमथ तरिनी।
कौस्तुभ मनि मनु खिली भली पद्मिनि छबि करनी ।।१११।।

---

१. गहरें। २. श्रृंगर।

मुक्ताहार सरि कंठ धुकधुकी मुक्त कलोलै।
हंस पाँति ढिग हंस सुवन जनु खेलत डोलै ॥११२॥
माल तुलसिदल बिबिधि कुसुम मिलि सरस सँवारी।
आस पास छबि देति मनहुँ फूली फुलवारी ॥११३॥
कंठ कंबु सम मुख प्रसन्न श्रम जलकन जागे।
मनहुँ भोर मकरन्द बुंद इंदीवर लागे ॥११४॥
मधुर मनोहर हसनि लसनि दुति सित दसनावलि।
घन तैं निकसति तड़ित मनहुँ बरषति कुसमावलि ॥११५॥
इक कर मुरली अधर मधुर प्रिय नाम उचरही।
मनहुँ मदन मौंहिनी मंत्र पढ़ि जग बस करहीं ॥११६॥
दुतिय बाहु तिय अंस धरैं बाजूबँद साजैं।
छबि मंदिर पर धुज सिंगार रस की किधौं राजै ॥११७॥
कमल पानि मनि कनक पौंच पौंची दुति भारी।
निज घर के चहुँ पास रमा जनु कृति रखवारी ॥११८॥
हाटक टोडर मुखनि हरित नग लगे सुहाते।
मनहुँ कमल गल लागि पिवत मधु मधुकर माते ॥११९॥
करतल सुमन गुलाब चतुर अँगुरी अँगुष्टबर।
मनहुँ पंचसर नृपति सुभट के सुघट पंच सर ॥१२०॥
अँगनु[1] सुघट अंगुष्ट मुद्रिकनि नग छबि छाजत।
नील कमल के दलनि मनहुँ खद्योत बिराजत ॥१२१॥
अरुन अधर तर मुख सुबास नासिका सुहाई।
मनहुँ बिम्बफल मधुर जानि सुक तुंड झुकाई ॥१२२॥
मुक्ता सजल सुढार बिमल कलनासा दीनौं।
मनहुँ असुरगुर सुघर उदय उच्चासन कीनौं ॥१२३॥

---

१. अँगुनु।

मुख मुरली धुनि अलकैं बिथुरि रही लपटाई।
नील कमल पर अलि अवलिनि जनु कलह मचाई॥१२४॥
मकराकृत कुंडल प्रतिबिंबित ललित कपोलनि।
मनु अगाध जल बिमल मध्य कृत मक्र कलोलनि॥१२५॥
रुचिर पलक दृग कोर अरुन सित कारे तारे।
मनहुँ कमल दल[1] नवल जुगल अलि मधु मतवारे॥१२६॥
कुटिल कटाछैं अति आछैं भ्रुव बंक बनीं अनु।
मनमथ बरषत बान तानि मनु जुग मरकत धनु॥१२७॥
केसरि तिलक लिलार बिंदु बंदन छबि छाजत।
मनु सुरगुर की गोद भूमिसुत बिदित विराजत॥१२८॥
सींस मुकट मधि सेत रत्न जगमग तन बीनें।
घन तैं मनहुँ उदोत सरद ससि उडगन लीनें॥१२९॥
मुकट सुघट बर बिमल कल कलगी थरहर। (?)
मनहुँ कलस धुज धरे मदन रसराज सदन पर॥१३०॥
बैनीं बनी बिसाल पीठि पर लगति सुहाई।
तरु तमाल इक अलि अवली जनु रही लपटाई॥१३१॥
स्याम अंग अँगराग चँदन घनसार गुराई।
जमुना जल पर जगमगाति जनु सरद जुन्हाई॥१३२॥
सहज सुबास सरीर सरस सौंधैं तैं सुन्दर।
भमर भमत चहुँ ओर जानि जनु नील नलिन बर॥१३३॥
पिय घनस्याम सुजान प्रिया अति गोरी भोरी।
नव जोवन ुन रूप अनूपम अद्‌भुत जोरी॥१३४॥
हाव भाव लावन्य सरस माधुरी मनोहर।
अँग अँग छबि पर बारि दिए दिनकर रजनीकर॥१३५॥

---

१. 'दल' शब्द छूट गया है। सम्भावित पाठ।

सँग सखी सुखरासि ललित ललिता दरि दासी।
निरखति नित्य बिहार जुगल रस सरस बिलासी ॥१३६॥
अरु सखि सब सुख देति रुख लियें मुखहि निहारैं ॥
अपनी अपनी उमग सहित सब सौंज सँवारैं ॥१३७॥
सर्व सुमन की लहैं रहैं रिझवति पिय प्यारी।
ज्यौं सेवति विमलादि सखी सिय अवधि बिहारी ॥१३८॥
कोउ कर लीनें विमल छत्र जिहिं जगति जुन्हाई।
मनु घन दामिनि सीस सरद ससि छबि रह्यौ छाई ॥१३९॥
गज मुक्तनि की लूम सुघट सज्जल उजलाई।
मनु लटकत यह बिद बिलास सुन्दर सुखदाई ॥१४०॥
लाल बरन इहुँ ओर मोर छल लगत सुहाए।
नीलकंठ जनु नव घन तड़ित दरस हित आए ॥१४१॥
दुहुँ दिसि चामर चलत सेत सोभित अति गहरैं।
मनहुँ मराल रसाल प्रभानिधि के तट बिहरैं ॥१४२॥
लियें अड़ानी दुहूँ ओर सखि छबिहि बढ़ावति।
मनु द्वै ठाढ़ी तड़ित दुहूँनि ओर सी दिखावति ॥१४३॥
कोउ दर्पन कोउ बिजन सुमन भूषन कोउ लीनें।
कोउ जराइ भूषन संपुट लियँ जटित नगीनें ॥१४४॥
कोई लीनें मुक्तनि के मंडन महा मनोहर।
कोऊ लियें घनसार चारु के अलंकार बर ॥१४५॥
कोउ मृगमद चंदन कपूर केसरि लीनें घसि।
कोउ चोवादि गुलाब लियें सीसी भरिहि लसि ॥१४६॥
अतरदान कोउ पानदान कोउ लै पिकदानी।
सुरँग बसन चुनि चारु लिये कोउ सखी सयानी ॥१४७॥
कोउ नवनीत सितादि मधुर मेवा लियँ थारी।
कोउ भरि लियें सुगंध सीत जमुना जल झारी ॥१४८॥

कोउ रुमाल कर कमल बदन पर भ्रमर उड़ावति।
कोउ दुहुँ कर बलिहार लेति लखि कोउ सिरनावति।। १४९।।
कोउ कर लै सखि सुवा सारिका सुघर पढ़ावति।
फूलछरी लै खरी कोऊ इत माम जनावति।।१५०।।
कोउ मृदंग कोउ बीन मुरज कोउ मधुर बजावति।
कोउ तमूर सारँग सितार कठतार सुनावति।।१५१।।
कोउ रबाब कोउ चंग उपंग मुचंग मिलावति
कोउ लियँ ताल विधान बजति सैननि समुझावति।।१५२।।
कोउ अलापि सुर सप्त संच मधुरैं मिलि गावति।
कोउ ऊँचे स्वर तान तरंग निरंग बढ़ावति।१५३।।
कोउ नूपुर सजि सुभग[1] नचति कोउ सुघर नचावति।
उपर तिरप कोउ सुलप भेद कोउ भाव बतावति।।१५४।।
बटा उछारति कोउ चकरी कोउ लट्टू फिरावति।
कोऊ अनाघत घात लेति कोउ रीझि सराहति।।१५५।।
कोउ सखि छंद प्रबंध काव्य उगटति सरसाई।
शुध मुद्रा लै सुरति ग्राम मुर्छना मिलाई।।१५६।।
आरोही अवरोही अरुथाई संचारी।
दुरनि मुरनि मुसकनि चितौंनि हस्तक छबि न्यारी।।१५७।।
कोककला संगीत राग रागिनि गति जेती।
अभिनव मूरतिवंत सुघर सखि दिखवति तेती।।१५८।।
हाव भाव आलंब उदीपन सरस निकाई।
सेवति धरि धरि रूप जाति जेतिक मधुराई।।१५९।।
नृत्य गीत बाजित्र सकल मिलियौ धुनि साजैं।
महा मौंहिनी मदन मंत्र जनु अद्भुत बाजैं।।१६०।।

---

१. सुधग।

रीझि रीझि स्यांमा सिव सन भूषन दोउ दैंहीं।
सखि सुभाग अति उमगि सीस सादर धरि लैंहीं ॥१६१॥
ज्यौं चिंतामनि सुरतरु देत मनोरथ सरसैं।
किधौं जुग कमल पराग सुगँध अलिकुल हित बरसैं ॥१६२॥ (१)
कोउ सखि छबि लखि रीझि रही टकटकी न टारैं।
कोउ सिर भाल न . . . .[1] ॥१६३॥
. . . . . . [1]कोउ छबि पर तृन तोरति।
कोउ काहू कछु बात कहति कोउ हरि मुख मोरति ॥१६४॥
ऐसे चरित अनेक एक मुख कहे न जाँहीं।
ज्यौं तारागन चंद्रभान नहि मुठी समाँहीं ॥१६५॥
स्यामा स्याम सुजान सखिनि की सभा सुहाई।
मनु छबि रीझि रसाल माल बन कौं पहराई ॥१६६॥
सखिनु मध्य नित प्रिया सहित पिय सोभित कैसैं।
सब सक्तिनि मधि श्री समेत पुरुषोत्तम जैसैं ॥१६७॥
जिनि पद नख छबि छटा कोटि ससि सूरज सोहैं।
तिनि समान उपमान आन या जग मैं को हैं ॥१६८॥
जेतिक उपमा कही सही परि सम नहि लेखैं।
ज्यौं झीने पट मधि अमोल नग सुघर परेखैं ॥१६९॥
. . . . गा पीक . . हजिन कीननि[2]।

इति० स्यौंजी सिंघ चाँदावत नैं अपन हेत लिखी।

---

१. पाठ खण्डित। २. पाठ खण्डित।

प्रतिउत्तरहोइसौउत्तर केसवकोसवैया बनजे
येचलेकोकराखोहेकेसवहो तुमहीतोअरीअ
रिहौ कछूयेलियेचलनआवतआजुहीं तूलो
नअलैयोगरैपरिहौ हितुहेहियमेंकिधौनाहि
हहितुनाहिहियेंसुलालरिहौ हमसौंइलूकि
येअैसीकहाजकहौनैकहौवकहाकरिहौ ८७
अथआसिषलछिन मातापितागुरुदेवमुनि
सुषपायकैकहतहैसोआसिष केसवकोकवि
त मलयमिलतबासकुंकुमकलितजुतजावक
सुनपउनिप्रजितललितकर जटितजरायकी
जजौरीवीचनीलमनिलागिरहेलोकनिकेनेंन
मानौमीनहर चिरचिरसोहेरामचंद्रकेचरन
जुगकेसोदासदीबौकरैंआसिषाअसेषनर हय
परगयपरपलिकनपीठिपरअरिउरपरअव
नीसनिकेसीसपर ८८ इतिबंसजूकौतुकाहित
हरिवंसअसीसदेतमुषचितजीबोचूनंलथहि
जोरी १ आनंदघनकौतुक रानीनेगचितजीबो
गोपाल १ इतिश्रीदूसनहुलाससंपूर्णमसुभ

दूषणोल्लास के अन्तिम पृष्ठ की पुष्पिका